चरित्र निर्माण
के
नैतिक पथ

भाग–1

सुरेन्द्रमोहन डण्डिया

चरित्र निर्माण
के
नैतिक पथ

भाग–1



सुरेन्द्रमोहन डण्डिया

प्रकाशक

राजस्थान प्रकाशन

त्रिपोलिया बाजार

जयपुर-2

संस्करण

प्रथम 1988

कम्पोजिंग :

कमरल कम्पोजिंग एजेन्सी

किशनपोल बाजार

जयपुर-3

मूल्य :

50 00

मुद्रक :

मॉडर्न प्रिन्टर्स

गोधों का रास्ता

जयपुर-3

समर्पण

पूज्य पितामह



श्री चांदूलाल जी डण्डिया
(1868 1952)

पूज्य पिताजी



श्री गेंदीलाल जी डण्डिया
(1894 1965)

प्रात स्मरणीय पूज्य पितामह एव पूज्य पिताजी की पुनीत स्मृति म
उनके ऋणो से उऋण होने के लघु प्रयत्न स्वरूप उनके ही
आशीर्वाद एव प्रेरणा से प्राप्त ज्ञान की एक किरण
स्वरूप यह पुस्तक सादर सविनय समर्पित ।

प्राक्कथन

यह पुस्तक क्यों और कैसे लिखी गई है—

आज देश की जो स्थिति चल रही है उसको सभी अनुभव करते हैं। हमारी भावी संतति चरित्र से भ्रष्ट होती जा रही है। वे आध्यात्मिक, मानसिक व शारीरिक दृष्टि से पतन की ओर बढ रही है। स्थिति बडी गम्भीर है, इसको सभी अनुभव करते हैं, कुछ उपाय भी किए गए हैं परन्तु कोई ठोस कार्य सामने नही आ रहा है जिसकी उपलब्धि हमारे सामने हो।

इस स्थिति म सुधार के लिए आज से तीन वर्ष पूर्व मैंने चरित्र निर्माण योजना पर काय करने का निश्चय किया। विद्वानो ने इस सम्बन्ध म जो किया उसका अध्ययन किया। चरित्र निर्माण से सम्बन्धित लेख जो पत्र पत्रिकाओ मे प्रकाशित हुए उन्हें पढ डाला। ध्यान सम्बधी शिविर मे भी मैं सम्मिलित हुआ गोष्ठियो मे भी इस सम्बन्ध म अपने विचार प्रकट किए अन्त मे मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि चरित्र निर्माण योजना की रूपरेखा बनाय जावे तथा उसका जयपुर नगर के विभिन्न महाविद्यालय, हायरसैकण्डरी व सैकण्डरी विद्यालयो म क्रियात्मक रूप से प्रयोग किया जावे। विभिन्न विद्यालयो के विद्यार्थियो को चरित्र निर्माण के लिए कुछ नियम दिए और उनको इसके पालन के लिये विभिन्न प्रकार से प्रोत्साहित किया। उनके जो परिणाम निकले, उसके आधार पर इस योजना को आगे बढाया। समय समय पर इसम आवश्यकतानुसार परिवतन व सवधन किये गय। जब जब भी मैं विद्यालयो में इस योजना पर अध्यापको, विद्यार्थियो तथा उनके सरक्षको व जनसाधारण से विचार विमर्श करता तो यह प्रश्न बार बार उठाया जाता कि इस विषय पर कोई एसी पुस्तक हो जिसम चरित्र निर्माण सम्बन्धी समस्त पहलुओ पर प्रकाश डाला गया हो इसी भावना से प्रेरित होकर तथा उस अभाव की पूर्ति के लिए यह पुस्तक आपके सम्मुख प्रस्तुत है। यह पुस्तक किसी बन्द कमरे की उपज नही है और न यह कोई चरित्र निर्माण के विषय मे बौद्धिक प्रवचन ही है। विद्यालयो, युवको, प्रौढो व जनसाधारण ने अपने जीवन को कैसे श्रेष्ठ बनाया, इस अनुभव पर सक्षिप्त एव धाराप्रवाह लिखने का प्रयास किया है। साथ ही यह बात निश्चित है कि यह पुस्तक व्यावहारिक है।

विज्ञान सफल परिणामो का एक सकलन है। उसी प्रकार यह पुस्तक भी मारे सर्वांगीण जीवन को सुखी बनाने के लिए सफल और प्रमाणित नुस्खो का

एक सकलन है। इस पुस्तक मे आपको कोई नई बात नही मिलेगी किन्तु आपको ऐसी बहुत सी बाते अवश्य मिलेंगी जिनका चरित्र निर्माण के लिए व्यवहार नही हुआ है। चरित्र निमाण का अथ आज तक यह भी लगाया गया है कि सत्य, इमानदारी शिष्टाचार दान, तप आदि मूल्यो को बता दिया जाय पर तु पूण जीवन जीने के लिय जो भी हमसे सम्बधित है उनका वास्तविक ज्ञान कस प्राप्त किया जावे व उन्हें अपने जीवन म कस उतारा जाय। सुप्रसिद्ध जमन नाटककार गेटे ने 'चरित्र और प्रतिभा' का पारस्परिक सम्बध निरुपित करत हुए लिखा है कि प्रतिभा का विकास एकात मे होता है पर चरित्र का विकास ससार क बवडरो के बीच होता है।' हम ससार म रहते हैं तो इसके इद गिद जितनी भी बातें आवेंगी चाह वह जीवन यात्रा हो स्वास्थ्य हो, धम से सम्बचित व्याख्यायें हो, नीति हो उनको समझना पडगा व उनकी व्याख्या करते हुए दुराग्रह से ऊपर उठकर अच्छी बातो का ग्रहण करना पडेगा तब ही चरित्र का श्रेष्ठ निर्माण होगा जो जीवन का अतिम ध्येय होगा।

हमे नई बातो की जानकारी की आवश्यकता नहीं रहती बल्कि एक पूण जीवन जीने के लिए हम पहले से ही पर्याप्त बातें जानत हैं। हमने सभी धर्मों क दस लक्षण, सरमन आन दी माउन्ट सप्त दशन, वेद ज्ञान, गीता, तत्वाथ सूत्र, अनेका त, बौद्ध धम के अष्टाग, यम, नियम, अद्व तवाद, गुरु ग्र थ साहब आदि पढ हैं। बालको, युवको व प्रौढो क बारे म पढा है, व्यावहारिक स्तर के बार म जाना है, स्वास्थ्य के लिये जानकारी प्राप्त की है, अन्तसाधना पर भी निगाह है परन्तु हमारी कठिनाई अज्ञानता न होकर जडता है। इस पुस्तक का उद्देश्य यह भी है कि पुरातन एव मूलभूत सिद्धा तो को फिर से लिखा जाय, उसकी व्यवस्था की जावे उसम जो रहस्य छिपा है उसको स्पष्ट किया जावे, उसका प्रवाह निश्चित किया जाव तथा आज क स दभ म उसको वातावरण के अनुकूल बनाया जावे। और जडता मिटा कर उन सत्यो क लिय जनसाधारण को प्रेरित किया जावे। आपन यह पुस्तक यह बात पढन क लिय नही ली कि यह कस लिखी गई है बल्कि आप इसकी व्यावहारिकता देखना चाहते हैं तो इस ध्यानपूवक पढ जाइए। इसको पढ लेन क पश्चात् आपकी समस्याओ का समाधान स्वत हो होगा तथा आपको नई शक्ति एव प्ररणा मिलगी।

अत म मरा यह निवेदन है कि पुस्तक के प्रत्येक भाग से सम्बधित बिन्दुओ पर मनन व विचार क पश्चात् जो जीवन के व्यवहार म लाया जा सकता हू उस व्यवहार म लाइय। आपका जा अनुभव हुआ है उसको अपने सम्बधियो व मित्रो को सुनाइय उस पर गहनता स गोष्ठिया व सभाओ म विचार विमश कीजिए। ऐसा करने से निश्चित रूप म भविष्य के लिए आपको दिशा निर्देश मिलेगा। आज

आप इस समय जिस स्थिति मे हैं, उससे आगे अपने को सुदृढ़ स्थिति मे पावेंगे तथा आप मे चरित्र निर्माण के लिये उत्तरोत्तर बलवती इच्छा उत्पन्न होगी। विद्यालय के विद्यार्थियो के लिए इसमे अमूल्य सुझाव हैं। उन्हे यदि कक्षा म नैतिक शिक्षा के अन्तर मे नियमित रूप से पठन कराया जावे, विचार विमर्श हो और इसके आधार पर उनकी दैनिक प्रवृत्तियो पर निगाह रखकर समय समय पर सुधार के लिए अच्छे अध्यापको द्वारा सुझाव दिया जाय तो निश्चित रूप से विद्यार्थियो के जीवन म महान् सुखद परिवतन आवेगा।

प्रस्तुत पुस्तक दो भाग म है। प्रथम भाग म सम्यक् जीवन, व्यावहारिक गुण के पथ हैं। द्वितीय भाग मे धार्मिक सहिष्णुता, स्वास्थ्य रक्षा व अन्तर्विश्राम के पथ हैं। प्रत्येक पथ के अन्तगत विभिन्न सोपानो मे विषय से सम्बधित बहुत स मान्य विद्वानो और मनीषियो की पुस्तको से सहायता ली गई है और उनके मतो को यथास्थान दिया गया है व उनके नाम भी दिए गए हैं।

दैनिक समाचार पत्र, साप्ताहिक, पाक्षिक तथा मासिक पत्रिकाओ मे प्रकाशित विचारात्मक लेख, आचार्यो के भाषण, कतिपय स्वदेशी व विदेशी विद्वानो की पुस्तको म स लेखो का यथास्थान समुचित उपयोग किया है। इन सभी से मैंने अपने ज्ञान म वृद्धि कर इस पुस्तक के लिखने मे प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सहायता ली है, उन सब का मैं हृदय से अत्यन्त आभारी हूँ। लेखक व प्रकाशक जिनका नाम इस पुस्तक मे छपने से रह गया है उसके लिए मुझे खेद है।

इस पुस्तक म किसी की भी आलोचना तथा मतभेद से बचने का पूरा प्रयास किया गया है। मुद्रण की त्रुटियो के सुधारने का भी यथासम्भव प्रयास किया है तथापि कमियो का रहना स्वाभाविक है, इसलिए शुद्धिपत्र भी सलग्न किया है। पाठकों और शिक्षको से निवेदन है कि रचनात्मक आलोचना और सुझाव देकर इस पुस्तक की कमिया तथा दोषो की ओर ध्यान आकर्षित करने की कृपा करें। अगले सस्करण म इन सुझावो के आधार पर सुधार कर दिया जावेगा।

मै उन सभी महानुभावो तथा मेरे मित्रो को धन्यवाद देता हूँ तथा आभार स्वीकार करता हूँ जिन्होने इस पुस्तक को लिखने म प्रारम्भ स ही प्रेरणा व समय समय पर अमूल्य सुझाव दिए हैं। श्री विजयबिहारी माथुर, पूव आचाय, शिक्षण प्रशिक्षण महाविद्यालय, राजस्थान व सदस्य सिंडीकेट राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर का नाम विशेष उल्लेखनीय है। श्री राजेन्द्रकुमार जसोरिया सचालक

राजस्थान प्रकाशन, जयपुर भी धन्यवाद के पात्र हैं जिन्होंने इसके मुद्रण व प्रकाशन मे विशेष रुचि लेकर इस पुस्तक को प्रकाशित किया है।

मैं अपनी धर्मपत्नी श्रीमती उमरावदेवी डण्डिया का भी धन्यवाद देना अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ जिन्होंने अपने समुचित गुणों के साथ मेरे जीवन संघर्ष मे अपने कर्तव्य का निष्ठापूर्वक वहन किया व चरित्र निर्माण के क्षेत्र में काम करने के लिए सदैव प्रेरित किया जिसके फलस्वरूप प्रस्तुत पुस्तक रचना सम्भव हो सकी।

अन्त मे यह लिखना प्रासंगिक होगा कि वर्तमान पुस्तक की रचना का मूल बीज लेखक के विचार क्षेत्र में "मन के विकारों" के निदान के माध्यम से चरित्र निर्माण के रूप में प्रारम्भ हुआ था तथा इस शुभ कार्य हेतु एलाचार्य (अब आचार्य) महामान्यवर मुनि श्री विद्यानन्द जी महाराज का आशीर्वाद लेखक को निम्न प्रकार प्राप्त हुआ था।

"मनुष्यों के लिए देहज दोषों के चिकित्सालय बहुत हैं, इसी प्रकार शब्दानुशासन के व्याकरण की शिक्षा पद्धति भी देश में हैं परन्तु मानसिक दोषों (रागों) पर मिथ्यात्व ग्रंथि या नृत गडता नष्ट निवारण के केन्द्र भी होना परम आवश्यक है। अतः आपको इस विधि में कार्यक्रम में सफलता मिले, यह हमारा आशीर्वाद है।"

ह० एलाचार्य विद्यानन्द

पुस्तक लेखन के प्रारम्भ के पश्चात् इसका विषय क्षेत्र शनैः शनैः विकसित होकर वर्तमान रूप में सम्पन्न हुआ। जो बीज आचार्य प्रवर के आशीर्वाद से प्रस्फुटित, पुष्पित एवं पल्लवित होकर बहुआयामी वृक्ष के रूप में विकसित हुआ, वह सुविज्ञ पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत है।

शिक्षक और शिक्षार्थी वर्ग व विद्वान नागरिक बन्धुओं को यह पुस्तक समर्पित करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है।

—सुरेन्द्र मोहन डण्डिया

गणतन्त्र दिवस
26 जनवरी 1988
सुरेन्द्र निकुंज, (फोन 69369)
ज्योति मार्ग, बापू नगर, जयपुर

विषय-सूची

प्रथम भाग

प्रथम पथ

द्वितीय पथ

चरित्र का अर्थ

मनुष्य की विशेषता उसके चार चरित्र में है। मनुष्य का आदर, पद, धन व अच्छे वेश म उत्पन्न होने के कारण भी होता है किन्तु यह कुछ ही समय तक रहता है। धनी का आदर भी स्वार्थवश ही होता है परन्तु वह भी चरित्र के बिना स्थायी नही होता। रावण पूर्ण विद्वान व पण्डित था। कहते हैं कि इन्द्र और कुवेर उसके द्वार पर खडे रहते थे परन्तु उसको आदर नही मिल सका क्योकि उसमें चरित्र का अभाव था।

मनुष्य का मन उद्यान भूमि की तरह है। अगर उसकी पूरी तरह चौकसी नही की जावेगी तो लम्बी लम्बी घास और कँटीले पेड अपने आप उग आने की सम्भावना है। इसी प्रकार यदि चरित्र पालन का ध्यान नही रखा जावेगा तो उसके बिगड जाने मे कुछ भी समय नही लगेगा। टीले पर चढने म कठिनाई मालूम होती है लेकिन उतरने म कोई कठिनाई सामने नही आती। चरित्र के अभाव म 'अक्षीणो वित्ततः क्षीणो वृत्तस्तु हताहतः' अर्थात् धन से हीन निर्धन नही है अपितु चरित्र के ही अभाव म मनुष्य मरा हुआ है।

यह चरित्र है क्या? चरित्र उन गुणो का समूह है जो हमारे व्यावहारिक जीवन से सबध रखते है। पाश्चात्य मनीषियो ने चरित्र की विशेषताओ पर अच्छा प्रकाश डाला है। चरित्र की परिभाषा करते हुए प्रसिद्ध यूनानी दार्शनिक अरस्तु ने कहा है—चरित्र हमारे आचरण से उद्भूत जीवन की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। सुप्रसिद्ध अंग्रेजी निबधकार इमसन ने सेल्फ रिलायन्स (Self Reliance) शीर्षक अपने एक निबन्ध मे लिखा है "चरित्रवान की एक ऐसी वर्ग पहेली है जिसे बाए से दाँए दाए से बाए और ऊपर नीचे या तिरछे जैसे पढा जाय एक ही वर्ग विन्यास को सूचित करता है" कहने का तात्पर्य यह है कि चरित्रवान व्यक्ति प्रत्येक परिस्थिति म सम रहता है कभी विचलित नही होता।

इमर्सन कहते है कि चरित्र वह वस्तु है जो असफलता के बाद भी ज्यो का त्यो बना रहता है।

सुप्रसिद्ध जर्मन नाटककार गेटे ने चरित्र और प्रतिभा का पारस्परिक सम्बंध निरूपित करते हुए लिखा है "प्रतिभा का विकास एकान्त में होता है पर चरित्र का विकास संसार के बवंडरों के बीच होता है।"

ठीकरों से जुआ खेल रहे एक बालक को सुप्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो ने एक बार डांटा था। इस पर उस बालक ने प्लेटो से निवेदन किया था, "मैं तो पैसों से जुआ नहीं खेलता सड़क पर बिखरे मूल्यहीन ठीकरों से जुआ खेल रहा हूँ, आप इस मामूली बात पर व्यर्थ ही मुझे डाँटते है।" उन्होंने गम्भीर होते हुए कहा "बुरी वस्तुओं की आदत डालना मामूली बात नहीं है।"

Character is God—

Those who believe in God see him in truth, feel him in Ahinsa some others find him in patriotic spirit while others experience him in three principal qualities of soul i e Right faith, Right Knowledge & Right Conduct All the above experiences are infact the real face of God All such persons are near to God Infact good conduct is God

चरित्र ईश्वरीय रूप है—ईश्वर रूप की परिकल्पना करने वालों ने उसे सत्य के रूप में देखा। अहिंसा के रूप में उसकी विरक्ति की। कितनों ने उसे विश्व प्रेम में पाया और बहुतों ने आत्मा के त्रिविध सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र के विशद रूप में उसका दर्शन किया। ये सत्य, अहिंसा, विश्व प्रेम, और आत्मा का त्रिविध सम्यक्त्व व्यक्ति के विशुद्ध चरित्र में समाहित है। एतावता चरित्रवान व्यक्ति ईश्वरत्व के समीप है। अतः निर्मल चरित्र ईश्वरीय रूप है।

आचार से पतित ब्राह्मण भी वेद के फल को प्राप्त नहीं होता है। जिस यज्ञ में तप ही यज्ञ है, जीवात्मा अग्नि का स्थान है, मन वचन काया का योग रूप कायस्नु (चमचा) है शरीर रूप यज्ञ वेदिका है कर्मरूप लकड़ी और संयम रूप शान्ति मन्त्र है एसे प्रशस्त चरित्र रूप भाव यज्ञ को भगवान महावीर ने यज्ञ की संज्ञा दी है। वाल्मीकि रामायण में किष्किन्धा काण्ड में राम ने बाली को उपदेश दिया है—

'नहि लोक विरुद्धस्य लोक वृत्ता दप युप ।
दण्डा दयत्र पश्यामि निग्रहं हरि यूथप ॥

हे वानरराज, जो लोकाचार से भ्रष्ट होकर लोक विरुद्ध आचरण करता है उसे रोकने या राह पर लाने के लिए मैं दण्ड के सिवा और कोई उपाय नहीं देखता।

गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी रामचरित मानस में कर्म को भाग्य निर्माण का नियामक तत्व मानते हुए कहा है— कर्मप्रधान विश्व करि राखा जो जस करे

तो सब कुछ खोया" । चरित्रवान व्यक्ति का सम्मान होना ध्रुव सत्य है । वह किसी भी परिस्थिति का सामना अपने चरित्र बल और आत्मबल से कर सकता है और हार जीत में सदा एक समान रहेगा ।

हर धर्म का अपना आचरण शास्त्र होता है । महात्मा ईसा का पहाड़ पर दिया हुआ उपदेश तथा दस आज्ञाएँ (Ten Commandments) में मनुष्य के उत्थान के लिये आचरण सम्बन्धी शिक्षा है । भगवान बुद्ध का (Noble At I.eld Path) मनु महाराज का दस धर्म, जैनियों के धर्म के दसलक्षण, मुसलमानों के 10 नीति निर्धारक सिद्धान्त यह सब चरित्र उत्थान के लिये हैं ।

'सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्ष मार्ग'—(तत्त्वार्थ सूत्र) सम्यग्दर्शन ज्ञान और चरित्र इन तीनों का योग ही मोक्ष मार्ग की प्राप्ति का उपाय है । चरित्र द्वारा ही मानव इन्द्रिय निग्रही बन कर निवृत्ति मार्गी बन सकता है और इस प्रकार वह इहलौकिक पारलौकिक दोनों सुखों को प्राप्त कर सकता है । चरित्र के अन्तर्गत समस्त धर्मों के प्रति सहिष्णुता, धर्मपरायणता, बालकपन से लेकर वृद्धावस्था तक का समस्त जीवन व उसके क्रिया कलाप, व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित विशिष्ट गुणों का पालन जैसे देश भक्ति व उसके प्रति गौरवपूर्ण भावना, व्यवहार कुशलता, ईमानदारी, क्षमा, स्वभाव में संतुलन, सत्याचरण, समय की पाबन्दी, अनुशासन, सदाचरण, परिश्रमशीलता, आत्मरक्षा दक्षता के लिए सतत प्रयास, स्वास्थ्य रक्षा, धार्मिक सहिष्णुता, आध्यात्मिक व मानसिक उन्नति के लिए साधना का अभ्यास आदि है ।

यद्यपि चरित्र बनाने में और भी अनेक नैतिक गुण स्पृहणीय हैं तथापि इन गुणों का विशेष महत्व है । ये सब गुण अभ्यास से प्राप्त हो सकते हैं । बाल्यावस्था चरित्र निर्माण के लिए उपयुक्त समय है । इस समय जो सदभ्यास बन जाते हैं वे सारी उम्र काम देते हैं । हमारे महापुरुष जैसे स्वनामधन्य गोपाल कृष्ण गोखले, लाजपतराय, बालगंगाधर तिलक, महात्मा गांधी आदि महापुरुषों में सत्य बोलने के संस्कार बालकपन में ही बन गये थे । ऐसे ही संस्कार आदमी को बड़ा व चरित्रवान बनाते हैं । *भारत का भविष्य भारत के नवयुवक समाज के चरित्रवान* बनने पर ही निर्भर है । चरित्रवान पुरुष ही देश की उन्नति का पथ दिखा सकता है । नवजागरण फूंक सकता है और देश के नागरिकों के सुधारने में समर्थ हो सकता है । चरित्रवान पुरुष ही देश के गौरव हैं । चरित्रहीन मनुष्य देश के कलंक हैं—

यथाहि मलिनैर्वस्त्रैर्यत्र तत्रोपविश्यते
एवं चलितवृत्तस्तु वृत्तशेषं न रक्षति ।

जिस प्रकार मैले कपड़े वाला मनुष्य हर स्थान पर बैठकर कपड़े बिगाड़ता है उसी प्रकार चरित्रहीन व्यक्ति भी दिन प्रतिदिन अपने चरित्र को बिगाड़ता है ।

नैतिक पथ

नैतिक पथ से तात्पर्य उस पथ से है जिससे मनुष्य व्यक्तिगत पूर्णता की खोज में अग्रसर हो। व्यक्तिगत पूर्णता तब ही आती है जब मनुष्य मानसिक, शारीरिक, आत्मिक व सामाजिक सभी क्षेत्रों में प्रगति करे। अखिल ब्रह्माण्ड में सत्यम् शिवम्—सुन्दरम् तीन अति महत्वपूर्ण है। नैतिकता द्वारा युवकों को ईमानदारी न्याय पवित्रता तथा सत्य—शिव और सुन्दर जिन वस्तुओं में निहित हैं, उन्हें प्राप्त करने की ओर अग्रसर होना चाहिये। नैतिकता को प्राचीन भारत तथा ग्रीक की शिक्षा प्रणाली में सबसे महान् माना जाता था। चरित्र तथा आचरण की आधार शिला अध्यापक द्वारा स्वयं के उदाहरण तथा अपने प्रभाव द्वारा रखी जाती थी वह बालकों को प्रारम्भ से ही पवित्रता, आदर करना विनय पूर्वक व्यवहार करना सेवा भाव रखना स्वावलम्बी बनना, आत्म बलिदान के लिये तत्पर रहना, शुद्धता प्राप्त करने के लिये चेष्टा करना और कर्त्तव्य की उच्च भावना को प्रोत्साहित करने की प्रेरणा देते थे। नैतिकता सब प्रकार के आचरण का गुण है चाहे वह देश के लिए हो धर्म के लिए हो श्रम के लिये हो, बचपन से वृद्धावस्था तक के जीवन यापन व जीवन चक्र के लिए हो, व्यावहारिक कुशलता के लिए हो, चाहे वह स्वास्थ्य रक्षा के लिए हो। एक खिलाड़ी जब खेल के मैदान में नियमों के अन्तर्गत खेल खेलता है तो उसमें खिलाड़ी की भावना होती है चाहे वह हारे या जीते। जैसे जीत को स्वीकार करता है वैसे ही अपनी हार को भी वह स्वीकार करता है। मन की साधना के लिए जब नाना प्रकार की ध्यान की प्रणालियों का अभ्यास करता है तो उसे अच्छे आचरण की शिक्षा स्वतः ही मिल जाती है।

नैतिकता की आवश्यकता जितनी सामाजिक क्षेत्र में है, उतनी ही राजनैतिक व आर्थिक क्षेत्र में भी है। कुटिल राजनीति के लिए आज भी मैकियावली को बहुत याद किया जाता है। इसका जन्म इटाली के फ्लोरेन्स नगर में 3 मई 1469 को हुआ था।

कुटिल राजनीति का प्रतिपादक मैकियावली—मैकियावली अंग्रेजी का एक ऐसा शब्द है जिसका अर्थ है साजिश या गुप्त षड्यन्त्र करने वाला और कपटी—कुचक्री राजनीतिज्ञ। ऐसे कामों के करने वाले को मैकियावलियन कहते हैं। ये शब्द इटली

के विख्यात राजनीतिज्ञ और लेखक मैकियावली के नाम पर बना है। जिस तरह हमारे देश के रामायणकारों ने रावण को बदनाम करके उसका नाम अमर कर दिया है उसी तरह पश्चिम के इतिहासकारों ने मैकियावली को बदनाम करके उसे अमर बना दिया है। उसने अपने ग्रंथ 'दि प्रिंसेप' की रचना की। इसी आधार पर उसे आधुनिक राजनीतिशास्त्र का प्रवर्तक माना जाता है। एक जगह उसने लिखा है 'जो आदमी अपने व्यवहारों से ईमानदार होने का दावा करता है वह बर्बाद हो जाता है क्योंकि दुनिया में बेईमानों की संख्या बहुत ज्यादा है। सो अपनी सत्ता को कायम रखने के लिए राजा को बेईमान बनना सीखना चाहिए। इस पुस्तक में मैकियावेली ने राजनीतिशास्त्र को धर्मशास्त्र और नीतिशास्त्र से बिल्कुल विलग कर दिया है। मैकियावेली को पूरी तरह घृणा और निंदा का पात्र बना दिया है क्योंकि उसने नैतिक आचरण को राजनैतिक सौदा परस्तों की चेरी बना दिया है। उसने सदाचार के कोई सिद्धांत निश्चित करने की कोशिश नहीं की।

प्राचीन भारत के आचार्य चाणक्य ने भी कुटिल राजनीति का प्रतिपादन किया है। अर्थशास्त्र नामक ग्रंथ में चाणक्य ने राष्ट्र के हित में सभी तरह के अनैतिक तथा अनुचित उपायों को नीतियुक्त कहा है। अर्थशास्त्र की इस अवधारणा को देखकर ही विशाखदत्त ने मुद्राराक्षस नाटक में चाणक्य को कुटिल मति घोषित किया है। बाणभट्ट ने भी कौटिलीय अर्थशास्त्र को 'अतिनृशंस प्रायोप देशम' अर्थात अत्यंत निर्ममता का उपदेशक कहा है। इसी कुटिल नीति को महत्व देने के कारण चाणक्य का कौटिल्य भी कहते है। परंतु फिर भी चाणक्य की तुलना मैकियावली से करना युक्तिसंगत नहीं है। चाणक्य ने धर्म तथा नीति को राजधर्म का आधार माना है। अर्थशास्त्र के प्रारम्भ में ही उसने कहा है —

तस्मात स्वधर्म भूताना
राजनय भिचारयत।
स्वधर्म सन्दाधानाहि
प्रत्यचेह च नन्दति

राजा अपनी प्रजा को स्वधर्म से च्युत न होने दे, राजा भी स्वधर्म के अनुसार आचरण करे। जो राजा एसा करता है वह इस लोक और परलोक में सुख पाता है।

चाणक्य के अनुसार राजा को वृद्ध सवी, विद्या विनय सम्पन्न, जितेन्द्रिय तथा काम, क्रोध लोभ मोह का दमन करने वाला होना चाहिए। शत्रुनाश के लिए चाणक्य ने गर्हित उपायों का विधान किया है, परन्तु साथ ही यह भी कहा है—

'एव दूष्यपु अधर्मकेषु वर्तेन न इतरेषु अर्थात कुटिल नीति का ०५० केवल दुष्टों तथा अधार्मिक लोगों के साथ ही करें, दूसरे के साथ नहीं। ।‿ - न और चाणक्य नीति में धर्म नीति तथा सदाचार के उपदेश भरे पड़े है।

विनाश से स्पष्ट होता हुआ कि डार्विन का उपदेश नहीं देता। मैकियावेली का मत है कि जब युद्ध तथा शान्ति के साथ समान नज़र आता है तब शान्ति का ही वरण करना चाहिए क्योंकि युद्ध में भय, व्यय, पाप तथा नरसंहार होता है। इसके विपरीत मैकियावेली ऐसा विचार नहीं करता। वह तो राजा को यह उपदेश देता है कि अपना स्वार्थ साधन करने के लिए सभी तरह की कूटनीति का प्रयोग करे। मैकियावेली की इस शिक्षा ने संसार भर के राजनीतिज्ञों का पथ-प्रदर्शन किया है। वर्तमान शताब्दी के हिटलर, मुसोलिनी और स्टालिन जैसे तानाशाह हुए और तमाम दुनिया के सामने इसके ही प्रतिरूप नज़र आते हैं।

आज भी राजनीतिज्ञों के कार्य कलापों में, अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति, और प्रतिस्पर्धा में और रूस की के० जी० बी० तथा अमरीका की सी० आई० ए० की जासूसी गतिविधियाँ मैकियावेली के सिद्धान्तों पर की जाती हैं।

नीति के विषय में डार्विन के विचार

डार्विन यद्यपि नीति के विषय पर लिखने वाला पुरुष न था, फिर भी उसने यह बताया कि बाहर की वस्तुओं पर नीति का प्रभाव कितना गहरा है। डार्विन के कथनानुसार मनुष्यों और दूसरे प्राणियों में भी जीवन रक्षा का संघर्ष रहता है। वह यह भी कहता है कि जो इस संघर्ष में जीवित रह सकता है वही विजयी बनता जाता है और जो समर्थ नहीं है वह जड़मूल से नष्ट हो जाता है, पर इस संघर्ष के मुकाबले में हम केवल शरीर बल से जीत नहीं सकते। हम यदि रीछ, सिंह और भेड़िये से आदमी की तुलना करें तो आदमी उनमें से किसी के साथ कुश्ती लड़े तो हार जायगा पर यह सब होते हुए भी अपनी बुद्धि की बदौलत वह उनसे अधिक बली है। युद्ध काल में जिसके पास अधिक बल या अधिक संख्या वाले आदमी हों, वह जीत ऐसा नहीं होता, बल्कि जिसके पास अच्छा बल या बल और अच्छे नेता हों, वह जाति संख्या में कम हो तो भी विजयी होती है।

कितने ही लोग यह मानते हैं कि डार्विन ने तो हमें यही सिखाया है कि जो शूर है और शरीर बल में भरपूर है वही अन्त में विजयी होता है, यह ठीक नहीं है। नीति बल शरीर बल और बुद्धि बल दोनों से बढ़कर है और योग्य मनुष्य अयोग्य से अधिक टिक सकता है। जो जातियाँ अनीतिमय थीं, वे आज नाम शेष हो गई हैं। रोम और गमोरा के लोग बड़े दुराचारी थे। इससे यह देश मिट गये। आज भी हम देख सकते हैं कि जो जाति या राष्ट्र अनीतिमान है उसका नाश होता जा रहा है।

शान्त स्वभाव नीति का अंग है। ऊपर देखने से ऐसा ज्ञात होता है कि घमण्डी मनुष्य आगे बढ़ सकता है। पर थोड़ा विचार करके भी हम देख सकते हैं कि मनुष्य की सबकी तलवार अन्त में घमण्डी के ऊपर ही गिरती है और उसका

पतन हो जाता है। मनुष्य नशे का सेवन न करे यह नीति का ही एक दूसरा अंग है। देखने में यह आया है कि शराबी अधिक नहीं जीते है पर नियसन मनुष्य अधिक आयु तक पहुँच जाते हैं। व्यभिचार न करना नीति का तीसरा विषय है। डार्विन ने बताया कि व्यभिचारी मनुष्य जल्दी ही नाश को प्राप्त होता है। उसकी सन्तान भी कमजोर होती है। व्यभिचारी मनुष्य का मन हीन हो जाता है और धीरे-धीरे वह पागल सा हो जाता है।

अण्डमान टापू के पुरुष अपनी स्त्रियों को, ज्योंही बच्चे चलने फिरने लायक हुए त्याग देते हैं। इससे विदित होता है कि वे परमार्थ बुद्धि दिखाने के बदले अत्यन्त स्वार्थ बुद्धि का परिचय देते हैं। परिणामस्वरूप उस जाति का धीरे धीरे नाश हो जाता है। डार्विन बताता है कि पशुओं में भी एक हद तक परमार्थ बुद्धि होती है भीरु स्वभाव वाले पक्षी भी अपने बच्चों की रक्षा करने के समय बलवान बन जाते हैं। डार्विन का कहना है कि प्राणी मात्र में थोड़ी बहुत भी परमार्थ बुद्धि न होती तो आज संसार में घास पात और जहरीली वनस्पतियों के सिवा शायद ही कोई जीवधारी हो। मनुष्य और दूसरे प्राणियों में सबसे बड़ा अन्तर यह ही है कि मनुष्य सबसे अधिक परमार्थी है। दूसरों के लिए अर्थात् अपनी नीति प्रमाण में अपने बच्चों के लिए अपने देश के लिए अपनी जान कुरबान करता आया है।

डार्विन स्पष्ट रूप से बताता है कि नीति बल सर्वोपरि है। ग्रीस की जनता यूरोप की आज की जनता से अधिक बुद्धिशाली थी, फिर भी जब वहाँ की जनता ने नीति का त्याग किया तब उसकी बुद्धि उसकी शत्रु हो गई और वह जाति आज देखने में नहीं आती। जातियाँ न पैसे से टिकती हैं और न सेना से। वे एकमात्र नीति की नींव पर टिकती है। अतः मनुष्य मात्र का कर्तव्य है कि इस विचार को सदा मन में रखकर परमार्थ रूपी परम नीति का आचरण करे।

व्यावहारिक जीवन में आचरण

व्यावहारिक जीवन में हमें सदा यह देखते रहना चाहिए कि हमारा आचरण सुधार की ओर जा रहा है या बिगाड़ की ओर। व्यापार करने वाला हर एक सौदा करते हुए इस बात का विचार करेगा कि मैं अपने आपको या दूसरों को ठग तो नहीं रहा हूँ। वकील, वैद्य और डाक्टर नीति का अनुसरण करते हुए मुवक्किल और रोगी के हिताहित का अधिक सोचेगा। माँ बच्चों का पालन करते हुए सदा यह डर मन में रखकर चलेगी कि कहीं झूठे स्नेह या अपने दूसरे स्वार्थ से वह बिगड़ न जाय। मजदूर भी अपने कर्तव्य का पालन करेगा। मनुष्य का मूल्य उसके चरित्र, उसके चाल चलन पर आधारित होता है उसके पद दर्जे पर नहीं। उसके चरित्र की परख उसके बाहरी कार्यों से नहीं होती, उसकी अन्तर्वृत्ति जानकर की जा सकती है। एक आदमी किसी को अपनी नजर से दूर करने के लिए 100/— रु० देता है दूसरा उस पर तरस खा कर स्नेह से 50/— रु० ही देता है। इनमें से पहिला दागी है और दूसरा नीतिमान है।

जो आदमी स्वयं शुद्ध है, किसी से द्वेष नहीं करता, किसी से बदला नहीं उठाता सदा पवित्र मन रखकर व्यवहार करता है वही आदमी धार्मिक है वही सुखी है और वही यश वाला है। मानव जाति की सेवा उसी से बन सकती है। अशोक को आज भी महान् कहा जाता है व स्मरण किया जाता है क्योंकि उसने प्रजा की रक्षा के लिए बड़े बड़े काम किए किन्तु बड़े बड़े बादशाहों का नाम जिन्होंने संसार विजय की उनका नामलेवा भी कोई नहीं है। कृष्ण महावीर, बुद्ध ईसामसीह मोहम्मद गुरुनानक को आज भी स्मरण किया जाता है क्योंकि उन्होंने संसार को नीति से सार्वजनिक कल्याण का उपदेश ही नहीं दिया बल्कि इसमें पूर्ण नीति को अपने जीवन में भी उतारा।

हमारे मन में यह प्रश्न उठता है। एक की नीति दूसरे को अनीति क्या होती है। एक जाति एक ही पत्नी के साथ विवाह का होना स्वीकार करती है दूसरी अनेक पत्नी करने की इजाजत देती है। कोई काका, मामा की सन्तानों के साथ विवाह सम्बन्ध को त्याज्य मानते हैं तो दूसरे उसके लिए इजाजत भी देते हैं। यह सच है कि यह नीति की भिन्नता है। यह हमारी अपूर्णता की सूचक है, नीति की अनावश्यकता की सूचक नहीं। ज्यों ज्यों हम अधिक अनुभव करते जावेंगे त्यों-त्यों सब कौमों की और सभी धर्मों के लोगों की नीति में एकता होता जायगा। नीति के अधिकार को स्वीकार करने वाला जगत तो आज भी एक पत्नीव्रत को आदर की दृष्टि से देखता है। किसी भी धर्म में अनेक पत्नी करना आवश्यक नहीं है किन्तु अनेक पत्नी करने की स्वीकृति है। आज भी मिश्र में जो मुस्लिम राष्ट्र है वहाँ एक पत्नी के लिए नियम बनाया गया है।

इसी प्रकार पशु हत्या को भी लें। एक जाति पशु हत्या को स्वीकार करती है मांस भक्षण करती है और इसे धार्मिक कृत्य मानती है। दूसरी जाति इस कार्य को पाप मानती है। यही नीति की भिन्नता है। नीति को मानने वाला जगत तो आज भी शाकाहार को उच्चता की दृष्टि से देखता है क्योंकि वह जानता है कि मांसाहार के कारण क्रूर हत्याएँ तो होती ही हैं साथ ही स्वास्थ्य की दृष्टि से भी यह हानिकारक है। इससे शरीर में नाना प्रकार की व्याधियाँ व मन में क्रूरता उत्पन्न होती है जो स्वयं व समाज के लिए अहितकर है। इसी प्रकार शराब का व्यसन है जिसने शराबी व उनके आश्रितों के समाज को खोखला व जर्जर बना दिया है। ज्यों ज्यों मानव में विवेक जाग्रत होता जायगा और वह पूर्णता की ओर अग्रसर होगा त्यों त्यों इन व्यसनों का त्याग करता चला जायेगा। वह नैतिकता में भी एकता लाता जायगा इतिहास इस बात का साक्षी है। जिन मुस्लिम बादशाहों व हिन्दू शासकों ने इन व्यसनों का त्याग किया उन्होंने अपनी प्रजा को अधिक सुखी व समृद्ध बनाया।

प्रथम पथ

सम्यक् जीवन

सम्यक का अर्थ ठीक सही, यथार्थ सत्य है अर्थात् सम्यक जीवन से अर्थ ऐसा जीवन जिसमें मिथ्यातत्व को कोई स्थान नहीं, जिसका जोर जबरदस्ती से कोई वास्ता नहीं। सत्यता, स्वच्छता, निर्मलता, निर्दोषता जीवन में उतारना चाहिए तो ही सम्यक है कल्याणप्रद है अन्यथा भ्रामक है। हमारी वाणी सम्यक् हो, वाणी सम्यक तब होती है जबकि झूठ कपट गाली गलौज, कटु कठोर, चुगली-निन्दा और ऊलजलूल भरे वचनों से वस्तुतः छुटकारा पा लेते हैं। हमारे शारीरिक कर्म सम्यक तब होते हैं जबकि हम हिंसा हत्या, चोरी, नशे पते आदि दुष्कर्मों से यथायत मुख मोड़ लेते हैं। हमारी आजीविका तब सम्यक् होती है जबकि हम अपने जीवन यापन के साधनों को वास्तविकता के स्तर पर शुद्ध करते हुए छल छद्म, जालसाजी तस्करी, चोरी को सर्वथा त्याग देते हैं और ऐसा कोई व्यवसाय नहीं करते जिसमें कि धन संचय की तीव्र लालसा के वशीभूत होकर अन्य अनेकों को हानि पहुँचावें।

हमारे जीवन में प्रयत्न सम्यक् हो, यह तब ही सम्भव है जबकि यह एक ऐसा अभ्यास कार्य बन जाता है जिसमें कि हमारा मन दुर्गुण विपन्न और सद्गुण सम्पन्न हो।

जन्म से मृत्यु तक की यात्रा के बीच की अवस्थाएँ—बाल्यकाल किशोरावस्था प्रौढ़ावस्था व वृद्धावस्था है। इस यात्रा के बीच जो चेतना है वही तो जीवन है। जब तक जीवन है तब तक मनुष्य को यदि बीच में कोई दुर्घटना या किसी अनहोनी से जीवन समाप्त नहीं हो जाय, इन सभी अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है। इन सब अवस्थाओं की विशेषता है। यदि बाल्यावस्था में बालकों के सुसंस्कारों की जड़ें मजबूत कर दी जावें, उनका लालन पालन शिक्षा की उचित व्यवस्था हो, तो वह ही बालक आगे चलकर सुनागरिक व अच्छे युवक बनते हैं। आगे चलकर इस समय के संस्कार ही प्रौढ़ावस्था व वृद्धावस्था में सम्यक जीवन बिताने में सहायक होते हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर बाल्यावस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था की स्थिति पर विचार किया गया है।

□□

प्रथम सोपान

बाल्यावस्था

जैसे माता पिता होते हैं वैसी ही उनकी सन्तान होती है। बुद्धिमान माता पिता की सन्तान बुद्धिमान व मूर्ख माता पिता की सन्तान मूर्ख होती है। इसलिये जनसाधारण में यह सिद्धान्त प्रचलित हो गया है कि जैसा बीज होगा वैसा ही वृक्ष होगा। भारतीय समाज में वंशानुक्रम के आधार पर लोग अछूत व घृणित समझे जाते हैं। यह सम्भव हो सकता है कि संगीतज्ञ का पुत्र संगीतज्ञ तथा डाक्टर का पुत्र डाक्टर हो परन्तु कभी-कभी इसका विपरीत होता है। बुद्धिमान माता पिता की सन्तान मूर्ख तथा एक मूर्ख माता पिता की सन्तान बुद्धिमान तथा एक सन्त का पुत्र अपराधी हो जाता है। कभी कभी दूषित वातावरण में पलने से भी सन्तानें बिगड़ जाती हैं।



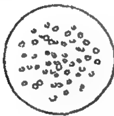
अध्ययनरत बालक

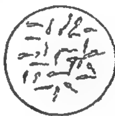
वंशानुक्रम और वातावरण दो महान् शक्तियाँ हैं जो मानव जीवन को अत्यधिक प्रभावित करती हैं। वस्तुतः मानव इन दोनों की ही उपज है। वातावरण के अन्तर्गत वे सभी नैतिक, सामाजिक, शारीरिक और बौद्धिक परिस्थितियाँ आती हैं जो व्यक्ति के जीवन पर अपना प्रभाव डालती हैं। वंशानुक्रम इन सभी

गुणों का योग है जिन्हें बालक जन्म से लेकर आता है। अतः वंशानुक्रम और वातावरण एक दूसरे के पूरक है।

(1) वंशानुक्रम—वंशानुक्रम एक ऐसी शारीरिक प्रतिक्रिया है जिसके द्वारा आने वाली सन्तानें अपने माँ तथा पूर्वजों के जन्मजाति एवं जाति गुणों को अपने आप में स्वतः ग्रहण कर लेती है। इस शारीरिक प्रक्रिया का सम्बन्ध प्रायः एक ही जाति के दो विपरीत यौन (Opposite Sex) के प्राणियों के आपसी यौन समागम (Sexual Intercourse) से होता है।

वैज्ञानिक अनुसंधानों से पता चलता है कि वंशानुक्रम का प्रभाव पित्रैकों के द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचता है। स्त्री पुरुष के समागम से पुरुष का





अण्ड शुक्र



पित्रैक

चित्र 2

शुक्र कोष (Sperm cell) एवं स्त्री के बीजकोष (Egg cell) के मिलाप से सन्तान का बीज पड़ता है। गर्भाधान के समय शुक्र और अण्ड के वंश सूत्र (Chromosomes) के पित्रैक आपस में जोड़ा बनाते हैं और सन्तान की विशेषताओं और गुणों को निर्धारित करते है। मनुष्य में एक एक शारीरिक लक्षण का एक (Genes) जीन है। एक जीन एक पिता से और एक माता से प्राप्त होता है। जब ये दो जीन एक से होते हैं तो बालक में वही शारीरिक गुण आ जाता है। लेकिन अगर ये जीन अलग अलग तरह के हुए तो जो जीन प्रबल होगा वही गुण बालक में आ जायगा। उदाहरणार्थ अगर माता पिता की सन्तान अधिकतर गोरी हो

होती है, लेकिन यह भी कोई जरूरी नहीं कि गोरे माता पिता की सन्तान निश्चय ही गोरी हो। असली महत्त्व जीन्स का है। यदि माता पिता के जीन्स का रंग एक का काला हो और एक का गोरा हो तो उनमें से जो प्रबल होगा, उसी रंग की सन्तान पैदा होगी। कभी कभी कोई जीन्स कई पीढ़ियों तक गौण रहने पर एका एक प्रबल हो जाते है और यह जीन्स जिस रंग का होगा, सन्तान की प्राप्ति उसी रंग की होगी।

सन् 1953 से पहिले Genes को एक प्रोटीन अणु (Protein mo'ecule) समझा जाता था किन्तु वर्तमान के नवीन परीक्षणों ने जीन्स (genes) सिद्धान्त में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन ला दिया है। अब यह समझा जाने लगा है कि वंशानुक्रम के रासायनिक वाहक प्रोटीन नहीं होते हैं वरन् एक रसायन होता है जिसे DNA (Desoxyribonucleic Acid) कहते है। क्रोमोसोम इस रसायन के अणु ही होते है। DNA में अद्भुत शक्ति अपने आपको उत्पन्न करने की होती है जब भी उसके वातावरण में आवश्यक रासायनिक कच्चे पदार्थ पाए जाते है यह कोष केन्द्र में ही केन्द्रित रहते है। एक दूसरा रसायन जिसे RNA (Ribonucleic Acid) कहते है जो DNA का प्रतिरूप होता है वह कोष के केन्द्र से कोष की बाहरी सतह की ओर निकलता है। इस प्रकार वह DNA द्वारा जो वंशानुक्रम सम्बन्धी संकेतावली होती है उसकी सूचना दूसरे तन्तुओं को देता है। इनके सम्बन्ध में प्रयोग हो रहे है। विश्वास किया जा रहा है कि जब DNA और RNA के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी हो जायगी और इसमें सम्भावित नियन्त्रण हो जायेगा तो व्यक्ति मनचाही सन्तान प्राप्त करने में सफल हो जायगा। कई मनोवैज्ञानिक इस अनुसंधान में लगे हुए है कि सन्तान जन्म से ही सीखा हुआ उत्पन्न हो जिससे उसे बहुत कम शिक्षा देनी पड़े।

(2) गर्भावस्था—जब बालक गर्भावस्था में होता है तब से ही माँ के शरीर में ही अपना रूप ग्रहण करता और बढ़ता है इसलिए उस पर माता के रक्त का, जिससे गर्भ में उसे पोषण प्राप्त होता है प्रभाव पड़ना अनिवार्य है। पोषणाभाव के कारण माता का रक्त इतना अल्प हो सकता है कि बच्चे को पर्याप्त पोषण ही न मिल सके जिससे वह बहुत दुबला पतला हो सकता है, दूसरे रक्त की पर्याप्त मात्रा होते हुए भी हो सकता है कि वह बच्चे के लिए उपयुक्त न हो। यदि रक्त में कैल्शियम या फास्फोरस की कमी हो तो बच्चे की अस्थियों और दाँतों का निर्माण ठीक प्रकार से नहीं होगा और उनके अस्थिवक्रता, दन्तक्षय आदि रोगों का शिकार होने की सम्भावना रहेगी। इसके अतिरिक्त माता की रुग्ण मानसिक अवस्था का भी रक्त पर प्रभाव पड़ना है जो गर्भस्थ बच्चे के लिए हानिकर हो सकता है। आजकल ऐसे प्रयोग भी हो रहे है जिसमें गर्भावस्था में ही

बालक को उचित शिक्षा दे दी जावे। यह शिक्षा जन्म लेने के पश्चात् दी जाने वाली शिक्षा से अधिक स्थायी व लाभप्रद सिद्ध हुई है। अभिमन्यु को गर्भावस्था में ही चक्रव्यूह सम्बन्धी शिक्षा उसके पिता अर्जुन द्वारा दे दी गई थी जिसने महाभारत युद्ध में शत्रु के योद्धाओं के छक्के छुड़ा दिये थे। आज की माताएँ अपने बच्चों को दूध पिलाने में भी कतराने लगी हैं। माता के दूध के स्थान पर नाना प्रकार का कृत्रिम आहार दिया जाता है जिससे बच्चे की पाचन शक्ति बिगड़ जाती है और प्रारम्भ से ही सर्दी, दस्त आदि रोगों का आक्रमण होने लगता है। प्रकृति यही चाहती है कि बच्चे जन्म ग्रहण करने समय स्वस्थ ही रहें पर ऐसा होता नहीं है। शैशवकाल से ही रोगों का आक्रमण प्रारम्भ हो जाता है और यह सिलसिला जीवन पर्यन्त चलता रहता है। इसका कारण है लालन पालन सम्बन्धी दोष। इन दोषों को दूर कर, सुधार के कार्य में प्रवृत्त शरीर की प्राकृतिक शक्ति को सहायता करने के बजाय अनि औषधियों का प्रयोग द्वारा रोग के लक्षणों को दबाने का प्रयास किया जाता है जिससे रोग का मूल ज्यों का त्यों बना रहता है जो समय पाकर जीर्णावस्था में परिणित हो जाता है।

एक स्वस्थ और सुन्दर वातावरण में पला हुआ बालक ही बड़ा होकर देश के लिये उपयोगी हो सकता है। आज संसार में बाल शिक्षा और बाल विकास पर अधिकाधिक जोर दिया जाता है। रूस, अमेरिका ने इस सम्बन्ध में जो कार्य किए हैं वे आश्चर्यजनक है। भारत का बालक आज भी पीड़ित और पददलित है। इसका कारण है बालक के विकास में आवश्यक सुविधाओं का अभाव, प्राथमिक व पूर्व प्राथमिक शिक्षा की दयनीय स्थिति।

(3) **बालकों के पालन पोषण में माता पिता का दायित्व**—अपने जन्म के समय से ही बालक जिस प्रेम को अपने माता पिता से प्राप्त करता है उसका उसके जीवन पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। परन्तु देखा यह गया है कि आज बालक अपने माता पिता से दूर होते जा रहे हैं। बच्चा जब पेट में रहता है तो उसका सम्बन्ध नाभि से होता है। माँ की जीवन धारा नाभि के द्वारा उस बच्चे से प्रभावित होती है। यह एक अनजान विद्युत धारा होती है जो उस बच्चे के व्यक्तित्व को पोषित करती है। पैदा होने के पश्चात् उसका सम्बन्ध माँ से टूट जाता है। यदि बच्चा पैदा होने के पश्चात् रोता नहीं तो उसका अर्थ है कि उसको मां से अलग होने का पता नहीं है तथा उसकी मृत्यु निकट है। अभी तक बच्चा अपनी माँ से नाभि के द्वारा जुड़ा था तथा अब उसका प्रयास होता है कि वह मां से फिर जुड़े। उसकी जीवन धारा फिर से संयुक्त होती है माँ के दूध से। जो विद्युत धारा उस नाभि से मिलती थी उसे बच्चा अपने माँ के स्तन से होठों द्वारा लेने लगता है। इस प्रकार वह माँ के हृदय से जुड़ जाता है। यदि मां का दूध उसे नहीं मिलता है तो उसका जीवन सदा के लिये कुण्ठित हो जाता है। अपने माता पिता से कई दिनों के

पश्चात् मिलन पर बड़ी अवस्था में भी व्यक्ति का हृदय भर आता है, आखिर क्यों? इसका कारण है उसकी बचपन की विकृत धारा का प्रवाहित होना। यदि माँ का हृदय द्रवित होता है तो सन्तान कितनी ही कठोर क्यों न हो उसका भी हृदय द्रवित हो जाता है।

पश्चिम का ही युवक नहीं आज तो भारत का युवक भी माता पिता के प्रति अत्यन्त विद्रोह से भर रहा है। इसका कारण है ऐसे बच्चे माँ के दूध से नहीं पले हैं। बचपन में उनका जीवन के प्रति सम्पूर्ण प्रीति पूर्ण नहीं रहा है। माँ से विच्छिन्न होने से वे जीवन में भी विच्छिन्न हो गए हैं। उनके जीवन में गहरी अशान्ति उत्पन्न हो गई है। और वे इसका बदला अपने माँ बाप से ले रहे हैं। सारी दुनिया में स्त्रियों की ओर पुरुषों का आकर्षण क्यों है? इसका कारण है कि वे बचपन में अपनी माता के (स्तन) के अधिक निकट नहीं रहे हैं। आदिवासी समाजों में स्तन के प्रति कोई आकर्षण नहीं है क्योंकि वहाँ के बालक अपनी माँ का दूध अधिक समय तक पीते हैं। हमारी कविताएँ, फिल्में, उपन्यास, नाटक चित्र सभी स्त्रियों के पास केन्द्रित हैं इसका कारण है कि वे बच्चे अपनी माता के स्तन के निकट पूरी तरह नहीं रह पाए हैं।

(4) माँ-बाप के प्रभाव को दूर किया जावे—एक प्रसिद्ध लेखिका और विचारक एथला मनिन ने अपनी पुस्तक 'कामन सेंस एण्ड दी चाइल्ड' में ठीक ही लिखा है कि मेरा विश्वास है कि 95 प्रतिशत बच्चे ऐसे हैं यदि उन्हें बाल्यावस्था में ही अपने माता-पिता से दूर कर दिया जावे तो वे अधिक प्रसन्न रह सकते हैं। इंगलैण्ड के क्रान्तिकारी मानस शास्त्री और शिक्षा शास्त्री ए० एस० नील ने भी अपनी पुस्तक 'दी प्राब्लम पेरेन्ट' में इसी प्रकार विचार प्रकट किए हैं। वे माता पिता से कहते हैं 'आप मुझे बहुत परेशान करते हैं आप एक समस्या हैं। जिन बच्चों को आप जटिल बताते हैं मैं उन्हें सुधारने का प्रयास करता हूँ सुधर भी जाते हैं लेकिन आप मेरे किए हुए पर पानी क्यों फेर देते हैं।' आवश्यकता है माँ बाप के प्रभाव को दूर करने की व उनके कर्तव्यों व जिम्मेदारी का ज्ञान कराने की, ताकि वह बालक के विकास में योगदान दे सके।

(5) प्रेम की शिक्षा

अपने जन्म के समय से ही बालक जिस प्रेम को अपने माता पिता से प्राप्त करता है उसका उसके जीवन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। बालक अभिभावक पड़ोसी सम्बन्धी और अध्यापक से प्रेम प्राप्त करता है। इसी के द्वारा उसके व्यक्तित्व का सन्तुलन और सर्वांगीण विकास होता है। यदि बालक यह अनुभव करता है कि अध्यापक अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा उसे कम प्यार करता है

तो उसके मन में अध्यापक के प्रति घृणा उत्पन्न हो जाती है। इसी प्रकार घर में माता अपने दूसरे बच्चों से प्रेम करती है तथा पहिले बच्चे की उपेक्षा करती है तो उससे भी उसके मन में कुण्ठा उत्पन्न हो जाता है। सौतली माता का व्यवहार अपने बच्चे की ओर पक्षपातपूर्ण तथा दूसरे बच्चे की ओर उपेक्षापूर्ण होता है तो उसमें भी बालक में ग्रन्थियाँ उत्पन्न हो जाती है जो उसकी भावनाएँ व भविष्य बिगाड़ने में सहायक होती है।

एक बालक उदास होकर बैठा था उसकी माता का देहान्त हो गया था तथा पिता ने दूसरा विवाह कर लिया था। इस बालक से जब इसके पिता ने उदासी का कारण पूछा तो उसने बताया कि मेरी पहिले वाली माता मुझको छोड़कर चली गई, कहीं यह भी मुझे छोड़कर न चली जावे, इससे मैं दुःखी हूँ। उसकी माता ने उसको गले से लगा लिया और विश्वास दिलाया कि मैं तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगी। यदि सौतली माताओं का व्यवहार इस प्रकार का हो तो बालक में भी अपनी माता के प्रति प्रेम व सहानुभूति होगी। एक स्त्री थी जो कई बच्चों की माँ थी। वह अपने बच्चों को मारती, पीटती न थी। लोग उसे कहते थे कि तुम अपने बच्चों को बिगाड़ दोगी, उनका सुधार न कर सकोगी। पर पीछे उन्हीं लोगों को यह देखकर आश्चर्य हुआ कि उन बच्चों के चरित्र ऊँचे हो गये हैं। उनमें मनुष्यत्व का सच्चा आदर्श आ गया है, दया के सामने जैसे दुष्टता का नाश हो जाता है वैसे ही प्रेम और उदारता के सामने मनोविकारों का नाश हो जाता है।

बच्चों के ऐबों और कमजोरियों को प्रगट करने के बजाय उनका मन श्रेष्ठता, सौन्दर्य और सत्य विचारों से भरा जाय प्रेम सहानुभूति पवित्रता और उच्चता का आदर्श प्रस्तुत रहने से थोड़े समय में ही बच्चे का मन अद्भुत प्रकार से आलोकित हो उठेगा। बच्चे को नित्य प्रति यह कह कर कि तू मूर्ख है मन्द-बुद्धि है सुस्त है नाकारा है तू कोई काम नहीं कर सकता, तुझमें न बुद्धि है न शारीरिक पराक्रम ही है इससे तू कुछ नहीं कर सकता। ऐसा कहकर माता पिता सहज में ही उसकी निर्माण शक्ति नष्ट कर देते हैं। उसके सृजन शक्ति युक्त मन को बेकार बना देते हैं।

बच्चों के लिये कुछ ऐसे नियम होने चाहिये जो उनका पथ प्रदर्शन करें। लेकिन ऐसा भी नहीं कि इतना ऐसे नियम बना दिए जावें जिससे उनके हाथ पाँव बिल्कुल बँध जायें। केवल थोड़े से स्पष्ट नियम और चाहिये जैसे वह घर लौटकर किस समय तक आ जाए व किन सीमाओं के अन्दर खेलें और घर में कौन कौन से काम उसके करने के हैं। अनिश्चित रहने का परिणाम यह ज्यादा अच्छा है कि यह ज्ञात हो कि वे क्या कर सकते हैं और क्या नहीं कर सकते।

(6) **घर का प्रभाव**—बच्चों पर अपने घर का प्रभाव अधिक होता है तथा यह सामान्यत पाँच वर्ष की आयु तक बनता है और समय और परिस्थिति के अनुकूल ढाला जा सकता है। जहाँ बहुत से नौकर चाकर होते हैं वहाँ आगे जाकर उनके व्यक्तित्व में शासन करने की ओर अपनी आज्ञा पालन कराने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है। यदि ऐसा नहीं होता तो वे पराधीन हो जाते हैं। स्कूल के साथी भी उसमें निरन्तर बदलती हुई दशा उत्पन्न करते हैं। कभी वह अपने माँ-बाप या बड़े भाई बहिनों के अनुरूप अपने को ढालने का प्रयास करता है। कभी वह आस पास के बालकों के समान कपड़े पहिनने का मचलने लगता है। जो माँ बाप अपने बच्चों को दण्ड देते हैं वे बच्चे बड़े होकर माता पिता से विद्रोह करते हैं और बुढ़ापे में अपने माता पिता को उतना ही दण्डित करते हैं। यदि घर का वातावरण अच्छा नहीं है, माता पिता में झगड़ा होता रहता है तो आगे चलकर ऐसे बालक भी झगड़ालू हो जाते हैं। एक दूसरे को प्यार करने वाले एवं बच्चों के लिये अनुकूल



जहाँ प्रेम नहीं होता, वहाँ भेद का पर्दा होता है

वातावरण का निर्माण करने में प्रवृत्त दम्पत्ति का जन्म से ही बच्चे पर प्रथम अधिकार है। दम्पत्ति को न तो लड़के की, न ही लड़की की अधिक आकांक्षा करनी चाहिये क्योंकि विपरीत अवस्था में जन्म घोर नैराश्य का कारण हो जाता है।

दम्पति का यह नैराश्य नवजात शिशु के लिये बहुत बडा मानसिक आधार हो जाता है।

प्रत्येक बालक चाहता है कि वह जैसा भी है, उसके माता पिता उसे मन से स्वीकारते हैं, उसे पसन्द करते हैं। वह जब उनकी इच्छानुकूल कार्य करता है तब भी तथा उनकी इच्छा के विपरीत कार्य करता है तब भी।

प्रत्येक बालक अप्रत्यक्ष रूप से एक दिशा एवं लक्ष्य चाहता है तथा नैतिक मूल्यों को निर्मित करना चाहता है। इसलिये माता पिता एवं अभिभावकों का चाहिये कि बालकों में वे प्रारम्भ से ही नैतिक मूल्यों के प्रति विश्वास जाग्रत करने का प्रयत्न करें।

जिन घरों में माता पिता शराब पीते हैं बीडी सिगरेट व हुक्का पीते है व अन्य नशा करते है, वहाँ के बच्चे भी उनका अनुकरण करने लगते है। पहिले तो वे छिप छिपकर यह नशा करते हैं परन्तु बड़े होने पर वे भी इन नशा के आदी हो जाते हैं। जहाँ पर माँस व अण्डे खाए जाते है वहाँ पर बच्चे भी इनके आदी हो जाते हैं तथा उनका व्यक्तित्व भी वैसा ही हो जाता है। अतः बालकों के हित में यह आदत त्याग देनी चाहिये। कई बालकों को क्रोध भी अधिक आता है, उसके निम्न कारण है—

1 दिन प्रतिदिन के कार्यों में अनावश्यक हस्तक्षेप।

2 उसकी सामर्थ्य से परे उसे कार्य सौंपना।

3 शिक्षकों अथवा अभिभावकों द्वारा वास्तविक या काल्पनिक पक्षपात।

4 प्रौढ व्यक्तियों का व्यवहार जिसे बालक अपना अपमान समझें।

5 बीमारी अथवा नींद न आने से शारीरिक शक्ति का ह्रास।

6 जब परिवार में प्रौढ व्यक्तियों की संख्या अधिक हो।

कभी कभी क्रोध में बालक एकायक उबल पड़ता है इसका कारण होता है कि अन्य वस्तुओं के प्रति जिनके लिये वह अपना क्रोध अन्य कारणों से प्रगट नहीं कर सकता, आक्रोश एकत्रित हो जाता है और समय पाकर आसन्न कारण चाहे वह छोटा ही क्यों न हो, वह क्रोधित हो उठता है। क्रोध के बडे दुष्प्रभाव होते है, इससे शक्ति का ह्रास होता है। क्रोध से समस्या का सम्यक समाधान नहीं होता परन्तु कई लोगों को क्रोध में ही कार्य करने की या समस्या को सुलझाने की आदत पड़ जाती है। स्कूल में अध्यापक को क्रोध का कारण जानकर उसको दूर करना चाहिये। योग्यतानुसार कार्य देकर प्रोत्साहित करना तथा अच्छे कार्य की प्रशंसा करना चाहिये।

भय —शैशवावस्था में यथायत क्रुद्ध हो जावे, तीव्र ध्वनियों में अथवा कि भीषण उत्पात के प्रति होने वाली प्रतिक्रिया के रूप में भय का बन जाता है। बालकों में अंधकार का भय अकेले छोड़ दिये जाने का भय, पशुओं का भय, प्रेत आदि का भय। इन भय बालकों में नहीं प्रौढ़ व्यक्तियों में भी होते निराधार और निराधार भय होते हैं। इसके लिये बालकों में विश्वास उत्पन्न करना चाहिए कि कथित स्थितियाँ भयहीन हैं तथा निराधार हैं। भय का कारण जानने के लिए प्रेरित करना चाहिये। जो भी नई परिस्थितियाँ हों उनसे धीरे धीरे अवगत कराने चाहिये। ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करें जिससे वह निर्भय रहे।

बालक स्वयं काम करना चाहता है। किन्तु कौशल न होने के कारण वह चीजों को गिरा देता है फिर भयभीत हो जाता है क्योंकि उसे अपने माता पिता की डांट का डर है।

बच्चे के बारे में माता-पिता के लिए कुछ सुझाव

1 माता पिता बच्चे की उपस्थिति में कभी कहीं भी झगड़ा न करें, अगर उनको झगड़ना हो तो अन्यत्र चले जावें।

2 जब आपके परिवार में दूसरा बच्चा जन्म ले तो बड़े बच्चे के प्रति प्रेम कमी न होने दीजिए। माता पिता का ध्यान एकाएक नवजात शिशु की ओर जाते देखकर बड़े बच्चे को बहुत अधिक मानसिक कष्ट होता है फलस्वरूप या तो उसमें उनके प्रति उनके प्रेम से वंचित होने की भावना उत्पन्न हो जाती है या द्वेष की। द्वेष की भावना का पहिला लक्ष्य नवजात शिशु होता है और यह भावना यहाँ तक बढ़ जाती है कि उसकी प्रवृत्तियाँ घातक रूप धारण कर लेती हैं। इसके अलावा यह द्वेष माता पिता के प्रति भी हो जाता है। परिणाम यह होता है कि उसके हृदय में द्वेषात्मक मनोवृत्ति और दुष्कर्म तथा आशंका की भावना प्रबल हो जाती है।

3 अपने बच्चे के प्रति अत्यधिक प्रेम मत दिखाइये। अगर माता पिता विशेष कर माता अपने बच्चों की आवश्यकता से अधिक चिंता और देखभाल करने लगे तो बच्चे में दायित्व का भाव विकसित होने का अवसर ही नहीं आवेगा। उसमें परावलम्बन की घातक भावना भरी रहेगी और स्वयं कोई निर्णय करने के डर के कारण वह धीरे धीरे शंका व नाड़ी दौर्बल्य का शिकार हो जायगा। अगर माता पिता प्रेम प्रदर्शन सम्बन्धी शारीरिक क्रियाओं में अधिक संलग्न रहे तो ये विकार बढ़कर भीषण रूप धारण कर सकते हैं। बच्चे के प्रति अत्यधिक प्रेम प्रदर्शन दाम्पत्य जीवन के प्रति माता के असन्तोष का सूचक होता है। इसका बच्चे के यौन जीवन पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। आगे चलकर उसके लिए समवयस्क विशेषकर भिन्न वर्ग स्त्री या पुरुष के साथ सामंजस्य स्थापित करना कठिन हो

जाता है। अगर माता अधिकार प्रदर्शन और शासन के रूप में प्रदर्शन करे, बच्चे के हर काम में दखल देती या शरीक होती रहे और आलोचना करती रहे तो बच्चे की कमजोरी और आशंका की भावना बहुत बढ़ जायगी जो प्राय सहवर्गीय यौन प्रवृत्ति उत्पन्न कर देती है।

4 बच्चा के प्रति आपका प्रेम बहुत कम भी नहीं होना चाहिए। प्रत्येक बच्चे को प्रेम और उचित ध्यान की आवश्यकता होती है। अगर बच्चा यह समझने लगे कि घर में उसकी कोई पूछ नहीं है तो उसमें दीनहीन और असहाय होने की भावना घर कर लेगी। आगे चलकर जीवन में और लोगों से मिलने पर उसमें पराजय की भावना उत्पन्न होगी।

5 माताएँ अपने पति पर हावी होने का प्रयत्न न करें। अगर माता दबंग और उग्र स्वभाव की हो और पिता का स्वभाव कोमल और दब्बू हो तो बच्चे की शारीरिक और मानसिक स्थिति उचित न रह सकेगी। लड़का तो इस मर्दानी माता के सामने कुंठा की भावना और स्त्री सुलभ नम्रता के साथ झुकता रहेगा और लड़की अपने को उस माता के रूप में समझकर पुरुष प्रकृति की हो जावेगी, जिससे वह सामान्य यौन जीवन के सामंजस्य स्थापित कर नहीं सकेगी।

6 बच्चों के समक्ष न तो ज्यादा नरम बनिए और न बहुत कड़ा दण्ड दीजिए। दण्ड देना नियम न होकर अपवाद ही होना चाहिए मारना पीटना तो



[माताएँ बच्चा के समक्ष अधिक गम्भीर न रहे।]

हानिकारक भी है। अगर इस प्रकार का व्यवहार बच्चे का बचपन से ही [illegible] रहता है ... यह एक ओर दूसरा ऐसा काम करना रहेगा जिससे इस [illegible] पहुँचती रहेगी। और जब यह दुनिया में बुरी [illegible] और प्रति प्रचार करने की शिकायत करने लगेगा।

7 बच्चों के लिए समय निकालिए। आज के माता पिता अपने बच्चों के लिए समय नहीं निकालते हैं। बच्चों के साथ रहिए, उनकी निगरानी रखिए। उन्हें आजादी दें परन्तु उन्हें इतना न छोड़ दें कि बच्चा यह समझने लगे कि आप तो उसमें रुचि ही नहीं लेते। माता पिता स्वावलम्बन, सद्भावना और सामूहिक भावना का पाठ प्रारम्भ से ही दें तो बच्चा इस योग्य हो जाता है कि संसार में खराब स्थितियों में भी अपने को नियन्त्रित रख सकता। यदि आप उसके लिए समय देंगे तो उस पर बाहरी प्रभाव नहीं पड़ेगा। और उसके प्रारम्भिक संस्कारों की नींव मजबूत होगी।

8 बच्चों को नशीली वस्तुएँ न दें। बहुत से माँ बाप रात को बच्चों को सुलाने के लिए इस ख्याल से उन्हें अफीम इत्यादि विषैले पदार्थ खिला दिया करते हैं, इसका परिणाम यह होता है कि उनके मानसिक विकास को बड़ा गहरा धक्का पहुँचता है। यदि आप अपने बच्चों को बुद्धिमान और प्रतिभाशाली बनाना चाहते हैं तो आपको चाहिए कि उनको किसी भी प्रकार का नशा न करने दें। उनको चाय बीड़ी, सिगरेट आदि से भी बचाएँ। बीड़ी सिगरेट पहले बच्चे अपने पिता व बड़े भाई की नकल करके पीते हैं व फिर छिप छिपकर पीने लगते हैं। जिससे उनमें झूठ व चोरी करने की आदत पड़ जाती है।

जैसा भाव माता पिता अपने बच्चे के प्रति रखते हैं और बर्ताव उनके साथ करते है ये सभी बातें उनके मन में उसी तरह जम जाती हैं और उनके भावी जीवन में प्रकट होती हैं जैसे टेप किया हुआ गाना जैसे का तैसा गायन रूप में प्रकट होता है।

9 बच्चों के साथ कटु व्यवहार न करें व स्वास्थ्यहीनता के विचारों से उन्हें दूर रखें।

कटु व्यवहार—हमारे माता पिता अपने बच्चों के साथ कटु बर्ताव करते है। उन्हें बुरी तरह धमकाते है और भला बुरा कहते हैं कोमल हृदय बालक बहुत खिन्न और उदास रहते हैं। इसका परिणाम कि उनका मानसिक विकास रुक जाता है और वे आजन्म संकुचाए बच्चों को आत्म प्रेरणा के प्रभावों से प्रभावित कीजिए। जब बच्चा रोने लगे तो माँ बड़े प्यार से उसका चुम्बन ले और पुचकार कर कहे चुप रह तेरा दर्द अच्छा हो गया। उसको थपथपी दे। इस थपथपी का बालक पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ता है। छोटी मोटी तकलीफें तो केवल माता पिता के प्रेम

भरे आश्वासन और हाथ फेरने व पुचकारने भर से दूर हो जाते हैं। जिन लोगों का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता अवश्य ही उनके बचपन में स्वास्थ्यहीनता के विचार भर गए होंगे। बच्चों के मन में मां बाप तथा अड़ोस पड़ोस के लोग अज्ञानवश दुगदद, आधिव्याधि के विचार बुरी तरह भर देते हैं। वे उनको कहा करते हैं 'शरीरं व्याधि मंदिरम्' बस ये विचार बच्चों के दिल में जड़ जमा लेते हैं और उनका प्रभाव आज में उन बेचारों को भोगना पड़ता है। अतः ऐसे विचारों से बालकों को बचाना चाहिए तथा वे प्रारम्भ से ही स्वस्थ बनें व दुर्बल न हो जायें इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए।

दुबले व पतले बच्चे—बच्चों के दुबले पतले होने के कई कारण हैं, जैसे कुछ बच्चे अपने वंश की परम्परा के अनुसार दुबले होते हैं। उनके माता पिता में से यदि एक या दोनों दुबले शरीर की बनावट के होते हैं और बच्चे का डीलडौल भी उन्हीं के अनुरूप होता है। ऐसे बच्चों का पालन पोषण बिल्कुल ठीक होता है, खाना पीना भी समुचित एवं पौष्टिक दिया जाता है स्वभाव से भी ये बच्चे सुस्त और भद्दे नहीं होते हैं फिर भी ये बच्चे दुबले रहते हैं ऐसे बच्चे भोजन भी अधिक मात्रा में नहीं पचा पाते और विशेषकर पौष्टिक पदार्थ उनके अनुकूल नहीं हो पाते।

कुछ बच्चे भय और आतंक से इतने प्रभावित हो जाते हैं कि उनकी भूख मर जाती है और वे पर्याप्त भोजन नहीं खा पाते, इसी भय तथा आतंक की कल्पना से वे दबे दबे से रहते हैं जिससे उनके स्वास्थ्य पर भी कुप्रभाव पड़ता है और वे दुर्बल हो जाते हैं।

बच्चे की मानसिक परेशानी होने पर भी उसको भूख नहीं लगती, साथ ही उसकी शक्ति भी क्षीण होती रहती है। स्वास्थ्य गिरता जाता है। किसी रोग से पीड़ित बच्चे भी दुबले होते हैं, परन्तु यदि सही समय पर रोग की देखभाल नहीं हुई तो बच्चे और भी कमजोर हो जाते हैं।

कुपोषण से बच्चे में रोग—इससे बच्चों में प्रतिरक्षा की क्षमता कम हो जाती है और वे श्वसन तथा पाचन तन्त्र से सम्बन्धित रोगों से ग्रस्त हो जाते हैं—क्वोरशियोरकर—इसके प्रमुख लक्षण हैं वृद्धि की गति में अवरोध, स्वभाव में चिड़चिड़ापन, सम्पूर्ण शरीर में सूजन, रूखे व कांतिविहीन बाल एवं त्वचा, रोगावरोधक क्षमता का ह्रास चेहरे पर उदासीनता, भूख की कमी आदि।

मेरास्मस—उसमें उपर्युक्त सभी लक्षण रहते हैं किन्तु शरीर में सूजन नहीं होती इसके विपरीत बच्चा हड्डियों का ढांचा रह जाता है।

रतौंधी—यह विटामिन 'ए' की कमी से होती है। इसमें बच्चे की कम प्रकाश में देखने की क्षमता समाप्त हो जाती है। अगर सही समय पर ध्यान नहीं

दिया जाय तो आखों की दृष्टि जाती रहती है। रतोंधी से बचाव के लिए आवश्यक है कि विटामिन "ए" युक्त भोजन बालकों को दिया जावे। इस विटामिन के प्रमुख स्रोत हैं मक्खन, घी, हरी सब्जी गाजर, टमाटर व फल इत्यादि। पाच वर्ष से छोटे बच्चे को रतोंधी से बचाव के लिए विटामिन "ए" युक्त खाद्य पिलाई जाय।

रक्ताल्पता—यह रोग शरीर में लोहलवण की कमी से होता है। शरीर में इसकी कमी के कारण हैं भोजन में लोहे की कमी। भोजन का पूर्ण अवशोषण न होना या कहीं से निरन्तर रक्त स्राव होना आदि है। बच्चों में वृद्धिकाल में इसकी अतिरिक्त मात्रा की आवश्यकता होती है। मलेरिया से पीड़ित होने के बाद या पेट में कीड़े होने से भी रक्ताल्पता होती है। लोहे के प्रमुख स्रोत हैं—हरी पत्ती वाली सब्जियाँ, फल, गुड, बाजरा, गेहूँ आदि इत्यादि।

रिकेटस—इस रोग में बच्चों की हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं व उनमें विकृतियाँ आ जाती हैं। विटामिन "डी" के स्रोत वही हैं जो विटामिन 'ए' के परन्तु प्रकृति ने इसका सबसे महत्वपूर्ण स्रोत जो हमें दिया है वह है सूर्य का प्रकाश। इसलिए यह रोग बच्चों में अधिक होता है जिनको अंधेरे में कमरों में बन्द रखा जाता है और सूर्य के दर्शन कभी नहीं कराए जाते।

स्कर्वी—इस रोग में मसूड़े सूज जाते हैं व खून निकलता रहता है। जोड़ों में दर्द होता है व हड्डियाँ हाथ लगाने से दुखती हैं। इससे बचाव के लिए नींबू, संतरा, आंवला, अमरूद, टमाटर आदि खट्टे फल प्रयोग में लाने चाहिए। विटामिन 'बी' की कमी से ओंठ में छाले होना, बेरीबेरी तथा रक्ताल्पता आदि रोग हो जाते हैं। इन सभी रोगों से बचाव के लिए आवश्यक है कि बच्चे को उचित आहार मिले। इसके लिए माता को प्रशिक्षित करना अनिवार्य है। जब तक माताएँ कुपोषण का महत्व नहीं समझेंगी, बच्चे कुपोषण का शिकार होंगे। यदि बच्चे का स्वास्थ्य दिन दिन गिरता जाता है तब तो किसी बाल चिकित्सा विशेषज्ञ को दिखाना आवश्यक है।

बहुधा देखा गया है कि दुबलापन, सुस्ती और स्वास्थ्य का गिरना शारीरिक रोग की बजाय मानसिक विकार के कारण होता है। बच्चे को घर से स्कूल अथवा उसके आसपास के वातावरण से कोई असुविधा या चिंता होती है तो इसे भी ढूँढना चाहिए और इसे यथासम्भव दूर करने का प्रयास करना चाहिए। ऐसे बच्चों को अधिक खिलाना नहीं चाहिए। शारीरिक और मानसिक स्थिति के ठीक होने पर खाने की ओर उसकी रुचि अपने आप बढ़ जायगी। बच्चा यदि एक बार में पूरा भोजन नहीं करता तो इसे थोड़ा थोड़ा करके कई बार खिलाना चाहिए। यदि बच्चा खाने में अधिक पोषण देने वाले पदार्थ पसन्द नहीं करता है तो उस पर जोर मत

दीजिए, अपितु जो चीजें वह पसन्द करता है उन्हीं में थोड़े और पौष्टिक चीजें मिलाकर उसे देना चाहिए ताकि बच्चे को मालूम नहीं हो सके। ऐसा करने से बच्चा स्वयं ही पोषण देने वाली चीजें रुचि से खाने लगेगा।

जो बच्चे स्वभाव से ही कम खाने वाले होते हैं उन्हें भोजन में पौष्टिक पदार्थ जैसे दूध, मक्खन आदि अधिक खिलाना चाहिये।

दुबला बच्चा यदि अधिक चिड़चिड़ा और जल्दी थक जाने वाला हो तो उसे हर समय दौड़धूप, खेलकूद से बचाए रखिए। उसे सुलाने और आराम देने की चेष्टा कीजिए। बच्चे के स्वास्थ्य पर नींद और विश्राम का बहुत प्रभाव पड़ता है। छोटे बच्चों के लिए मनोरंजन और खेलकूद भी आवश्यक है। इसके लिए माता पिता को ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे का समुचित विकास व मन बहलाव होता रहे। आराम के साथ मनोरंजन और भी हितकर है। बच्चे को भोजन के पश्चात् पढ़ाना



[चित्रकारी मनोरंजन का साधन है]

या चिढ़ा देना और कहानी, कविता सुनाना या चटकर कोई इच्छा सन् निकालनी चाहिए। अच्छी चित्रों वाली पुस्तकें भी दी जा सकती हैं। चित्रकारी भी मनोरंजन का साधन है।

दुर्बल और चिड़चिड़े बच्चों को उनकी इच्छानुसार ही खेलने देना चाहिए। ऐसे बच्चों के काम में बाधा डालना ठीक नहीं है। बच्चों को अच्छे किंडरगार्टन या मान्टेसरी स्कूल में प्रवेश कराना चाहिए जहां पढ़ाई के साथ खेलने व सह प्रवृत्तियों की सुविधा हो। आजकल ऐसे विद्यालय हैं जहां अध्ययन पर ही जोर दिया जाता है परन्तु बालक के सम्पूर्ण विकास के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। ऐसे बालक सदैव दुर्बल ही रहेंगे। बच्चों की मेडिकल जांच भी समय समय पर कराना चाहिए। यदि आपका बच्चा कोई विशेष समस्या नहीं उत्पन्न करता वह थोड़ा बहुत दुबला है फिर भी उसका शरीर स्वस्थ है, विकसित हो रहा है वजन भी अवस्था के साथ बढ़ रहा है तो माता पिता को चिन्ता नहीं करनी चाहिए, समझ लीजिए कि प्रकृति ने उसे दुबला ही बनाया है और इसमें कोई हानि नहीं है।

बालक क्यों पिछड़ता है

बालक के पिछड़ेपन में पर्यावरण का पर्याप्त प्रभाव पड़ता है। घर एवं स्कूल का प्रतिकूल वातावरण, भग्न घर, असम्बद्ध अनुशासन, दोषपूर्ण सामाजिक सम्बन्ध और शिक्षण के प्रति माता पिता की उदासीनता बच्चों के विकास में बाधक होते हैं। भग्न घरों के बच्चे जिन्हें माता पिता का वात्सल्य और स्नेह नहीं मिल पाता बाद में 'समस्या मूलक बालक' बनते देखे गए हैं। वास्तव में अनुकूल पर्यावरण, अच्छा शिक्षण, उचित अवसर, सामाजिक सुविधा और सफलता के अनुभव प्रदान कर किसी भी आयु में किसी भी योग्यता को प्रोत्साहित और विकसित किया जा सकता है।

रूस में माध्यमिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है। यह इस बात की जानकारी देता है कि यदि शिक्षा का आयोजन और उन्नयन ठीक प्रकार से किया जावे तो कुछ असामान्य कारणों को छोड़कर सभी बच्चे माध्यमिक शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। भारत में 10+2 योजना के अन्तर्गत कई राज्यों में शिक्षा देने की योजना प्रारम्भ की जा रही है। राजस्थान में भी 1986 से इस योजना को प्रारम्भ किया गया है। केन्द्रीय बोर्ड ने इस प्रकार की शिक्षा राज्यों व केन्द्र प्रशासित प्रदेशों में प्रारम्भ की है। इसमें सभी विषयों को जिसमें विज्ञान भी सम्मिलित है पढ़ाया जाता है। इस योजना के लिए यह तर्क दिया जाता है कि अधिकांश बालक उच्च माध्यमिक शिक्षा का लाभ उठाने में अक्षम होते हैं अतः उन्हें सभी विषयों की सामान्य जानकारी 10वीं कक्षा तक दे दी जावेगी।

रूस के हजारों शिशु वहां के सामान्य विकास के लिए कृत संकल्प हैं। वहां के बच्चे प्राय सभी ज्ञान और कौशल सीख लेते हैं, जिनकी स्कूली शिक्षा के

लिए आवश्यकता होती है। यदि शिक्षण व्यवस्था तत्परता और ईमानदारी से की जाय तो स्कूल सभी छात्र छात्राओं के मानसिक विकास एवं क्षमताओं के पोषण और ज्ञानार्जन में इष्टतम योगदान दे सकते हैं। यदि हम रूसो, पेस्टालाजी और टालसटाय के विचारों का सिंहावलोकन करें तो निम्न निष्कर्ष निकलते हैं —

1 बच्चों को सम्मान और स्नेह मिलना चाहिये।

2 शिक्षा के क्षेत्र में पर्यावरण का आनुवांशिकता से बहुत अधिक महत्व है और पर्यावरण में सामाजिक सम्बन्ध प्रभावकारी होते हैं।

3 बच्चों के सगीसाथी उन्हें बना या बिगाड़ सकते हैं। पर्यावरण के अन्तर्गत बच्चे का परिवार, स्कूल तथा समाज एवं सांस्कृतिक कारण महत्वपूर्ण होते हैं।

घर एवं परिवार—घर के सतुलित एवं स्वस्थ वातावरण का बच्चों के विकास पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। जिन परिवारों में नियन्त्रता, परिवार के सदस्यों की प्रसिद्धता, माता पिता की बुरी आदतें, संघर्ष, आर्थिक प्रेरणा का अभाव और स्कूली गतिविधियों में किसी भी प्रकार की सहायता बच्चों को नहीं मिलती उन परिवार के उच्च अध्ययन में पिछड़ जाते हैं। परिवार में बच्चों का अनियन्त्रण या उपेक्षा होना ही बच्चों के सतुलित विकास में बाधक हैं। अति लाड में पले बच्चे कठिनाई में आत्मनिर्भर बन पाते हैं जबकि उपेक्षित बच्चे असामाजिकता की ओर अग्रसर हो जाते हैं। बच्चों से उनकी क्षमता से अधिक की अपेक्षा, अनुपयुक्त तुलना और असमानुपाती दण्ड उन्हें असुरक्षित बना देता है। परिवार में पिता की कठोरता और माता की उदारता में सन्तुलन होना चाहिये। नानी दादी का बच्चे के पक्ष में असमय या अनावश्यक हस्तक्षेप भी बच्चे के विकास में बाधक होता है। बालक को माता पिता के प्रेम के अतिरिक्त कुछ और चाहिए, वह है अपनी आयु वाले बालकों के साथ सामूहिक मेल।



[बच्चों को अपनी आयु वाले बच्चों के साथ मेलने दें]

प्रारम्भिक अवस्था मे बच्चो के लिये स्कूली शिक्षा

स्कूल म बच्चा जब पहली बार आता है ता वह अपन साथ अपना घर और वहाँ अर्जित आदत, व्यवहार, अभिव्यक्तियाँ, कुण्ठाये, ग्रन्थियाँ और सामाजिक सम्बन्धी अनुभव भी लाता है। भारतवष म अभी तक पूव की शिक्षा जिस किंडरगाटन, या मान्टसरी शिक्षा कहत हैं उसका प्रचलन नगण्य सा है। इन विद्यालया म 3 वष क बालका म ही अच्छे सस्कारो को डालन का प्रयास किया जाता है जिसस बालक बचपन स ही सतुलित व सुसस्कृत हो जात हैं। स्कूल उसक लिय एक नये ससार का द्वार खोलता है। वह नये और अधिक मित्रा और अध्यापका क सम्पक म आता है। उसकी गतिविधिया का क्षेत्र भी बढता जाता है। कई परम्परागत और साधारण स्कूला म वह खेलकूद काय, निजत्व और सुरक्षापूर्ण भौतिक एव सामाजिक वास्तविकताओ की दुनिया स अचानक, अक्षरो, अका, प्रतीका और अमूर्तों के अक्षर म पहुँचा दिया जाता है। इसलिय ससार मे उसके लडखडाने और भटकन की सम्भावना बनी रहती है। शिक्षक अपन काय के प्रति इतना सकीर्ण, अपरिवतनशील और कठोर दृष्टिकोण अपनाता है कि वह यह सोचन समझन का प्रयास ही नही करता कि यदि इस तनावपूर्ण सक्रमणकाल म बच्चा बिना अधिक हानि या क्षति के पार कर लता है ता वह बच्चे के विकास म सहायक हो सकगा। बच्चे को एसा महसूस नही हाना चाहिय कि विद्यालय एक यातनागृह है। स्कूल का पहिला काम है बच्चे के लिय सम्पन्न, सुखद और प्रेरक वातावरण प्रदान करना ताकि उसम स्कूली कार्यों क प्रति अरुचि उत्पन्न नही हा। इसलिय स्कूला म विभिन्न पाठ्येत्तर गतिविधिया, कार्यानुभव और शक्षणिक यात्राआ के कायक्रम आयाजित किय जान चाहिय।

समुचित विकास और उपलब्धि के लिय बच्चा पर जहाँ अधिक नियन्त्रण घातक रहता है वहाँ बच्च स्वतन्त्रतापूर्वक अपनी याग्यताआ की अभिव्यक्ति नहीं कर पात। अत विद्यालय म छात्रा का स्कूल की गतिविधिया म अधिक भाग लन की स्वतन्त्रता हानी चाहिय। स्कूला का अध्ययन अध्यापन केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित न रहकर छात्रा की सामाजिक वृत्ति का अभिव्यक्ति प्रदान करन म भी • हान चाहिय। स्कूल एक सुधार केन्द्र भी हाना है। आखिर, सारहीन

और सावगिय रूप स वचित बच्चा के अभाव की पूर्ति करन का प्रयास विद्यालय को करना चाहिए।

समाज—बच्चा की शिक्षा के क्षेत्र म समाज का भी हाथ हाता है। परम्पराएँ, रूढियाँ, मूल्य, मान्यताएँ, विश्वास और आदर्शों का बच्चो की शिक्षा पर अप्रत्यक्ष रूप स प्रभाव पड़ता है। कई अन्धविश्वासी माता पिता अभी भी जीव विज्ञान विषय का नही पढने देत क्योकि इसमे उनको मेढक व अन्य जानवरा का काटना पड़ता है। हमारे यहाँ अच्छे विद्यालय नगरा की अच्छी बस्तिया म खाल जात हैं जबकि ऐस विद्यालय पिछड़ी बस्तिया म खोल जाने चाहिए। ग्रामा म विद्यालय खोले जा रहे हैं परन्तु न वहाँ बठने को टाटपट्टियाँ, न आवश्यक फर्नीचर व भवन उपलब्ध कराया जा रहा है। विद्यालय म यदि सब आवश्यक सुविधायें हागी ता उनका प्रभाव ग्रामवासिया क रहन सहन क स्तर पर भी पडेगा। अन्यथा जसा घर है उनमे भी विद्यालय निम्न स्तर का हागा तो आखिर यह आदश बालक को कहाँ स मिलगा।

हमारे दश म गरीबी और अशिक्षा के कारण अधिकाश अभिभावक अपने बच्चा का सन्तुलित भोजन उपलब्ध नहीं करा पाने, न इसका मूल्य ही समझते हैं। स्कूला म बच्चो क लिए दूध व मध्याह्न भोजन की व्यवस्था करनी चाहिए। अच्छी स्मृति क लिए प्रोटीन और एन्जाईम अत्यावश्यक है अत इनकी मात्रा दनिक भाजन म कम नही होनी चाहिये। वस ता प्रकृति स्वय बहुत बडी उपचारक हानी ह किन्तु प्यार और सद्भाव, शान्ति और सुरक्षा, खेलकूद और काय, मित्रता और मनोविनोद का वातावरण बच्चा का प्रगति करन लिए अनूठी प्रेरणा देता ह।

पठन मे पिछड़ेपन के कारण

स्कूल म छात्र अपन अध्ययन म केवल बौद्धिक कारणा स नहीं पिछड़ते बल्कि इसके कई कारण हात हैं जस—

1 शब्दो क दृश्य मे प्रतिदर्शी प्रत्यक्ष की दुबलता—पठन के क्षेत्र म हुए शाध से यह स्पष्ट हुआ है कि दृष्टि न्यूनता और विलम्बित परिवतन ही पठन मे पिछड़ेपन क प्रभावी कारण हैं। प्रारम्भिक कक्षा क बच्चो की भाँति अधिक उम्र के कम पठनकर्ता भी शब्दो की सरचनाओ म निहित बारीक अन्तर का विश्लेषण करन की क्षमता नहीं हाती। जस कम और काम, नाम और नरम। अग्रेजी के *Wet* और

Went, He और She एवं Form और From शब्दों में भेद करने में वे कमजोर होते हैं। कुछ पठनकर्ता छोटे शब्दों को उलट कर पढ़ते हैं और कुछ समान अक्षरों जैसे "प और म" या ढ और 'ड' के पढ़ने में त्रुटियाँ करते हैं। कुछ छोटे शब्दों को उलट कर पढ़ते हैं और कुछ समान अक्षरों जैसे मदन को दमन और कमल को मकल पढ़ते हैं।

2 आँख व हाथ की कमजोरी व इनमे तालमेल की कमी से भी पिछड़ापन हो सकता है। एक बाँये हाथ और दाँये आँख से अधिक काम करने वाला और दूसरा दाँये हाथ और बाँई आँख से अधिक काम करने वाला। जिन बच्चों के हाथ और आँख की गति में समन्वय या तालमेल नहीं बैठ पाता वे ही शब्द या अक्षरों के स्वरूप को सही प्रकार से पहचानने में त्रुटि करते हैं। आरम्भ में प्राथमिक कक्षाओं में छात्रों को विभिन्न वाक्ध्वनियों का अन्तर स्पष्ट और सही रूप से बोल कर एवं लिखकर समझाया जाना चाहिये। मिलती जुलती ध्वनियों जैसे प और ष, ज और झ, स और श आदि के उच्चारण और लेखन पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

3 नेत्रों की दृष्टि के कोण में दोष—ये कारण पठनकर्ता को शब्दों के स्वरूप के प्रत्यभिकरण में कठिनाई होती है। दृष्टिकोण दोष से पीड़ित बच्चे प को म, फ को क और न को म पढ़ते पाए जाते हैं। अंग्रेजी पढ़ने में व n को m और c को e पढ़ते हैं। यह दोष की तीव्रता पर निर्भर करता है। विशेषकर समीप दृष्टि 'Myopia' दूरदृष्टि Hypermetropia नेत्र लैंस की असमान वक्रता, तिर्यक दृष्टि Strabismus or Squint आदि दृष्टिकोण पठन को पिछड़ापन में अधिक सहायक होते हैं। निर्धन घरों में बच्चों द्वारा चश्मा नहीं लगाना या अनियमित रूप से चश्मा लगाना, चश्मा टूटने पर कई दिनों के पश्चात दूसरा चश्मा लगवाना आदि कारण हैं जिस पर पूर्ण ध्यान दिया जा कर उपचार करना चाहिए।

4 उच्चारित ध्वनियों के श्रवण भेद की दुर्बलता—(Weakness in Auditory discrimination of Speech Sounds) समान ध्वनियों का अन्तर याद रखना और शब्द के श्रवण तत्वों Auditory elements का संश्लेषण व विश्लेषण नहीं कर पाना ही श्रवण बोध की दुर्बलता का आधार है। श्रवण बोध में कमजोर बालक बालिका Set को Sat और But को Bud सुनते हैं। इसी प्रकार हिन्दी शब्द 'साँप' को साँढ नाक को नाग, बाट को बात और नाव को नाम सुनते हैं। यह त्रुटियाँ वे पढ़ते समय भी करते हैं। अतः ऐसे बालकों का पहले श्रवण निदान परीक्षण Auditory diagnostic Test करना चाहिये और यदि कान में कोई खराबी हो तो उसका उपचार कराना चाहिए। ऐसे बालकों को सावधानी के साथ सुनियोजित ध्वनि अभ्यास Phonic drilling कराया जाना चाहिए। यह अभ्यास सरल से कठिन की ओर हो और इसकी प्रायः पुनरावृत्ति भी की जानी चाहिए।

5 वाग्दोष और पठन निर्योग्यता व उनको दूर करने के उपाय—वाग्दोष शारीरिक कारणों से हो या मानसिक कारणों से। इनका श्रवण व पठन दोष से सीधा सम्बन्ध होता है। श्रवण योग्यता पर ही भाषण योग्यता की प्रगति निर्भर करती है। 'स' 'र' और 'न' ध्वनियों का कई बच्चे सही उच्चारण नहीं कर पाते। इसी प्रकार न और ल, प और फ तथा ग और घ ध्वनियों के उच्चारण में त्रुटियाँ पाई जाती हैं। इस उच्चारण दोष का प्रमुख कारण श्रवण दोष होना है जो बच्चे सुनकर स, ष और श ध्वनियों में भेद नहीं कर पाते वे ऐसी त्रुटियाँ बोलने और पठन में करते हैं। एक छात्र ल का न पढ़ता था 'वह बहुत सी लालियाँ बनाकर एक लाला बनाती है।" वाक्य को बहुत सी नालियाँ मिला कर एक नाला बनाती है, पढ़ता था। यह दोष लड़कियों की अपेक्षा लड़कों में अधिक पाया जाता है। बोलने का दोष किसी शारीरिक दोष या बीमारी के कारण उत्पन्न होता है। इनका उपचार होने के पश्चात् भी इसकी पुनरावृत्ति होती रहती है क्योंकि उनका आत्म विश्वास इतना दुर्बल हो जाता है कि वे आश्वस्त ही नहीं हो पाते कि उच्चारण दोष दूर हो चुका है। अतः उनमें आत्मविश्वास उत्पन्न करने की आवश्यकता है।

6 हकलाना और पठन—यदि बच्चा दो-तीन साल का है व हकलाता है तो चिन्ता न कीजिए। इसकी चिन्ता तब होती है जब बच्चा सात साल की अवस्था में हकलाना प्रारम्भ कर देता है तथा यह उसकी आदत बन जाती है। हकलाहट को लेकर बच्चे को न तो बार बार टोकिए और न ही उसका मजाक उड़ाइये। खिलौने देकर उसे व्यस्त रखिए ताकि वह शांत रहे। उसे गीत के आसान बोल सिखाइये। जो बच्चे स्नायु दुर्बलता के शिकार, भावुक और शर्मीले होते हैं उनमें ही हकलाने की आदत अधिक पाई जाती है। बढ़े हुए टॉसिल, साँस की नली या गले की खराबियाँ हकलाहट का मूल कारण नहीं हो सकती हैं उनमें सहायक अवश्य हो सकती हैं। बच्चों को गहरी साँस लेने का अभ्यास कराइये क्योंकि हकलाहट तेज साँस लेने के कारण होती है। सुबह शाम खुली हवा में बच्चे को सीधा खड़ा होने दीजिए, फिर उसे दोनों पैरों को मिलाने और कंधों को थोड़ा पीछे झुकाने के लिये कहिये। अब यह धीरे धीरे नाक से हवा अन्दर खींचे और पेट को बाहर निकाले। हवा जितनी देर अन्दर रोकी जा सके, उतना अच्छा है। इसके पश्चात् हवा धीरे धीरे मुँह से निकालते हुए पेट को पहिले की दशा में ले आना चाहिए। सुबह शाम पाँच छः बार यह व्यायाम पर्याप्त है पर गहरी साँस लेने की आदत डलवाना आवश्यक है। उसके मानसिक तनाव को कम करने का प्रयास कीजिए। उसे क्रोध आता है, झुँझलाहट होती है या उसकी भावनाओं में हलचल होती है तो ऐसा वातावरण दूर करने का प्रयास करना चाहिये।

दिन में कई बार चटाई या चारपाई पर लिटाकर आँखें बंद करने और शरीर को ढीला छोड़ने को कहिए। आराम से लेट जाने पर बारी बारी से एक हाथ

ग्रार एक पाँव ऊपर उठायें ग्रौर वापस ले जायें। लम्बी साँस लें व ग्रपन का ग्रनुभव कर। साँस को मोन्हें बाहर ग्रौर निकालें। छोटे छात्र वाक्यों वाली पुस्तक का गहरी साँस रोककर जब साँस निकालें तो पठन का कहिए। यह ग्रभ्यास कई सप्ताह कराइये। बच्चे का प्रारम्भ म कविता या पाठ पढ़ने को कहिए। यदि बच्चे का बोलन से पहले मुँह बनाने या माँस पेशियों पर जोर डालने की ग्रादत हो तो उसे ग्राईने के सामने खड़ा करके बोलने का ग्रभ्यास कराइये। ग्रपना बिगड़ता चेहरा देखकर उसकी ग्रान्त ग्रपने ग्राप ही कम हो जायेगी। जिस ग्रक्षर पर हकलाता है उसे बार बार बिना हकलाए कहलाने की कोशिश कर। उसमे ग्रात्म विश्वास पैदा करिए। यदि छात्रों म ग्रात्मविश्वास बना रह तो हकलाने का पठन पर कोई प्रभाव नही पड़ता।

पठन नियोग्यता के परिवेशीय कारक (Environmental factors)

1 शैक्षिक ग्रपरिपक्वता—पठन के प्रति छात्रों की ग्रभिवृत्ति ग्रौर (Attitude & Understanding) ग्रवबोधन नही पाया जाता तो वे विकसित नहीं हो पाते। जिन घरो मे विविध प्रकार के पर्याप्त शिष्ट ग्रौर शुद्ध शब्दो का प्रयोग किया जाता है, जहाँ पुस्तकें ग्रौर पत्रिकाएँ पढ़न के बच्चो को ग्रवसर दिए जाते हैं ग्रौर जहाँ बच्चो की भाषिक प्रगति पर ध्यान दिया जाता है वहाँ बच्चे प्रगति करते हैं जिन घरो मैं ग्रनियमित कोलाहल, ग्रशुद्ध ग्रौर ग्रभीष्ट बातचीत, लड़ाई झगड़ा ग्रादि होता है ग्रौर बच्चो को चित्र, पुस्तक, पत्र पत्रिकाएँ ग्रादि देखने को नही मिलती, उन घरों के बच्चे पठन म पिछड़ जाते हैं। घर का शैक्षिक वातावरण पठन के लिए उद्दीपक का काय प्रदान करता है। सास्कृतिक दृष्टि स वंचित घर के बच्चो का शब्द भण्डार Vocabulary बहुत सीमित ग्रौर त्रुटिपूर्ण होती है। स्कूल का पहिला प्रयास होना चाहिये कि भाषा दुर्बलता को दूर किया जाय। उन्हें रुचिकर कहानियाँ सुनाना रंग बिरंगी ग्राकर्षक चित्रो वाली पुस्तकें दिखायी जानी चाहिये। विद्यालयो म मेले, दुकान लगाना, स्कूल का समाचार पत्र निकालना, दीवार पत्रिका प्रदर्शित करना ग्रादि कायक्रम ग्रायोजित करके छात्रों को पठन म प्रगति करने के लिये प्रेरित किया जा सकता है।

2 कक्षा मे उपस्थिति की ग्रनियमितता ग्रौर स्कूल बदलना—पाँच वर्ष से सात वर्ष के बच्चो का स्कूल म ग्रनियमित रूप स जाना पठन मे बाधा पहुँचाता है। जिन बच्चो म इन्द्रिय दोष हो तो यह समस्या ग्रौर भी जटिल हो जाती है। ग्रत ऐसे बच्चो मे खेलकूद की ग्रभिप्रेरणा ग्रौर प्रतिस्पर्धा की भावना उत्पन्न की जानी चाहिये। वस तो ग्रनुपस्थिति स प्रतिभाशाली बालक बालिकाएं भी प्रभावित होते है परन्तु कम बौद्धिक क्षमता वाले विद्यार्थियो के लिए इसकी क्षतिपूर्ति करना कठिन होता है। ग्रत उनके सरक्षको स सम्पर्क कर उनकी उपस्थिति के लिये बाध्य करना चाहिये।

3 स्कूल में पठन की कमजोरी की ओर कम ध्यान देना—यदि बच्चा सात वर्ष की आयु में भी पठन में पिछड़ने लगे तो उसका सही निदान कर ऐसे अध्यापक से पढ़वाना चाहिये जो छोटे बच्चों को पठन और वर्तनी सिखाने में प्रशिक्षित हो। यदि इन बच्चों के पठन पर अभी ध्यान नहीं दिया जावेगा तो आगे चल कर नींव कच्ची रह जाने पर भाषायी कमजोरी बढ़ती जायेगी। आजकल 60–70 बच्चों की बड़ी बड़ी कक्षा में पढ़ाने वाले अध्यापक इतना समय नहीं निकाल पाते कि वे पठन में पिछड़ने वाले बालक पर अधिक ध्यान देकर उसका उपचार कर सकें। साथ ही यह भी समझना चाहिये कि यह कमजोरी साधन विहीन विद्यालय में ही नहीं साधन सम्पन्न विद्यालयों में भी पायी जाती है। यदि ऐसे विद्यार्थियों के लिए अतिरिक्त कक्षाओं की व्यवस्था कर प्रतिदिन अध्यापन किया जावे तो पिछड़े पठनकर्ता बालक भी प्रगति दिखाने लगते है। आवश्यकता है श्रम की कर्त्तव्यपरायणता की जिसकी आधुनिक अध्यापक वर्ग में कमी है। यदि एक बालक गुणा व भाग ठीक करके बतादे तथा भारत के मानचित्र में सही स्थान बतादे तो यही पर्याप्त नहीं है। यदि वह गति और समझ के साथ नहीं पढ़ सके तो उसका गणितीय और भौगोलिक ज्ञान निरर्थक है।

सावेगिक कारण आरम्भिक कक्षाओं में पठन में वे बालक पिछड़ते देखे गए है जो अति लाड के कारण माता पिता पर आश्रित हो जाते हैं अतः उनमें पहला प्रवृत्ति और आत्मनिर्भरता का अभाव हो जाता है। माता पिता द्वारा जोर से पढ़ कर अधिक सुनाना भी बच्चों को स्वयं पढ़ने से रोकता है। असफलता के अनुभव से भी सावेगिक कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। साथियों अध्यापकों और माता पिता के समक्ष असफल से बच्चे दबेदबे रहते हैं। स्थिति यहाँ तक पहुँच जाती है कि पढ़न लिखने के बजाय अन्य गतिविधियों में रुचि लेने लगते है ताकि वे वहाँ सफल होकर होकर अपने आत्म सम्मान की रक्षा कर सकें।

□□□

पठन में बच्चों की न्यूनताएँ व कुटेवों का निराकरण

(Remedial Teaching) पठन की न्यूनताओं के कारण का आयोजन निम्न आधार पर किया जावे—

1 बच्चों की व्यक्तिगत देखभाल

2 बालक के प्रति अध्यापक की उचित अभिवृत्ति

3 बालक के प्रभावी प्रेरक और अभिरुचियों से सम्बन्धित सामग्री का अध्यापन में प्रयोग

4 नियमित रूप में व्यवस्थित और संक्षिप्त पाठ पढ़ाना

उपरोक्त तरीकों द्वारा बच्चे पाठ में रुचि ले कर प्रगति कर सकते हैं। जब बालकों के साथ कठोर व तिरस्कारपूर्ण और पक्षपातपूर्ण व्यवहार किया जाता है तो बालक अपने को तिरस्कृत समझने हैं और इस प्रकार के विद्यार्थी कक्षा में उपस्थित होने से हिचकते हैं। वे इधर उधर निरुद्देश्य घूमते रहते हैं। आवारा घूमते घूमते वे सिनेमा और रेस्टोरेन्ट के आदी बन जाते हैं, जहाँ पर उनको ऐसे और छात्र मिल जाते हैं जो उन्हें असामाजिक बना देते हैं। यदि उनके माता पिता कठोर हैं तो वे अध्यापक को भी कठोर मानकर उनसे घृणा करने लगते हैं। अतः विलम्ब से आने वाले, गृहकार्य नहीं करने वाले और अध्ययन में पिछड़ने वाले छात्रों के प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करके बुराइयों के प्रति उनमें घृणा करानी चाहिये। पाठ्य वस्तु और अध्यापन में जब तीव्र प्रखर बुद्धि वाले छात्र छात्राओं के लिए समस्यात्मक सामग्री नहीं होती तब उनके लिए कक्षा में कोई आकर्षण नहीं रहता। ऐसे बालक पहिले तो निष्क्रिय हो जाते हैं और फिर कक्षा में पीछे पढ़ने लगते हैं। इसके विपरीत यदि पाठ्य सामग्री केवल तीव्र बुद्धि छात्र छात्राओं के अनुरूप हुई तो मन्द बुद्धि या कमजोर याददाश्त ध्यान नहीं देने वाले और तत्र में कमजोर विद्यार्थियों की पढ़ने में रुचि नहीं रह पाती। इसलिये अध्यापक को कक्षा के तेज बुद्धि औसत व मन्द बुद्धि, तीनों प्रकार के छात्रों के लिए सामग्री और चुनौती प्रस्तुत करने का प्रयास करना चाहिये आवश्यकता पड़ने पर बैठक व्यवस्था समयसारणी (Time table) और अभिप्रेरणा (Motivation) इन बाह्य प्रेरकों में परिवर्तन किये जाने चाहिये।

दांतो से नाखून काटना—कई बच्चे दांतो से नाखून काटते हैं जिससे उनकी उँगलियाँ पक जाती हैं। इसके अतिरिक्त यह अस्वास्थ्यकर भी है क्योंकि नाखूनों मे मल जमा होने के कारण ये पेट में चला जाता है जिससे रोग हो जाते हैं। जब य आदत बन जाती है तो वे सदव ऐसा करते रहते है। इसका मनोवैज्ञानिक कारण यह है कि जब बालक संवेगात्मक तनाव अनुभव करता है तो ऐसे करने लगता है, क्योंकि इससे उसे तनाव से मुक्ति मिलती है। यह भी हो सकता है कि वह अपने मित्रो, अभिभावकों या शिक्षकों का ध्यान खींचने के लिये ऐसा करता है। यह समाज सम्मत व्यवहार नही है लेकिन चूंकि उसकी आदत हो गई है अत उसके मन में यह धारणा बन जाती है कि रीति, रिवाज, लोक परम्परा मर्यादाएँ कोई आवश्यक नहीं हैं जो भविष्य में उसके जीवन निर्माण के लिए घातक हो सकती हैं। परिणामस्वरूप वह समाज की प्रत्येक व्यवस्था का विरोध करने लगता है। अत ऐसे बच्चों की शिक्षा के लिये प्रारम्भ से ही सद्व्यवहार की शिक्षा देनी चाहिये। यदि आवश्यक हो तो इसके लिए ताडना भी देना चाहिये।

अगूठा चूसना—यह भी समाज म एक असामान्य व्यवहार गिना जाता है। पैदा होने पर बालक भूख लगने पर अपनी माता का स्तन चूसता है, इससे उसकी भूख भी मिटती है और उसे आनन्द भी प्राप्त होता है। चूंकि यह भावना उसके अचेतनमन मे है अत आनन्द की अनुभूति के लिये बडा होने पर भी ऐसे करने लगता है। जब दूसरे साथी उसे चिढ़ाते हैं या माता पिता उसे ताडते हैं तो उसमें हीन-भावना उत्पन्न हो जाती है जिससे वह शर्मीला हो जाता है व परिणामस्वरूप एकान्तप्रिय बन जाता है। ऐसे बच्चों को दूध, व स्वास्थ्यकर भोजन देना चाहिये। ऐसे खिलौने दिए जावें जिससे वह दोनों हाथों का प्रयोग कर सके, इसके अतिरिक्त उसके साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार होना चाहिये। उसे यह बताया जाना चाहिये कि नाखून का मल पेट म जाने से वह बीमार भी हो सकता है।

कन्धे उचकाना—यह भी बुरी आदत है, इसके निम्न कारण हो सकते हैं—

1 समाज मे किसी व्यक्ति की यह आदत होना तथा अन्य व्यक्तियों द्वारा अनुसरण करना।

2 अचेतन मे दमन हुई इच्छाएँ सग्रह हो जाना तथा उनकी सतुष्टि के लिए ऐसा व्यवहार करना।

3 अंग विशेष मे संवेदना का अनुभव होना, उससे छुटकारा पाने के लिए अंग विशेष का विशेष प्रकार से सचालन।

4 शरीर म आवश्यक तत्वो की कमी होना।

उस आदत से छुटकारा पाने के लिये किसी योग्य डाक्टर से निदान कर इलाज कराना चाहिये। यदि चिकित्सक इलाज न कर सके तो यह माना चाहिये कि बीमारी का कारण मनोवैज्ञानिक है। अत उसके साथ व्यवहार व पढने लिखने व खेलने कूदने व आराम करने की पूरा सुविधाएँ करना चाहिए।

बाएँ हाथ से लिखना—अधिकाश बच्चे दाएँ हाथ का प्रयोग सीखत है परन्तु एसा भी देखा गया है कि कुछ बालक बाएँ हाथ से लिखने आदत बना लेत है। इसका कारण है माता पिता द्वारा प्रस्तुत प्रतिकूल कई बालको मे बचपन से ही ऐसी आदत पड जाती है कि वे माता पिता की आज्ञाओं का उल्टा करें। इसका कारण माता पिता का कठोर होना, उनसे का भयभीत होना या सामने बैठकर भोजन करना। उस समय उनको का ज्ञान नहीं होता तथा वे उनके सामने बाएँ हाथ से लिखने लगते है। माता पिता को बचपन म ही इस पर ध्यान देकर इस प्रकार की आदत नही होने देनी चाहिये। यदि आदत पड ही गई हो तो ऐसे काय हाथ म लिए जावें जिनके म दोनो हाथों की आवश्यकता पडती हो जसे—कपडे धोना, गेंद खेलना, बाएं से डस्टर पकडना तथा दाएँ हाथ स श्यामपट्ट पर लिखना। बालक को दिया जावे कि अधिक काय दाएँ हाथो से ही करे।

बार बार थूकना प्रारम्भिक कक्षाओ म विद्यार्थियो द्वारा अंको का उ लिखना बालिकाओ द्वारा बार बार पुल्लिग क्रिया का तथा बालको द्वारा क्रिया का प्रयोग आदि ऐसी त्रुटियां हैं जिनका यदि प्रारम्भ मे ही सावधानी तो निवारण सम्भव है।

बालक और गालियाँ

गाली का प्रयोग करना बालक की जन्मजात आदत नही होती। वह इस को बाहरी दुनिया से ग्रहण करता है जिनमे एक स्कूल भी है। बालक जब ज्ञान लगता है तो उसमे अपने अध्यापको तथा सहपाठियो का प्रभाव पडने लगता है। यदि अध्यापक ऐसे मिल जायें जिनका गाली तकिया कलाम हो तो इ प्रभाव बालको पर बुरा पडता है। जब बालक का मन खेलने को मचलता है तो घर की चौखट लाघकर अपनी बस्ती के साथियों म आ मिलता है। यदि उसके स गालियाँ देते हैं तो वह उनसे भी गाली सीख जाता है।

कुछ परिवार एसे होते हैं जहाँ पति पत्नि म रात दिन झगडा रहता वाक्युद्ध म गालियों की बौछार दोनो तरफ से होती है और बालक उनको सुन

होता है, बालक भी उन गालियो का खुलकर प्रयोग करने लगता है। कुछ घरा मे हँसी मजाक के समय गालिया देने का रिवाज है, य गालियाँ सहज म ही उनके अवचेतन मन मे डेरा डाल लेती है और समय आने पर वे इसका प्रयोग करने लगते हैं। उनके जिज्ञासु मन मे सहज म बुरा सस्कार बठ जाता है जो शब्द पहिले सुना होता है, उन्ही शब्दा का अर्थ जानने की ओर उनकी प्रवृत्ति होने की सम्भावना रहती है।

कुछ बालका मे अधे को अधा व लगडे को लगडा कह कर चिढाने की आदत होती है। यह गाली का दूसरा रूप है। व्यग्य कसना, उपहास करना यह भी गाली के अन्तर्गत आते हैं। इन सब बातो को बालक अपने माता पिता, अध्यापक, सह-पाठियो सगी साथियो से ही सीखता है।

बहुत से लोगो मे वीभत्स, कल्पनायुक्त शब्दा म गालियाँ देने और बातचीत मे भी गालियाँ देने की और बातचीत म वीभत्स शब्दा म व्यवहार करने की आदत सी होती है। यह आदत कुछ सुसस्कृत और शिक्षित लोगो मे भी पाई जाती है। यह आदत बहुत ही निन्दनीय है। जो लोग इस प्रकार की गालियो और अपशब्दा आदि का व्यवहार करते हैं उन पर इन शब्दो का कुछ भी प्रभाव नही पडता। जो लोग नित्य अफीम खाते है उनके शरीर मे अफीम का विष इतना अधिक फला हुआ होता है कि इतनी अफीम से साधारण लोगा की मृत्यु हो सकती है। परन्तु उतनी अफीम खाने वाला की कोई विशेष हानि नही होती है। ठीक यही दशा उन लोगा की होती है जो गालियो और अपशब्दा आदि का व्यवहार करते हैं। यह इसलिये भी निन्दनीय है कि कुछ नवयुवका के मन मे दबी हुई काम वासना होती है उनकी मनो-वृत्ति ऐसे शब्दा के प्रयोग स उत्तेजित हो सकती है।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने बालक से सम्बन्धित वातावरण पर प्रकाश डालते हुए ठीक ही कहा है कि "प्रकृति ने बालक का ऐसा सक्रिय अनात मन दिया है जिनके द्वारा वह वक्ष की तरह अपने पास के वातावरण से सब कुछ ग्रहण करता रहता है।" इसलिए बालको के लिये नियम पाठय पुस्तके, शिक्षा पद्धतिया साधनो तथा भवना की अपेक्षा वातावरण का अधिक महत्व है।

अत वे घर के वातावरण को स्वच्छ रखने के लिए अन्य बातो के साथ साथ, स्वय गालियाँ देने की अपनी आदत सुधारे। स्त्री और पुरुष के सम्बन्ध की सूचक गालियाँ न दें। यदि इसकी उनको आदत पड गई है तो वे बोलते समय सावधान रहे। बालक पूरा नकलची होता है उसकी बुद्धि परिपक्व नही होती है, वह भलाई बुराई के अन्तर का समझने मे असमर्थ रहता है। वह अपने माता पिता गुरु अथवा

मर्यादियों को जगा काम करते देखता है या उनकी बातों को सुनना है तो जाने अनजान में स्वयं को उसमें ढाल लेता है। यदि उनकी अश्लील गालियों की आदत पड़ गई है या उनके मुँह से निकल जाती हैं तो उसके लिये पश्चाताप करें व भविष्य में ऐसा न करने का प्रण लें।

तकिया कलाम शब्द का सन्धि विच्छेद "तकिया" अर्थात् सिरहाना "कलाम" अर्थात् कथन इस प्रकार जो कथन में आराम पहुँचाये वह तकिया कलाम कहलाता है। ये शब्द है, समझ गए, अच्छा, ठीक है न, गोया है कि क्यों ? साहब, मतलब एक बात है, सुन तो लो, कैसे लगे, क्या कहे साहब, ऐसे शब्दों को बार बार नहीं बोलना चाहिये। कई लोगों को बेटा कहने की आदत है व इस की आदत में लाचार बड़ों को भी बोल देते हैं। अतः बोलते समय अपने पर नियन्त्रण रखना चाहिये।

बालकों को शिष्टाचार सिखायें

ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय।
औरन को शीतल करे, आपहु शीतल होय॥

आवत गारी एक है उलटत होय अनेक।
कह कबीर नहीं उलटिए वही एक की एक॥

मधुर वचन है औषधि कटुक वचन है तीर।
श्रवण द्वार है सूवरे साले सकल शरीर॥

एक मनुष्य अपने जीवन काल में अनेक व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है। परिवार के एक सदस्य के रूप में, विद्यालय के एक सदस्य के रूप में, या समाज के एक सदस्य के रूप में वह नित्य प्रति अपने कार्य, पद या स्तर के अनुसार व्यवहार करता है। वह अपने व्यवहार से कभी दूसरों को प्रसन्न करता है तो कभी अप्रसन्न। कभी उसका व्यवहार मर्यादित होता है तो कभी एकदम अमर्यादित और अनेक समस्याओं को जन्म देने वाला। एक बालक अपने आचरण से अपने माता पिता भाई बहन आदि का मन जीत लेता है तो इससे न केवल उसकी व्यक्तिगत गरिमा में वृद्धि होती है अपितु अपने आचरण से वह परिजनों को भी गुणसम्पन्न बनाता है। पारस्परिक सुख, शान्ति एवं मर्यादापूर्ण जीवन के लिए शिष्टाचार की नितान्त आवश्यकता है। "जो व्यवहार हमें अपने प्रति अच्छा नहीं लगता उस व्यवहार को दूसरों के प्रति न करें एवं जो व्यवहार हम चाहते हैं उसे ही हम दूसरों के प्रति करें" —इस कथन में शिष्टाचरण की सम्पूर्ण कुञ्जी निहित है। शिष्टाचरण न केवल अपने जीवन को उन्नत और लोकप्रिय बनाने का साधन है अपितु सामाजिक जीवन की सफलता भी बहुत कुछ शिष्टाचरण पर निर्भर करती है।

बड़ों के प्रति व्यवहार

अच्छे बालक नित्य प्रति अपने माता पिता एवं गुरु को नम्रतापूर्वक हाथ जोड़ कर प्रणाम करते हैं या चरण स्पर्श करते हैं। श्रद्धा व्यक्त करते समय दोनों श्रद्धालु और श्रद्धेय का हृदय सात्विकता से भर जाता है जिससे यही सात्विकता कालांतर में सम्पूर्ण तामसिक वृत्तियों का समूल नाश करती है। हम सभी जानते हैं कि आस्तिकता और नास्तिकता के भँवर में गोता लगाते नरेन्द्र को जब गुरु रामकृष्ण परमहंस का पावन स्पर्श प्राप्त हुआ तो नास्तिक नरेन्द्र आस्तिक बन गए। माँ का ममतामय स्पर्श जब बालक प्राप्त करता है तो वह असीम सुख अनुभूति का विषय हो सकता है, वर्णन का नहीं। वैज्ञानिक धरातल पर स्पर्श का महत्व तो सभी स्वीकार चुके हैं।

किसी भी शुभ कार्य, यात्रा, परीक्षा आदि कार्यों के प्रारम्भ से पूर्व माता पिता गुरुजनों का आशीर्वाद प्राप्त करने से न केवल हमारे आत्म विश्वास में वृद्धि होती है अपितु उनकी मंगल कामनाएँ भी सफलता का उज्ज्वल द्वार खोलती हैं।

किसी कार्य में सफलता मिलने पर जब कोई व्यक्ति विनीत भाव से प्रणाम करते हुए अपने से बड़ों को उस सफलता की सूचना देता है तो उस सफलता से उत्पन्न हुआ सारा अहंकार नष्ट हो जाता है। सफलता मिलने पर इस प्रकार विनीत भावों की अभिव्यक्ति मनुष्य को अनेक प्रकार के दुर्गुणों से बचाकर अन्य प्रकार की सफलताओं का मार्ग प्रशस्त करती है। "करने वाला मैं नहीं, ईश्वर है" गीता का यह सिद्धांत स्मरण करने से अपने आप चरितार्थ होता चलता है।

बड़ों से वार्तालाप करते समय आदरसूचक शब्दों या सम्बोधनों का प्रयोग करने से शिष्टाचरण का परिचय मिलता है। जी, जी हाँ, आप आदि शब्दों का प्रयोग शिष्टाचरण का परिचायक है।

बड़ों की तरफ पीठ करके बैठना, पैर करके सोना साथ-साथ चलते समय आगे चलना, साईकिल या किसी अन्य सवारी पर सवार रहते हुए प्रणाम न करना शिष्टाचरण की कोटि में नहीं आता है।

शिष्ट बालक सदैव बड़ों के पास जाकर बुलाते हैं, दूर से संकेत द्वारा अथवा चिल्लाकर नहीं बुलाते हैं। बड़ों से बातें वे बैठकर नहीं अपितु खड़े होकर करते हैं।

बड़ों से व्यवहार करते समय उक्त बातों का ध्यान दिया जाए तो न केवल हम बड़ों के स्नेह भाजन बनेंगे अपितु विनयशीलता, श्रद्धा, नम्रता आदि गुणों का विकास होगा।

वाणी का शिष्टाचार

शिष्टाचार वाणी का भी होता है और व्यवहार का भी। अन्त में बड़े से आप कहना, आप क्या कहते हैं के स्थान में आपकी क्या आज्ञा है आदि वाक्य वांछनीय समझे जाते हैं। तुलसीदास जी ने कहा है —

कागा काको देत है कोयल काको लेत।
तुलसी मीठे वचन ते जग अपनो करि लेत॥

एक ही बात को हम कर्ण-कटु शब्दों में कहते हैं और उसी को हम मधुर बना सकते हैं। बाणभट्ट जब मरने वाला था तो यह प्रश्न हुआ कि उसकी अधूरी कादम्बरी को कौन पूरा करेगा? सामने जो सूखा ठूँठ पड़ा है उसको तुम किस प्रकार अपनी भाषा में व्यक्त करोगे? बड़े पुत्र ने कहा "शुष्क काष्ठमिष्ठ त्यग्रे" और छोटे पुत्र ने कहा 'नीरस तरुवर विलसति पुरतः' बात एक ही थी। कहने कहने में फर्क था। बाणभट्ट ने छोटे पुत्र को ही कादम्बरी पूरा करने का भार सौंपा। एक मुहावरा है —बात बात का फर्क तुम कहते हो भैरव हम कहते हैं फरिश्ता, मुसलमान भैरव को फरिश्ता कहते हैं हिन्दू भैरव, परन्तु सुनने में फरिश्ता अच्छा लगता है। यदि सिपाही को सिपाही न कहकर जमादार साहब कह दें तो सिपाही बहुत प्रसन्न होगा। नीति में कहा है —

वदन प्रसाद सदा सदय हृदय, सुधा मुखावाक,
करण परोपकरण यथा तथा के न वन्दनीय॥

जिन मनुष्यों के मुख प्रसन्नता के घर हैं। हृदय दया से परिपूर्ण है वचन अमृतमय और काम परोपकार की भावना से प्रेरित है वे किसके वन्दन योग्य नहीं होते।

किसी काम को कराने के लिए कृपया (Please) शब्द का प्रयोग शिष्टता का परिचायक होता है। अपने से नीचे हैं उस कोई ऐसी बात न कही जावे कि उससे यह प्रकट हो कि हम उनको हीन समझते हैं। अपने से कम स्थिति के लोगों के स्वाभिमान की रक्षा करना सज्जन का पहला काम है। यदि इन्कार करना ही पड़े तो खेद (Sorry) शब्द का प्रयोग किया जावे। इन्कार इस प्रकार किया जा सकता है कि—मुझे खेद है कि आपने यहाँ आने का कष्ट किया और मैं आपकी सेवा न कर सका। बातचीत का पूरा सूत्र अपने हाथ में रखना उचित नहीं है। सुनने वाले को भी बात करने का मौका दिया जाना सभ्यता का तकाजा है।

द्वि अर्थक बात कहना उचित नहीं है।
अश्वत्थामा हतो नरो वा कुंजरो वा'

द्विविधा मूलक शब्द जो युधिष्ठर ने कहे, ऐसे शब्दों से बचा जावे। मात्राप में ऐसी कोई बात नहीं कही जावे, जिसके लिए बाद में पछताना पड़े।

व्यवहार के शिष्टाचार का भी हमेशा ध्यान रखना चाहिए। दूसरों के आने पर उठ खड़ा होना जाने पर दरवाजे तक पहुँचाना। आने पर नमस्कार' या प्रणाम अंग्रेजी में समयानुसार Good Morning या Good Evening आदि शब्दों में मुस्कराहट के साथ जान पहचान का परिचय देना।

रेलगाड़ी में जो पहले आया है उसको बैठने का पहले अवसर देना। यदि महिला वहाँ हो तो उनको बैठने की सुविधा देना। दरवाजे से बाहर निकलने की सुविधा पहले बड़ों को देना। रेल व बस का टिकट क्यू (que) लगाकर लेना। पान, इलायची जल भोजन आदि की थाली पहिले बड़ों के सामने रखना। वाचनालय में मौन रहकर पढ़ना। यदि अखबार का कोई पृष्ठ नहीं पढ़ा जा रहा हो तो उसको कृपया (Please) कहकर मांग लेना लौटाने पर 'धन्यवाद' (thanks) देना न भूलना, सभा व गोष्ठियों में ठीक समय पर पहुँचना, समय से अधिक न बोलना। भाषण देने वाले के बीच में बोलकर हतोत्साहित न करना। जब तक वक्ता भाषण समाप्त न करलें तब तक उठकर नहीं जाना। आवश्यकता से अधिक जोर से बात न कहना। राह चलती स्त्रियों की ओर न ताकना। उनसे कोई ऐसी बात न कहना जो अवांछनीय हो। भवन में प्रवेश करने से पूर्व घंटी बजाना या दरवाजा खटखटाना। कमरे में प्रवेश करने से पूर्व क्या मैं आ सकता हूँ श्रीमान ('May I Come in Sir) विनम्रता के साथ बोलना। यह सब छोटी बातें हैं परन्तु आज के युग में यह सब शिष्टता के अंग हैं।

खान पीने में शिष्टाचार का पालन करना जैसे खाते समय मुँह बंद करके खाना। 'चबर चबर' की मुँह से आवाज न निकालना। न पहिले खाना प्रारम्भ करना व न दूसरों से पहिले उठना। बफे में खड़े होकर खाने का रिवाज है। उसमें चीजें लेने के लिए अधीर न होना। बाँए हाथ से खाने की चीजें लेना व दाँए हाथ से खाना चाहिए।

कपड़े पहनते समय अवसर का ध्यान रखें। ऐसे कपड़े पहनें जिसमें आपकी सौजन्यता प्रकट हो। विद्यालय में धुली हुई व इस्तरी की हुई गणवेश में जावें। विद्यालय में शिष्टाचार का पूरा ध्यान रखा जावे। जहाँ विद्यार्थी इसका पालन नहीं करता हो उसको सुधारा जावे। हम उपकार के लिए 'धन्यवाद' (Thanks) व याचना के लिये 'कृपया (Please) शब्द का प्रयोग करें। यह बातें तो छोटी हैं परन्तु जब बच्चा बड़ा होता है तो शिष्टाचार के नियम का अभ्यास न होने से उनका पालन नहीं करता अतः समाज उसे असभ्य व उच्छृंखल मान लेता है चाहे उसमें अन्य गुण हों।

बाल अपराध

देश म बाल अपराधा की सख्या म लगातार वृद्धि हो रही है। केन्द्रीय गृह मन्त्रालय के पुलिस अनुसधान एव विकास ब्यूरा की एक ताजा रिपाट क अनुसार 1969 स 1979 के दशक म बाल अपराधा का अनुपात निरन्तर बढता गया है। रिपाट के अनुसार 1969 म बाल अपराधा का प्रतिशत 2 6 था जबकि 1979 म 3 5 प्रतिशत हो गया। रिपाट के अनुसार प्रति एक लाख जनसख्या क पाछ भी बाल अपराधा म बढोतरी हुइ ह।

विश्लपण स पता चलता ह कि राजस्थान म 1969 म देश के प्रति एक लाख की जनसख्या पर जहा 4 2 प्रति बाल अपराध हुए, वही 1979 म यह प्रतिशत बढकर 7 1 हो गया। रिपाट म 1979 म हुए बाल अपराधा क ब्यूरा न बाल अध्ययन म निष्कष निकाला ह कि किशारा न चारी के अपराध अधिक किए जबकि सेधमारी और दगा के उससे कम। किशारा क किए गए कुल 96351 अपराधा में स 60 प्रतिशत अपराध सिफ इन्ही तीन शीषका के अन्तगत थे। पूरे देश म कुल अपराधा म स 60 प्रतिशत अपराध केवल चार राज्या महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात तथा बिहार म हुए। ठीक इसक विपरीत उत्तर प्रदश की जनसख्या सबस अधिक होते हुए भी वहा मात्र 348 बाल अपराध हुए। यह तथ्य चौकाने वाले है, इसलिए कि अन्य राज्या की तुलना म यह राज्य अपराध की दष्टि से भी किसी से कम नही रहा है। बाल अपराध की दष्टि स राजस्थान का देश म सातवा स्थान है।

बाल अपराध को कसे रोका जावे—व उपाय जा सामान्य बालको की कमी दूर करन के लिए किय जात हैं व ता किए ही जावें परन्तु एस बालक जिनम सम्मान प्रतिष्ठा का भाव हो चुका ह और जा इतन चालाक और शरारती हा चुक है कि साधारण उपचार का कोई प्रभाव नही होता उनका ऐस विद्यालय जिनम उद्योग सिखाया जाता है, प्रवश दिया जाना चाहिय। इनम पूर्ण कौशल या अधकौशल धन्ध म लगान म व शक्ति लगा कर श्रम करन लगत हैं। इनमे सुनारी, छपाई, जूते बनाना,

बागवानी, चित्रकला, कपडे सीना मशीन पर काम करना, बढईगिरी, बिजली का काम, रेडियो व टेलीविजन सुधारना, पानी के नल लगाना, ब्रेड बनाना आदि व्यवसाय सिखाने की व्यवस्था होनी चाहिये। लडकियो के लिये घरेलू सेवा व गृह विज्ञान सम्बन्धी व्यवसाय उपयोगी हो सकता है। इनके लिये पोशाक बनाना, रगाई छपाई पापड, मगोडी व घरेलू काम मे आने वाली वस्तुओ का प्रशिक्षण दिया जा सकता है।

हमारे सामान्य स्कूलो म बच्चो को शिक्षा के लिए केवल पठन, लेखन, गणन या नाम मात्र के उद्योग ही पर्याप्त नही है अपितु विभिन्न रुचियो को सन्तुष्ट करने वाली सामग्री आवश्यक है। खेल कूद सामान्य ज्ञान मनोरजक कहानियाँ, गायन, वाद्य अभिनय, नृत्य, चित्रकारी यात्राएँ आदि मनोरजक और सास्कृतिक आयोजना द्वारा परिष्कृत एव असामाजिक रुचियो को परिष्कृत एव सामाजिक रुचियो से सम्बन्धित कर उनके जीवन प्रवाह को वाछनीय दिशा म मोडा जा सकता है। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, राजस्थान ने सामान्य शिक्षा मे अन्तगत 'समाजोपयोगी उत्पादन कार्य' Socialy useful Productive Work प्रारम्भ कर एक नई दिशा दी है जिसके परिणाम अभी तक अच्छे रहे है व आशा है भविष्य मे भी अच्छे रहेगे। इन सब योजनाओ की सफलता तब ही सम्भव है जब अध्यापक वर्ग स्वय परिश्रमी व बालको से सहानुभूति रखे व उनकी समस्याओ को समझने वाले हो। पिछडे व अपराधी बालक के लिए तो एक अलग 'औद्योगिक विद्यालय' की आवश्यकता है।

बच्चे अपने बडो के बारे मे क्या सोचते हैं

तीन वर्षीय राज के पिता आफिस म अधिकारी है तथा अधिक समय दौरे पर रहते हैं, मा पढी लिखी है। जब उससे पूछा गया कि पापा कहा है तो उसने कहा कि वे तो बहुत दिनो के बाद घर आते है। मम्मी ही सारा काम करती है, मालूम होता है उसे अपने पापा से बहुत शिकायत है वह उन्हे महमान समझता है।

दूसरी बच्ची पिंकी है, उससे पूछा गया कि पापा कहा है तो उत्तर मिला ड्राइगरूम म। वे अच्छे है चाकलेट लाते है और कार मे सैर भी कराते है और मम्मी वह तो क्लब जाती है मीटिंग का काम करती हैं। हम तो अपने पापा के साथ सोते है। उसके दिमाग म मा की तस्वीर बडे होने पर एक ही होगी, क्लब व मीटिंग म घूमने वाली मम्मी।

तीन वर्षीय मानू के पिता office म सुपरिन्टेडेन्ट है। मा थोडी पढी–लिखी है। मानू घर के बाहर खेल रहा था, मेरे द्वारा पूछने पर वह बोला—पापा अभी थोडे ही आते है वह पी कर आते है रात के समय और मा को खूब गालियाँ देते है व

कभी मारते भी हैं। मेरी मम्मी रोती है और कहता है तू यहां हो जा अन्यथा मैं मर जाऊँगी। बड़े होने पर मैं पापा को मारूँगा और उन्हें घर से बाहर निकाल दूंगा। इसकी निगाह में बाप एक शराबी के सिवा कुछ भी नहीं है। उसके लिये न बचपन की किलकारियाँ और न संवेदनाओं की आत्मीयता ही है। ऐसे ही बालक बड़े होने पर पूछते हैं—"हमें पैदा ही क्या किया।"

तीन वर्षीय राज के पिता आफिस में अधिकारी हैं। मम्मी स्कूल में वरिष्ठ अध्यापिका है। दादी मां उसे पालती है तथा वह इनसे हिल मिल गई है तथा कहती है कि दादी मां मुझे कहानी सुनाती है, परियों की और राजा की, मेरी गुड़िया के लिये फ्राक भी बनाती है। कागज के फूल बनाती है। उसके माता पिता के पास उठने बैठने का समय भी नहीं है तो भाग जाकर उनसे भी उसका सीमित परिचय ही रहता।

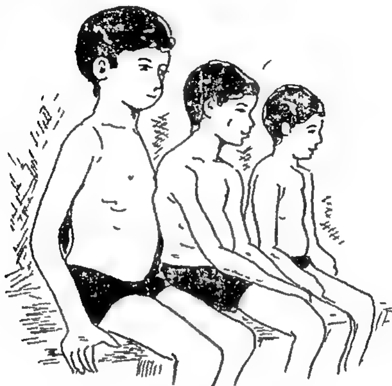
बिट्टी के पिता लेक्चरर हैं, घर में उनके चार भाई व बहिन हैं। घर का खर्च कठिनाई में चल रहा है, उनके पापा जब भी घर में आते हैं मां लड़ने झगड़ने लगती है। कई दफा बिना खाना खाए पापा सो जाते हैं। मैं बड़ी हो जाऊँगी तो पापा के लिये भोजन बनाऊँगी, मम्मी तो लड़ती रहती है, हमें उसको अपने साथ नहीं रखेंगे। बच्चे झगड़ा पसन्द नहीं करते हैं तथा वे प्यार चाहते हैं चाहे उन्हें अपने माता पिता को छोड़ना ही क्यों न पड़े।

ढाई वर्षीय मीतू के पिता आर्मी आफिसर हैं। उसने जिद पकड़ रखी थी कि उसे गुब्बारा दिया जाय। मां के मना करने पर उसने दादी से पैसा लिया और मां को कहा कि मैं दादी मां से शादी करूँगा क्योंकि उसने देखा है कि उसकी मम्मी पापा से झगड़ा कर पैसा लेती है। क्या उनका अपनी मां से कोई सरोकार नहीं। बच्चों के लिए माता पिता का समय निकालना और हर जिज्ञासा का समाधान करने के लिये धीरज की आवश्यकता है जो मशीनी युग में उनके पास नहीं है।

धवलू के माता पिता राजनीति में सक्रिय रूप से जुड़े हैं। उससे जब माता पिता के लिए पूछा गया तो उत्तर दिया—पापा हमें झिड़कते हैं बहुत से आदमियों से बातें करते हैं। मम्मी भाषण देती है मीटिंग करती है। मैं आया के पास रहता हूँ। कभी कभी गली में रहने वालों के साथ खेलता हूँ। उनके पापा मम्मी को पता ही नहीं कि गली में रहने वाले बच्चों से बुरी बुरी आदतें व गालियां सीखता है। लड़ता झगड़ता है लोगों की दुख समझकर समाधान करने वाले इन शासक लोगों के पास यह जानने का समय ही नहीं है कि उनके लाडले को माता पिता का प्यार नहीं मिल रहा है, वह गालियां व बुरी बुरी आदतें गली में रहने व खेलने वालों से

/

सीख रहा है जो भविष्य में वे ही आदतें व गालियां उनका वैसा ही चरित्र बना देगा जो एक समस्या बनकर उनके सामने आवेगी ।



[झुग्गी झोपडी व गली मे रहने वाले उपेक्षित बालक]

झुग्गी झोपडियों में व गली में घूमने वाले बच्चों का तो हाल ही कुछ और है उनमें से कुछ के तो बच्चे भीख मांगते हैं कुछ घर पर रह कर अपने छोटे भाई बहनों को खिलाते हैं जबकि उनके माता पिता मजदूरी पर जाते हैं। वे दिन भर रोते झगडते, भागते रहते है। उनके संस्कार कैसे होंगे तथा भविष्य के लिये वे समाज मे क्या बनकर निकलेंगे इसको सोचकर ही दिल कांपता है। यह कैसा समाज निर्माण हो रहा है जहां एक बच्चा अति लाड प्यार से बिगड रहा है वहीं दूसरी ओर अभाव से विकृत हो रहा है। इन दोनों में जिन किशोरों का निर्माण होगा क्या वे समाज के लिये अभिशाप नहीं होंगे। जब संस्कार ही खराब होंगे तो कोई भी सीमा बन्धन न होने पर वे विद्रोही क्यों नहीं होंगे।

□□□

बच्चो के बारे मे माता-पिता के लिए कुछ सूचनाएँ

1 जिस बच्चे की सदा खिल्ली या मजाक उड़ाया जाता है, वह बालक आगे जाकर डरपोक बन जाता है।

2 जिस बालक की सदा आलोचना की जाती है उसमे आगे जाकर तिरस्कार की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

3 जिस बालक पर अविश्वास किया जाता है, वह आगे जाकर धोखा देने वाला हो जाता है।

4 जो बालक विरोधाभास अथवा द्वन्द्व मे रहता है वह आगे जाकर झगडालू हो जाता है।

5 जिस बालक को स्नेह मिलता है, वह आगे जाकर प्रेम करना सीख जाता है।

6 जिन बालको को सदैव प्रोत्साहित किया जाता है, उसमे विश्वास की भावना उत्पन्न होती है।

7 जिस बालक को सत्यता सिखाई जाती है, उसमे न्याय की भावना विकसित होती है।

8 जिस बालक की प्रशसा की जाती है वह अभिशसा करना सीख जाता है।

9 जो बालक मिलकर अपने भाग को बाँटकर दुनिया मे साथ रहता है वह विवेकशील होता है।

10 जो बालक ज्ञान प्राप्त करने की भावना रखता है उसमे बुद्धिमानी उत्पन्न होती है।

11 जो बालक सहनशीलता के साथ रहता है उसमें बर्दाश्त करने की भावना उत्पन्न होती है।

12 जिस बालक में प्रसन्नता रहती है, उसमें प्रेम व सुन्दरता की भावना उत्पन्न होती है।

अतः अच्छे बालक के निर्माण के लिए माता पिता उपरोक्त बिन्दुओं पर ध्यान देकर उनमें अच्छे गुण उत्पन्न करने का प्रयास करें। क्योंकि यही बालक बड़ा होकर देश का निर्माण करेगा।



बालक में पिता छिपा है (Child is the father of man)

□□□

द्वतीय-सोपान

युवावस्था

आज के बालक कल के किशोर होंगे फिर युवा व देश के कर्णधार बनेंगे। इन पर ही सारे देश का भार होगा। हमारे यहाँ साधारणतः पुत्र के जन्म होने पर उत्साह व आनन्द के साथ उत्सव मनाया जाता है थालियाँ बजती हैं मिठाई बाँटी जाती है, परन्तु कन्या होने पर पूर्ण उदासी छा जाती है जैसे कुटुम्ब पर बहुत बड़ा संकट आ गया है। पुत्र के जन्म पर नयी जन्म कुण्डली बनती है परन्तु पुत्री जन्म पर यह सब नहीं होता। आज के युग में पुत्र व पुत्री, सुपुत्र व सुपुत्री समान हैं। परन्तु परम्पराओं ने पुत्री को हेय व निकृष्ट प्राणी बना दिया है। पुत्र जन्म पर माताएँ उन्हें लोरियाँ सुनाती हुई कहती हैं—मैंने तुम्हें उज्ज्वल दूध पिलाया है तुम इसे अपने सुकृत्यों से अधिक स्वच्छ बनाना। यदि पुत्र सुपुत्र है तो माता पिता और वंश के लिए कीर्तिकर है और 'पुनाति त्रायते इति पुत्रः' इस निरुक्ति का पात्र है। यदि वह सुविशेषण सम्पन्न नहीं है तब इसका विलोम पाठ करने से त्रपु (पुत्र त्रप) समान है। ऐसे पुत्र के लिये नीति शास्त्रकारों ने भर्त्सना के सबसे प्रहार लिखे हैं, एक सूक्ति है—'किं तेन जातु जातेन मातु यौवन हारिणा' उस पुत्र के उत्पन्न होने से क्या, जो केवल माता के यौवन को ही हरण करता है। क्योंकि 'सजातो येन तजातेन जाति वंश समुन्नतिः' उसी का उत्पन्न होना श्रेयस्कर है जिससे वंश की प्रतिष्ठा बढ़े। किसी कवि ने ठीक लिखा है—

कुल सपूत और दीप की गति एक कर जोय।
बारे उजियारो लगे बढ़े अंधेरो होय॥

कुपुत्र और दीपक समान गति वान है दीपक जलने पर उजाला करता है और बुझने पर अंधेरा। इसी प्रकार कुपुत्र बाल अवस्था तक अच्छा लगता है किन्तु बुरे आचरणों से बिगड़कर जब बढ़ता है जैसे जैसे बड़ा होता है अंधेरा कर देता है। इसीलिये ऐसे पुत्रों के लिये 'पुत्र समो वैरिया नास्ति' पुत्र समान बैरी और कोई नहीं ऐसे कठोर शब्दों का प्रयोग प्राचीन साहित्यकारों ने किया है। परन्तु [illegible] के लिए भी कवियों की सुभाषित वाणी मूक नहीं हुई है—

"सत्पुत्रेण कुलं, नृपेण वसुधा, पूर्णेन्दुना शर्वरी"—अच्छे पुत्र से कुल राजा से पृथ्वी और पूर्ण चन्द्रमा से रात्रि शोभायमान होती है।

मानतुंगाचार्य ने भक्तामर स्तोत्र में लिखा है—

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि, सहस्र रश्मिं
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशु जालम्॥

इस संसार में जन्म बेलाओं का अटूट क्रम लगा है प्रतिक्षण कितने प्राणी उत्पन्न होते हैं, इनकी गणना नहीं की जा सकती किन्तु भगवान् आदिनाथ की जैसी जन्मबेला और नहीं। तारे सभी दिशाओं की गोद में खेल रहे हैं किन्तु सूर्य को जन्म देने वाली दिशा पूर्व ही है।

छात्रावस्था बालकों के निर्माण की अवस्था है इसी अवस्था में वे राष्ट्र के माता पिता के, धर्म और समाज के सत्पुत्र बनते हैं। कहा भी है— "यन्न वे भाजने लग्न संस्कारो नान्यथा भवेत्" जो संस्कार कच्ची अवस्था में किए जाते हैं वे अन्त तक स्थायी रहते हैं। धारणा शक्ति भी छात्रावस्था में ही होती है। आजकल छात्र चरित्रवान नहीं होते। पहिले विद्यार्थियों का जीवन कठोर, सादा व तड़क भड़क से दूर होता था। आत्म संयम के कठोर धरातल पर उनके जीवन का प्रारम्भ होता था। आश्रमों में रहते हुए वे गुरु और उसके परिवार की सविनय सेवा करते थे। 'गुरु स्नेहो हि कामसू' गुरु का स्नेह सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करने वाला है। यह उनका दृढ़ विश्वास था। वे माता पिता और गुरु तीनों के प्रति श्रद्धालु होते थे। उनका आदर्श था मातृ देवोभव, पितृ देवोभव और आचार्य देवोभव।

भारतीय शास्त्रों में विद्यार्थी के लिये गुरु भक्ति का आदर्श है, गुरु को सर्व शक्तिमान साक्षात् ब्रह्मा माना गया है।

"गुरु ब्रह्मा, गुरु विष्णु, गुरु देवो महेश्वरः।
गुरु साक्षात् ब्रह्म तस्मै श्री गुरवेनमः॥

आज हमारे दृष्टिकोण में बुद्धि की प्रधानता हो जाने से क्रमशः भावना का लोप होता जा रहा है। फलस्वरूप पारस्परिक सम्बन्धों की पवित्रता नष्ट हो गई। प्रत्येक कर्म औपचारिकता से आवृत्त रहता है। गुरु शिष्य सम्बन्धों में भी पारस्परिक भावना एवं विश्वास का ह्रास हो रहा है। आज के युवा आधुनिकतम वेशभूषा में सजकर वाहनों में बैठकर अध्यापकों का भाषण सुनते हैं सिगरेट, पान, सिनमा, मद्य, मिथ्या चौर्य, प्रमाद आलस्य, उच्छृंखलता, अविनय ब्रह्मचर्य भंग आदि अनेक दुर्गुण उसमें बस जाते हैं। तोड़ फोड़ अविनय, अध्यापकों की दुर्दशा विश्वविद्यालय में विभागाध्यक्षों वाइस चान्सलर तक के साथ अभद्र व्यवहार करते हैं। विश्व विद्यालय के अध्यापक वर्ग भी विद्यार्थियों चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी व कर्मचारियों के

साथ गपनी माँगा की लेकर हाय हाय करत नजर ग्राते हैं। इसका कारण है वतमान शिक्षा म स धम को निकाल कर ग्राध्यात्मवाद की इतिश्री कर देना। चरित्र निमाण की शिक्षा की कहीं भी व्यवस्था नहीं है तथा छात्र व शिक्षक के बाव का सम्बन्ध साधारण रह गया। गुरुग्रो का निर्माण रुक गया, कल के उच्छृंखलता करन वाल छात्र ग्राज के गुरु बन गए ग्रौर ग्रध्यापक की गरिमा समाप्त हो गई। विद्यार्थिया की जिज्ञासा जाती रही ग्रौर ग्रध्यापको का उत्साह समाप्त हो गया। किसी कवि न कहा है—

गुर कुलाल शिष्य कुम्भ है घड घट काढत खोट।
ग्रन्दर हाथ पसार के बाहर मारत चोट॥

गुरु कुम्भकार ग्रौर शिष्य कुम्भ है। कुम्भ के निर्माण म गुरु का ही प्रयत्न है। यदि वह चाह तो उसे निर्दोष ग्रौर परिपक्व बना सकता है। ऐसा गुरु कच्ची मिट्टी स लादे को ठोक पाटकर ग्राकृतिवान बनाता है। घडत समय वह भीतर ग्रपना हाथ रखता है हाथ रखन से गुरु की कुम्भ निर्माण के प्रति वात्सल्य भावना



ग्राचार्य देवो भव

तथा सावधानी सूचित होती है। वह जो चोट मारता है तो कुम्भ की कुशलता के लिए ही। यदि कुम्भ पर जान पर वाका तिरछा या भद्दा रह गया तो बाजार म उसकी रचना पर लोग हँसेंगे, उसका कोई मूल्य नहीं रहेगा। यदि शिक्षा प्राप्त करन पर भी सस्कारा म शुचिता नहीं ग्राई चरित्र का बल नहीं मिला, लाक जीवन लाभान्वित नहीं हो सका ता वह शिक्षा निरथक है व प्रमाण पत्र केवल ...ज के टुकडे हैं।

युवा व उनकी स्थिति

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 15 से 24 वर्ष की अवस्था वालों को युवा माना है, वैसे भारत में 16 से 35 वर्ष के बीच वाली आयु के लोगों को आमतौर पर युवा स्वीकार किया है। युवजन के वार्यात्मक पक्ष को देखें तो युवा वह है जिसमें सुख का लालच कम और साहस से लगाव अधिक हो। समाज में व्याप्त पाखण्ड, भ्रष्टाचार और अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाता है, जिसके जीवन का कोई उद्देश्य हो जो विचारों के कठपरों को स्वीकार नहीं करता।

1975 में विश्व के 15 24 वर्ष की आयु के लगभग 74 करोड़ व्यक्ति थे। ऐसा अनुमान है कि सन् 2000 तक यह संख्या 118 करोड़ हो जायेगी अर्थात् विश्व भर में 60 प्रतिशत की वृद्धि। कुल जनसंख्या का पाँचवाँ भाग युवा वर्ग का है। सारी प्रगति के पश्चात् अधिकांश युवजन शिक्षा, रोजगार के अवसरों और उचित व पर्याप्त स्वास्थ्य उपचर्या से वंचित हैं। जीवन सुविधा की खोज में वे गाँव से शहर की ओर दौड़ रहे है। गाँव उजड़ रहे हैं और यह लोग शहरों में अपने को आधारहीन स्थिति में पाते हैं। युवतियों में मासिक धर्म की गड़बड़ी, खून की कमी, प्रसव और गर्भावस्था की जटिलताएँ अधिक पाई जाती हैं। गर्भपात तथा प्रसव सम्बन्धी मृत्यु दर 18 वर्ष से कम आयु की युवतियों में विशेषतः ऊँची है।

युवजनों में रतिरोग, दुर्घटना और दीर्घकालीन अपंगता एक ओर अधिक है तो दूसरी ओर दृष्टि दोष, श्रवण विकार, मनुमेह, श्वास नलिका, आदि रोग भी मिलते हैं। आज वह आधुनिकता को ललचाई नजर से देखता है तो दूसरी ओर परम्परागत समाज की रूढ़ियों को भी छोड़ नहीं पा रहा है। सिरदर्द, निराश मानसिक स्थिति, समस्याएँ व मनोविकार जो धूम्रपान मद्यपान, नशीली दवाओं का सेवन व अपराध वृत्ति के लिये उकसाता है।

आज विश्व की तीन चौथाई संख्या गाँव में रह रही है जबकि सन् 2000 तक विश्व की आधी जनसंख्या शहरों में रहने लग जायेगी। इस प्रकार गाँवों से शहरों की ओर, खेत से कारखानों की ओर झुकाव हो रहा है। परिवर्तन युवाओं के लिये एक नाजुक परिस्थिति है।

रोजगार दफ्तरों के आँकड़े बताते है कि विश्व में सबसे अधिक बेरोजगार 15 से 24 वर्ष की आयु के व्यक्ति है। सीरिया में 79 प्रतिशत, भारत में 67 प्रतिशत घाना में 60 प्रतिशत बेरोजगार हैं। युवजन की कई आवश्यकताएँ है जिनमें पोषण आहार का अभाव पुरानी व नई पीढ़ी में संघर्ष यौवन की समस्या नशीली दवाओं का सेवन, हिप्पीवाद व पाश्चात्य संस्कृति का प्रभाव आदि है। वे

अधिक परिश्रमी व कठिन काय म समर्थ बने रह इसके लिए उन्हे पर्याप्त प्रोटीन खनिज पदार्थ विशेषकर लोह तत्व एव कैल्शियम आदि आहार मिलना आवश्यक है। यह भी आवश्यक है कि उनम मानसिक तनाव कम हो इसलिए व्यायाम योगासन ध्यान की साधना का भी अभ्यास हो।

लटिन भाषा म एक शब्द है Adolescence इसका अर्थ है प्रौढ़ता का आना (To grow to maturity) यह अवस्था 18 या 20 वर्ष की उम्र म समाप्त होती है। यह कहा गया है कि Adolescence is a period through which a growing person makes transition from childhood to maturity युवक का कोई भी सम्बन्ध शरीर की दशा से नही है बूढे भी युवक हो सकते है और युवा भी बूढे यह सब मन की करामात है।

सन्तान को जन्म देकर उसका जीवन निर्माण करना अभिभावको का कर्तव्य है। जीवन निर्माण का अर्थ है—सस्कार सम्पन्न बनाना तथा शारीरिक, मानसिक एव बौद्धिक विकास मे सक्रिय योग प्रदान करना। अभिभावक का यह नैतिक कर्तव्य हो जाता है, लेकिन इसको बार बार दोहराने से यह युवक के स्वाभिमान के प्रतिकूल पडता है तथा उसम असन्तोष की भावना जन्म लेती है। आए दिन लडको द्वारा तोडफोड मारपीट के समाचार मिलते है। विश्वविद्यालय से ना जाने कितने ही युवक डिग्रिया का पुलिन्दा लिये नौकरी की तलाश म भटकते रहते है। उनका एकमात्र उद्देश्य नौकरी प्राप्त करना ही है। उनम नवीनता के प्रति आकर्षण है फिर भी उनकी मानसिक परम्परा प्राचीनता स चिपकी हुई है।

पुरानी व नवीन पीढी मे सघर्ष—इसके कारण ही समाज विकास नहीं कर पा रहा है। पुरातन के प्रति श्रद्धा व सम्मान का भाव प्रत्यक नागरिक को जन्म स ही घूँटी के रूप म पिला दिया जाता है पर अब परिस्थितियो के बदलाव स वह घूँटी ही प्रभावहीन हो गयी है। निष्क्रिय पाश्चात्य गीत, सिनेमा सस्ता साहित्य ने युवको की मानसिक चेतना को निष्क्रिय कर दिया है। उत्तेजनात्मक एव कुण्ठित भावना म हमारे युवा भटकत नजर आ रहे हैं। युवक राजनीति की कठपुतली बनता जा रहा है। आज बेटा बाप का कहना नहीं मानता। युवा होने का अर्थ है चित्त की एक जाग्रत अवस्था बूढा होने का अर्थ है चित्त की चेतनाहीन दशा। यदि शारीरिक दृष्टि से देखा जाये तो करोडो युवक मिल जायेगे परन्तु मानसिक दृष्टि स देश म युवको की कमी है। भारत हजारो वर्षों तक गुलाम रहा है इसकी वजह है यहाँ पर युवको की कमी होना। युवक वह जो जिन्दगी म क्रान्ति कर दे दूसरा व भूकना नहीं जानता हो जो जीवन को नये आयामो म ले जाना चाहता हो।

परन्तु क्रांति की आकांक्षा लेकर चलने वाला युवक है ही कहां। युवतियों का विवाह नहीं हो रहा है इसलिए कि युवक दहेज की आकांक्षा में जी रहा है। कितने युवक हैं जिन्होंने इस दहेज परम्परा को तोड़ा है। जात पांत से ऊपर उठ कर कितने युवकों ने निर्धन अभावग्रस्त व पिछड़ी जातियों में विवाह किए हैं।

युवकों में उत्साह की कमी—स्वामी रामतीर्थ पहिली दफा जब विदेश को रवाना हुये तो उनको जहाज पर एक 90 वर्ष का वृद्ध जर्मन मिला जो चीनी भाषा सीख रहा था। वे हैरत में हो गये कि इतनी उम्र में यह वृद्ध इतनी कठिन भाषा कैसे सीखेगा, जिसमें वर्णमाला के बदले चित्रमाला होती है। जानते हैं उस वृद्ध ने क्या कहा कि अभी तो सीखने में जीवन लगा रहा हूँ जब सीख चुकूंगा तब मरूंगा मरने की बातें। बूढ़े ने रामतीर्थ से उनकी 30 साल की उम्र जानकर कहा कि मुझे तो ऐसा लगता है कि भारत बूढ़ा हो गया है जहां 30 वर्ष में ही मरने के बारे में सोचा जाने लगता है। भारत हजारों वर्षों से दुख को देख रहा है। महात्मा बुद्ध ने तो जीवन को ही दुख का कारण बता दिया है। भारतवासी दुख को गले लगाए बैठे है।

सुकरात को जहर दिया जा रहा था और वह कह रहा था कि जब तक मैं जिन्दा हूँ जिन्दा रहूँगा। वह सोच रहा था कि मौत भी जिन्दगी की एक घटना है और वह उसका अनुभव करना चाहता था।

रवीन्द्रनाथ टगोर जब मर रहे थे, उनके सम्बन्धी ने कहा कि अब तो प्रार्थना कर लो कि अब दोबारा मनुष्य जीवन में न आना पड़े। उन्होंने कहा कि मैं यह प्रार्थना कर रहा हूँ कि मुझे इस रंगीन संसार में भेजा कि मैं आनन्द से मर रहा हूँ, अत: दुबारा भी मुझे इसी संसार में भेजना। मरते समय उन्होंने यह कविता लिखवायी—

'देखा तो मैं नाचने लगा"

जवानी संघर्ष से पैदा होती है संघर्ष करो सत्य के लिये, लड़ो श्रेष्ठ के लिये और यह ही अवस्था है जब समाज की कुरीतियों से भ्रष्टाचार से, बेईमानी से, जड़ता व शोषण से युवक लड़ सकता है। जवान आदमी अभी ही लड़ सकता है जब उसे अनुभव हो जायेगा तो लड़ने की इच्छा ही समाप्त हो जायगी। अनुभवी आदमी चालाक हो जाता है, उसकी लड़ाई कमजोर हो जाती है और वह अपना हित देखने लगता है।

□□□

यौन और प्रकृति

वसन्त प्रकृति का यौवन है। इसमें पुराने पत्ते झड़ते हैं और नई कोंपलें निकलती हैं। इसके प्रभाव में ही पुराने वृक्ष, लता-गुल्म पुराने बाने छोड़ नवल यौवन में निखरते और फिर फलते फूलते हैं। इसी प्रकार चराचर जगत का यौवन प्रवाह चलता है। मनुष्य भी संसार का एक प्राणी है और प्रकृति के नियमों में बँधा है परन्तु वह संसार के अन्य प्राणियों से श्रेष्ठ और बुद्धिमान है अतः प्रकृति के नियमों को अधिक सावधानी से काम में लाता है, इससे उसमें विकास की मात्रा बढ़ जाती है। विज्ञान के बल पर ही आज मनुष्य प्रकृति का अधिपति बनने का प्रयास कर रहा है। यौवन आयु का स्वर्ण काल है। यौवन में प्रकृति की उमंग स्वाभाविक रूप से उत्पन्न होकर शरीर को सक्रिय और मस्त रखती है। यौवन की इसी सक्रियता और मस्ती को मनुष्य आयु पर्यन्त अक्षुण्ण बनाए रखना चाहता है।

यौवन का आगमन—यौवन का आगमन 15 वर्ष की आयु होने पर लड़कों में और 13 वर्ष की आयु होने पर लड़कियों में होने लगता है। कन्या की आयु में 16 वर्ष तक और लड़के की आयु में 25 वर्ष तक उनमें शारीरिक परिवर्तन होते रहते हैं। इस अवस्था में प्रायः लड़के-लड़कियाँ तनिक भी संसर्ग दोष से काम सम्बन्धी चिन्तन करने लगते हैं। वे प्रकट या गुप्त रूप से ऐसी बातें सुनना या ऐसी पुस्तकें पढ़ना पसन्द करते हैं। यदि जरा भी अवसर मिला तो इसी अपरिपक्व अवस्था में विषय भोग में पड़कर अपने यौवन को नष्ट कर देते हैं। उन्हें प्रकृति के नियमों का ध्यान नहीं रहता अतः वे भरी जवानी में अपनी सारी ही यौन शक्तियाँ गवां बैठते हैं।

यौवन और स्वास्थ्य—यह आवश्यक नहीं है कि मनुष्य विषय भोगों के सुख के लिए ही यौवन को दीर्घकाल तक बनाये रखना चाहता है अपितु जीवन भर स्वस्थ रहने के लिए भी उस यौवन शक्ति की अत्यन्त आवश्यकता है। जीवन में संघर्ष कम नहीं होते। इन संघर्षों में मन, इन्द्रियाँ और शरीर आश्रित होकर निर्बल हो जाते हैं। शरीर के क्षय को रोकना, उसमें धातुओं की कमी न होने देना और उसे आरोग्य तथा दीर्घायु रखने का सर्वोत्तम उपाय यौवन तत्वों की प्राप्ति और जीवन रक्षा है।

शरीर एक बहती हुई नदी के समान है जहाँ एक ओर तो सूक्ष्म और स्थूल पदार्थ प्रवेश करते हैं और दूसरी ओर से निकल जाते हैं। इस प्रकार का जहाँ

संतुलन नहीं रहता, वहाँ शरीर में मरे हुए परमाणु एकत्र होने लगते हैं और शरीर के यौवन में विघ्न डालते हैं। यह मरे हुए परमाणु ज्यों-ज्यों शरीर में जमा होते रहते हैं त्यों-त्यों शरीर की विभिन्न सौंदर्य दर्शक रेखाएँ यौवन तत्वों से रहित होकर दूषित पदार्थों से संचित होती रहती हैं। इस प्रकार सौंदर्य घटने के साथ ही यौवन और स्वास्थ्य भी घटता जाता है।

'सौंदर्य की प्रतिमा' वाक्य सुनते ही स्त्री जाति का चित्र सामने खड़ा हो जाता है, परन्तु यह सत्य नहीं है। संसार के पशु वर्ग में पुरुष वर्ग ही स्त्री की अपेक्षा अधिक सुंदर होता है। चिड़िया की अपेक्षा चिड़ा, गायों की अपेक्षा सांड, बिल्ली और कुतिया की अपेक्षा बिलाव और कुत्ता। हिरनी की अपेक्षा नर हिरन अधिक सुंदर है। अपने रूप पर मोहित होना प्राणी का स्वभाव नहीं। सुंदर स्त्री पर कोई स्त्री मोहित नहीं होती, सुंदर पुरुष पर कोई पुरुष मोहित नहीं होते, फिर भी स्त्रियों की अपेक्षा पुरुष ही अधिक सुंदर हैं। ज्यों ज्यों आयु बढ़ती है, स्त्रियों का सौंदर्य कुम्हलाता जाता है परन्तु पुरुष वृद्धावस्था तक गठे हुए और सुंदर रह सकते हैं। बाल पक जाना, इंद्रियों का सुस्त हो जाना और शरीर पर झुर्रियाँ पड़ जाना ये तीन वृद्धावस्था के लक्षण हैं। इन तीनों लक्षणों का शरीर में उदय होना किसी खास आयु पर निर्भर नहीं करता। बहुत से युवकों के शरीर में यह लक्षण 22 वर्ष की आयु में ही प्रगट हो जाते हैं, बहुत से 60–70 वर्ष की आयु में भी तेजवान रहते हैं। इन तीनों लक्षणों को दूर करने का उपाय हृदय, मस्तिष्क व अन्य इंद्रियों के ठीक संचालन की क्रिया है। प्रसिद्ध जर्मन कवि गेटे बहुत वृद्धावस्था तक भी सशक्त और सतेज बना रहा था। एक बार उसने मित्र को लिखा था कि 'इस चरम वृद्धावस्था में भी मेरे मस्तिष्क में ऐसे ऐसे विचार उत्पन्न होते हैं, जिनके विकास के लिये दूसरे जीवन काल की आवश्यकता है।

यह यौवन पूर्ण चेतना का लक्षण है। यह एक प्रकार का हठयोग है जिसके द्वारा मानस में काम्य प्रवृत्ति को समुचित गति से तरंगित करने से जीवन का उदय होता है। स्वर्गीय बर्नार्ड शा ने एक बार कहा था "यौन विषय के सम्बन्ध में जितनी अर्थहीन बातें कही जाती हैं उतनी निरर्थक बातें किसी दूसरे के सम्बन्ध में नहीं हैं। यह सत्य है, अनिष्टकर बातें ही यौन समस्या को जटिल एवं दुराग्रह बनाती हैं। इनका मनुष्य के मस्तिष्क पर बहुत ही बुरा प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति भयग्रस्त हो जाता है। काम भावना एक शक्ति है और भौतिक विज्ञान के अनुसार शक्ति अपने तत्वों को नष्ट किए बिना ही दूसरी प्रणालियों में प्रवृत्त की जा सकती है। अतः संयम का वैज्ञानिक रूप यही है। अतः युवकों को बार बार यह सोचना चाहिये कि जननेंद्रिय में केंद्रित प्राण शक्ति सारे वायुमण्डल में फैलकर प्रत्येक अंग को पुष्ट कर रहा है, कुछ ही समय में मन में यह विचारने से युवकों का तन मन स्फूर्तिमय हो उठेगा। ☐

हिप्पीवाद

हिप्पीवाद ने युवकों को काफी भ्रमित किया है। बर्नार्ड शा ने एक किताब में लिखा है कि There are no golden rules स्वर्ण नियम यह है कि कोई भी स्वर्ण नियम नहीं है। हिप्पीवाद कोई वाद नहीं है, समस्त वादों का विरोध है। आज पश्चिम में जिन युवकों ने हिप्पियों का नाम ले रखा है उनकी पहली बगावत यह है कि "हम सीधे आदमियों की तरह जीयेंगे। न हिन्दू, न मुसलमान, न ईसाई न कम्युनिस्ट और न सोशलिस्ट होंगे। वे केवल निपट आदमी की तरह जीने की कोशिश करेंगे।"

सहज जीवन न पाखण्ड न प्रवंचना—हजारों साल की सभ्यता ने आज सब गुड़ गोबर कर दिया है। कृत्रिम व झूठा बनाने की कोशिश की है। हमारे कई मुखौटे हैं। हम जैसे दिखते हैं वैसे नहीं हैं दिल तो चाहता है कि आपका गला घोंट दें परन्तु आप मुस्करा रहे हैं। हिप्पी कहते हैं कि कुछ भी छिपाना नहीं चाहिए।

झूठी सभ्यता व झूठे अभिनय से इनकार—सब माता पिता, सम्बन्धी कह रहे हैं कि प्रेम करते हैं परन्तु आज वियतनाम, कोरिया, कश्मीर, ईरान, ईराक इत्यादि में युद्ध हो रहे हैं। अतः प्रेम कहाँ है सब तरफ घृणा है।



[हिप्पी स्वच्छन्द रूप में जल क्रीड़ा में व्यस्त]

युवकों व युवतियों को हिप्पी संस्कृति से बचाया जावे—हिप्पी ऐसी लड़कियों के साथ रह रहे हैं जिनसे वे विवाहित नहीं हैं। क्योंकि हिप्पी कहता है कि विवाह न्यायानुमोदित व्यभिचार (Legalise Prostitution) है। समाज द्वारा आदेशित "लाईसेन्स्ड वेश्यावृत्ति" है जिसमें कोई सात फेरे लेकर, कोई दफ्तर में रजिस्टर पर दस्तखत करके, कोई गिरजाघर व कोई निकाह करके विवाह का लाइसेंस प्राप्त करता है। परन्तु समाज व्यवस्था के लिए इस प्रकार के विवाह आवश्यक हैं अन्यथा उच्छृंखलता व उसके दुष्परिणाम उत्पन्न हो जायेंगे।

हमारे सामने सत्यकाम जाबाला का उदाहरण प्रस्तुत है जो उपनिषदों में वर्णित है। जब वह विद्यालय में पढ़ने आया तो उसके पिता का नाम पूछा गया, उसने माँ से पूछा, मां ने कहा कि युवावस्था में जब मैं सेवा करती थी तो कई लोगों के सम्पर्क में आयी अतः ठीक पता नहीं कौन तेरा पिता है। इसलिए जबलपुर का नाम उस पर ही रखा गया। देवदासी प्रथा भी तो दूसरे शब्दों में वेश्यावृत्ति ही है जिन कन्याओं का विवाह नहीं होता था उनके माता पिता मंदिर में देवता के साथ विवाह कर देते थे वे मंदिर में रहकर पूजा सेवा करती थीं। उनका किसी पुरुष के साथ सम्पर्क पाप नहीं समझा जाता था। इस अवस्था के जब दुष्परिणाम प्रकट हुए तो उसे कानूनन बंद कर दिया गया।

हिप्पी का अर्थ है 'भगोड़े' अर्थात् पीठ दिखाकर भाग जाने वाले। जैसे ही उन्होंने विवाह किया, बच्चे हुए, उन्हें घर बसाने व नौकरी की चिंता लग जाती है। फिर इस हिप्पीवाद का भारत में फलने का सवाल भी नहीं है क्योंकि हिप्पी दो दिन काम करके 28 दिन खाना चाहते हैं, जो भारत के गरीब लोगों के लिये सम्भव नहीं है। 28 दिन के लिये पैसा कहां से लायेगा।

गिसबर्ग जो हिप्पियों का नेता है, वह काशी आया तो उसको एक संन्यासी से मिलाने ले गये। वह संन्यासी खूब हंसा और कहा कि हम काशीवासी और यहां पर भगवान शंकर जैसे परम स्वतंत्र व्यक्ति पैदा हुए हैं। परन्तु यह समृद्धियों की बात है इसलिए आज जो भारत का युवक हिप्पियों की नकल कर रहा है, उसके भविष्य का क्या कहना जबकि उनकी जन्मभूमि अंधकार में है।

पाश्चात्य संगीत—आज का युवक सड़कों पर नृत्य करता है उसे कहते हैं Twist व अभी जो नृत्य आया है वह है Disco हमारे यहां के बड़े बूढ़े भी उसे देखकर आनन्दित होते हैं। उसकी आलोचना करते भी देखे जा सकते हैं परन्तु उनका रास्ते नहीं है। यह डिस्को आखिर क्या है? यह मनोवैज्ञानिक प्रभाव उत्पन्न करने वाला नाच है। इसमें साईकेडेलिक प्रकाश की रंगीन किरणों के बीच तेज गति का संगीत बजाया जाता है। इसमें सैक्सोफोन, इलैक्ट्रिक आर्गन इत्यादि होते हैं। इस संगीतमय चमचमाते वातावरण में अपनी मस्ती में झूमना संगीत की लय ताल के

बीच तारतम्य बिठाते हुए आवश्यकतानुसार स्टाॅपिंग और भी डाल दी जाती है। इसमें संगीत के साथ साथ कोई गीत भी गाया जाता है जो हिन्दी व अंग्रेजी दोनों में हो सकता है। जैसे "आप जैसा कोई मेरी जिन्दगी में आये।" इसमें संगीत की रचना की गई है, उसकी धुन प्रायः अफ्रीकन या अफ्रो अमरिकन धुनों की नकल होता है। एक ही पंक्ति कई बार गायी जाती है, इसके दोहराये जाने से सम्मोहन का वातावरण पैदा हो जाता है व घर परिवार के प्रतिबन्धों से उकताये हुए लोग यहां आकर जीवन की शून्यता का लुत्फ उठाते हैं। अब तो कई घरों में भी इसका आयोजन होने लगा है। उत्तेजक संगीत की धुन पर थिरकते स्त्री पुरुष तीव्र गति से नृत्य करते हैं, पांव कहीं पड़ते हैं तो सिर कहीं घूम रहा होता है तथा वे उलजलूल हरकतें करने लगते हैं। पहले इस नृत्य की शुरुआत अमेरिका में आज से 25 वर्ष पूर्व हुई। इस तरह की संस्कृति का उत्पादन हमेशा से ही अमरिका रहा है। अमरिका की राजनीति के विरुद्ध युवकों ने रात रात भर चीखकर व्यवस्था के खिलाफ अपना आक्रोश जाहिर करने के लिये इसकी शुरुआत की, इससे उन्हें मानसिक शांति भी मिली परन्तु अब तो भारत में भी इस नृत्य ने 5-7 वर्षों में ही अपनी लोकप्रियता हासिल करली। कई नगर ऐसे हैं जहां डिस्को क्लब नहीं है वहां छात्रावासों में ही डिस्को रात रातभर चलता रहता है। आदिवासी जब किसी मेले या उत्सव में भाग लेते हैं तो कभी अकेले और कभी सामूहिक रूप से स्त्री पुरुष नृत्य करते हैं, वहां रातभर गीत भी रहते हैं।

कुछ लोगों का मानना है कि फ्री सेक्स की विचारधारा का प्रतिनिधित्व भी डिस्को करता है। यह आवाज आज के युवाओं की आजादी की मशाल है। इसमें युवक ही नहीं अपितु अधेड़ उम्र के और अपने आपको अति आधुनिक समझने वाले कुछ फैशनपरस्त लोग भी इस संस्कृति से जुड़े हैं। आप किसी मित्र या रिश्तेदार के घर जायें व अपने छोटे टुनू, पप्पू से आपको नमस्ते करने के लिये भले ही न कहें, परन्तु डिस्को दिखाकर अंकल जी का मन मोह लेने के लिए अवश्य कहेंगे। युवक युवतियों से बात की जाय तो वे कहते हैं कि यह एक मीठी थकान के साथ मानसिक आराम देता है। वे नहीं जानते कि उन्हें मानसिक तनाव क्या है, परन्तु है और इसका निराकरण नृत्य मंच पर डिस्को के द्वारा होता है।

लोक नृत्य का आध्यात्मिक स्वरूप—कोई भी संस्कृति, कहीं से भी आवे, उसको रोका नहीं जा सकता। विद्यार्थी युवक व युवतियों के पास Surplus power है उसका उपयोग नहीं होता तो वे इस प्रकार के नृत्य में भाग लेकर अपने शरीर को थकाकर मन को शांति देंगे ही। इसलिए आवश्यकता है सक्रिय ध्यान को इसके स्थान पर चालू कर इसको आध्यात्मिक स्वरूप दिया जाय जिससे भारतीय संस्कृति बची भी रहे और युवकों की कुण्ठा भी तिरोहित होती रहे। इसके कुछ

सक्रिय ध्यान दिया जा रहा है जिसका प्रयोग सामूहिक रूप में युवाओं द्वारा पूर्ण नियन्त्रण के साथ किया जा सकता है। क्या भारतीय नाचनृत्य जिसमें रास, भंगड़ा, गर्बा व विभिन्न प्रान्तों के विभिन्न लोकनृत्य हजारों वर्षों से गांव गांव में नहीं हैं? अतः क्यों नहीं इन डिस्को, ट्विस्ट आदि के स्थान पर इन लोकनृत्यों का परिष्कृत व परिवर्तित रूप ग्रहण किया जाय।

जब बालक युवा होता है और वह देखता है कि जिन पर मैं पूरी तरह से विश्वास करता था, जिन्हें मैं ईश्वर तुल्य समझता था, वे वर्षों से हर तरह मुझे धोखा देते रहे हैं, तब उसके दिल में कितनी चोट पहुँचती है। इसलिए माँ बाप को चाहिए कि वे अपनी युवा सन्तानों के साथ साफ व खुले दिल से व्यवहार करें। वे इस बात का ध्यान रखें कि उनके युवा पुत्र पुत्रियों का कभी भी दिल न दुखाया जाये।

इसलिए आवश्यक है कि आज के नवयुवक को सिखाया जाय कि उसकी आत्मा में वह दिव्यता विद्यमान है जो संसार को आलोकित कर सकती है। उसके मन में यह दिव्य विचार, जमा देना चाहिये कि दयासागर परमात्मा ने उसे संसार में किसी खास उद्देश्य की पूर्ति हेतु भेजा है। उसे सम्यक धर्म की शिक्षा भी दी जानी चाहिये जिससे उसकी आत्मा का सम्मान बढ़े। उसका मानसिक व शारीरिक विकास हो और उसका जीवन दिव्यता से पूर्ण होकर सुख शांति से पूर्ण व सफल हो।

मादक दवाइयों से ग्रसित युवक

"हम ऐसी सब किताबें काबिले जब्ती समझते हैं,
जिन्हें पढ़ कर बच्चे बाप को खब्ती समझते हैं।"

अकबर इलाहाबादी का यह शेर आज कितना सच सिद्ध हो रहा है। अमरीका में पन्द्रह वर्ष से सत्रह वर्ष के बच्चों के माँ बाप, घर के वृद्ध आज बहुत परेशान हैं। उनकी किसी मांग को पूरा न करो वे अपने माँ बाप से लड़ने झगड़ने को तैयार हो जाते हैं और कई तो अपने मां बाप को पीटना शुरू कर देते हैं। कन्सास युनिवर्सिटी के स्कूल आफ मेडिसिन के चिकित्सा प्रोफेसर डा० वायले के मत से अमरीका में अस्सी लाख माँ बाप अपनी किशोर किशोरी सन्तानों द्वारा तंग किए जाते हैं या कोई तो पीटे भी जाते हैं। यह सब बच्चे ड्रग लेने लगते हैं, जैसे मेरीजुआना, कोकेन आदि और वे नशे में अपने माँ को माँ और बाप को बाप नहीं मानते हैं। अमरीका के एक तिहाई बच्चे अवैध नशे करते हैं। हर माध्यमिक हाई स्कूल के विद्यार्थियों में से एक रोज मरीजुआना लेता है जिससे उनकी स्मृति नष्ट हो जाती है। बुद्धि काम करना बन्द कर देती है। इन नशे के पदार्थों को एक बार लेने से

उसकी आदत पड जाती ह और इस लेन की वह बार बार इच्छा करता ह। वहाँ पर बीअर पीना ता आम बात है क्योंकि य इस नशे का कारण नही समझत परन्तु इसको भी पीन म यह भी बच्चा की आदत म आ जाता ह और कुछ समय पश्चात् व पियक्कड हो जात ह। वहा पर हाई स्कूल के सीनियर विद्यार्थिया म आध लडक और बीस प्रतिशत नवीं कक्षा के विद्यार्थी शराब पीत ह।

इस प्रकार के नशेबाजी का परिणाम ह, तलाक या सम्बन्ध विच्छेद जिसस वहा के परिवार टूट रह ह और उनकी उचित देख भाल करने वाला कोई नहीं रहता ह। दूसरा कारण ह, परिवार नियोजन। इसकी कृपा स एक या दो बच्चे परिवार म होत ह। अधिकतर एक ही बच्चा होता ह जो बहुत ज्यादा लाड-प्यार, नाज नखरा म पलता ह। जब वह बाहर की क्रूर दुनिया देखता है तो वह भी आतकवादी हो जाता ह और स्कूलो म या अडोस पडोस म बुरी सगत मिलत ही घर म ही अध काल क कारण जिसका मार रहा ह उसका उसको कोई पता नहा रहता है। अमरीका और यहा तक अब तो इगलेण्ड म भी मातृत्व, वात्सल्य आदि मूल्य बडे पुरान दकियानूसी, मध्ययुगीन, नई दुनिया के अयोग्य बताए जात ह। अमरीका तथा रूस म अनिवार्य शिक्षा ह इसके कारण वहाँ की सरकारें इन युवकों को कहीं भी भेज सकती है। जब य तरुण सेना स वापस लौटत ह तो अपन आपको व्यर्थ असबद्ध आदर्शविहीन मशीन के पुर्जे की तरह सकल्पविहीन अनुभव करते हैं। उनकी मानसिक पूर्ति लूटपाट, चोरी, बलात्कार आदि असामाजिक कार्यों म होती ह। वहा का हर फैशन हर मैगजीन और भाषा की नई शैली हमार देश भारत म आयातित होती ह तथा यहा क युवक युवतिया द्वारा इसकी अ धी नकल की जाती ह जिसम हमार देश की संस्कृति तथा मर्यादा का तहस नहस करन म पूरा सहयोग दिया है। भारत म एस विदेशी युवक युवतियाँ स्वत त्र कहीं भी अद्ध नग्न स्थिति म देखन को मिल सकते है। दीघगज पुष्कर, गोवा आदि स्थल मानो इनके क स्थल ही बन गय ह। हमारे देश भारत का युवक भी नशेबाजी, लूटपाट, हत्या चोर बाजारी आदि दुर्व्यसनों म लिप्त होकर अपन चरित्र का हनन कर रहा ह।

युवकों मे नशे की कुप्रवृति—एल एस डी और मैस्कलीन य दोनों चीजें मनुष्य को चेतना के नये दर्शन करान म कुछ समय के लिय सफल हो सकता है। जब एक आदमी एल एस डी की टिकिया लेता है तो कई घटों के लिये उसकी दुनिया बदल जाती ह। प्रकृति उसके लिये रंगीन हो जाती ह थोडी देर क लिए जगत और ढग का दिखाई पडने लगता ह। एल एस डी और मैस्कलीन जिन्होंने लिया तो उनको ख्याल आया कि हमारे ऋषियों का देवी देवता जमीन पर चलते हुए नजर आते थ। सम्भवत उस समय का सामरस भी इन जगा ही होगा। भाग व गांजा स थोडा hang over है, अधिक नहीं। अगर एक आदमी 30 दिन उपवास कर ता उस भी समानान्तर प्रभाव होगा व भी वैस उसी क समान हो होगा। ध्यान

में जो श्वास लिया जाता है उसमें भी आक्सीजन की मात्रा में अंतर पड़ना प्रारम्भ हो जाता है, परन्तु इस ड्रग लेने के पश्चात शरीर व स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। हिप्पीज ने दो शब्द दिये हैं 'Turning on' यानी एक मोड़ है जो एक गाली टिकिया देने से खुल जाता है दूसरा है। Turning off" जहाँ हम है, जिस प्रकार का जीवन हम जी रहे हैं वहाँ से यही और मुड़ जाना, जिसका हमें पता नहीं है। एल्डस हक्सले ने एक पुस्तक लिखी है "Doors of perceptions' उसमें उसने लिखा है कि कबीर और नानक जो कह रहे हैं कि अनहद नाद बज रहा है, अमृत की वर्षा हो रही है आकाश में बादल ही बादल घिर रहे और कबीर नाच रहे हैं, यह शायद ऐसा अनुभव था जो उनको ध्यान की मस्ती में अनुभव हुआ होगा जो एल एस डी लेने पर भी ऐसी ही ध्वनियाँ प्रारम्भ हो जाती हैं व मन हल्का और नया हो जाता है। साईकिलिक ड्रग्स से निश्चय ही रासायनिक तत्वों के द्वारा ऐसी झलक पाई जा सकती है, लेकिन अनेक अवस्था नहीं है। आदमी जैसा इसमें पहिले था, वैसा ही रह जाता है। महावीर बुद्ध, कबीर, नानक की जो अवस्था है वह सत्य की, ब्रह्म की, आत्मा की, मोक्ष की निर्वाण की प्रतीति है। उसके बाद आदमी दूसरा आदमी है पहिला आदमी नहीं है। यह अवस्था है झलक नहीं। शराबी सदा यह समझता है कि नशे में वह आनन्द में है, यह भ्रम है परन्तु उसके पश्चात की दशा उससे भी बुरी हो जाती है। हिप्पी एक प्रतिक्रिया है विद्रोह नहीं है। विद्रोह का मूल्य है। प्रतिक्रिया का नहीं। प्रतिक्रिया स्थायी नहीं होती सिर्फ संक्रमण की बात होती है। विद्रोह विवेक है और प्रतिक्रिया अविवेक है। एक विद्रोही आदमी इसलिए नहीं, नहीं कहता है कि नहीं कहना चाहिये, वह इसलिए यह कहता है कि नहीं कहना उचित है। यदि उसे लगता है कि हाँ कहना उचित है तो हजारों नहीं करने वालों के बीच में वह हाँ कहेगा। दर्शन के विरोध में खड़े होने से कोई कठिनाई नहीं है क्योंकि एक दर्शन का विरोध होगा तो दूसरा दर्शन खड़ा हो जायेगा। हिप्पियों ने भी अपने नियम बना लिये हैं, कितने बड़े बाल, कितनी छोटी हाफ पैंट, कितना छोटा ब्लाउज, कैसी माला, क्या यह सब व्यवस्था नहीं है इसलिए यह भी दर्शन हो गया तथा इसका विरोध भी दूसरा दर्शन करेगा। दर्शन से ऊपर चले जाना तो रहस्यवादियों के लिये ही सम्भव है मन के पार जाना जहाँ मैं नहीं है, सन्त के लिये ही सम्भव है।

हिप्पियों को इस बात से यह आभास हो रहा है कि मनुष्य आज के जीवन व इसकी व्यवस्था से ऊब गया है। उसका चेहरा डुप्लीकेट हो गया है, बाहर कुछ और है। जैसे वह जंगली आदमियों या Trial समाज का जैसा जीवन जीना चाहता है जिसमें दिखावा नहीं छल नहीं, कपट नहीं प्राकृतिक अवस्था है। बाह्य विस्तार बहुत हो गया है। अब आन्तरिक अवस्था की चेतना का आदमी प्यासा रहा है। जितनी सभ्यता का विकास होता जायगा उतना ही शान्ति की प्यास में आदमी

जायेगा। सभ्यता की चरम सीमा पर ही आदमी व्यवस्था के प्रति विद्रोह कर देगा, अत नैतिकता के लिये चेतना की खोज आवश्यक है।

किशोरावस्था की समस्यायें व उनका निराकरण

किशोरावस्था मे धार्मिक अविश्वास—

किशोरावस्था ... किसी एक एम विषय को ढूँढता है जिसके प्रति वह अपने हृदय की समस्त निष्ठा को ऊँचा ला सके, उसकी पूजा कर सके। अत यहा से किशोर परार्थ की भावना का प्रारम्भ होता है। निमरता की भावना किशोर को धार्मिक सिद्धान्तो को ग्रहण करने के लिये प्रेरित करना है। उसमे धार्मिक चेतना आ जाती है और धर्म म उसकी रुचि बढ जाती है। धर्म म रुचि उत्तर बाल्यावस्था से प्रारम्भ हो जाती है। इसका मूल जीवन के बहुमुखी ज्ञान से परिचित होना होता है। यह प्रवृति किशोरावस्था म आकर और अधिक विकसित हो जाती है। इस अवस्था म किशोर मे धर्म के प्रति अविश्वास उत्पन्न होता है और वह अपनी सभी नैतिक समस्याओ का समाधान नही कर पाता तथा उन वयोवृद्ध लोगो के आदर्शों से भी उसका मेल नही खाता। जो धर्म का प्रतिपादन करते है। इस वय म धर्म के प्रति अविश्वास विज्ञान के अध्ययन म भी उत्पन्न होता है जो धर्म के अन्धविश्वासो व अवधानिक कार्यों का खण्डन करती है। अत इस समय यह पावन कर्त म हो जाता है कि बालको म धार्मिक भावना एव अविश्वास की प्रवृति का समुचित समन्वय कर। धर्म व विज्ञान दोनो की उपयोगिता को समझाया जाये तथा प्रति वादी दृष्टिकोण से उन्हे सन्त बचाया जाये।

एक तरफ रूढिया परम्पराये व अन्धविश्वास है तो दूसरी ओर नव जागरण व चेतना की विचारणी है। हम पुराने सिद्धान्तो की कटु आलोचना करते है, उनमे बुराइया है दोष है जो हमारे समाज की उन्नति मे बाधक हैं। पर नये सिद्धान्तो व आदर्शों को हम ग्रहण नही कर पाये है। उनमे आस्था रखने हुये भी हम अपने व्याव हारिक जीवन म उतार नही पाये है। इसका परिणाम हमारे नवयुवको पर बहुत बुरा पडता है। उनके मस्तिष्क म सघर्ष है अन्तर्द्वन्द्व है। व नये विचारो के हामी है तथा पुराने विचारो से तादात्म्य स्थापित करने के लिये उनमे मानसिक द्वन्द्व का होना सहज ही है क्योकि उनके नवीन चेतना जनित कार्यो को समाज स्वीकृति नहीं देता।

किशोर व किशोरियो को अधिक मिलन जुलन उनको सामूहिक एव सहकारी रूप म समाजिक कार्यों म भाग लेने की सुविधा प्रदान की जाय। जब एक दूसरे के प्रति आकर्षण स्वाभाविक है तो उनके सम्पर्क के अभाव म जनित समस्याओ का उनके समाजिक सम्पर्क स्थापित करने म ही होना है। किशोरावस्था म ... सम्बन्धी ... उपयोगी है। उसम किशोर ... सम्बन्धी

जिज्ञासा की पूर्ति होती है। वह अधकार म नहीं भटकना है। जिस प्रकार एक डाक्टरी के परीक्षार्थी को स्त्री शरीर सम्बन्धी समस्त जानकारी दी जाती है उसी प्रकार किशोरों को भी इस सम्बन्ध म प्रौढ विद्वानों द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिए जिसस सबस सम्बन्धी जिज्ञासा का समाधान हो।

यौन शिक्षा और सन्तति नियमन

काम शास्त्र या यौन विज्ञान भारत का प्राचीन शास्त्र है। प्राचीन भारत म अन्य शास्त्रों के साथ साथ इस शास्त्र का पठन पाठन किया जाता था। वात्स्यायन के कामसूत्र के अध्ययन म ज्ञात होता है कि प्राचीन भारत म युवकों की भाँति ही युवतियों को भी काम शास्त्र का अध्ययन व ज्ञान कराया जाता था। विश्व साहित्य मे प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद म भी काम के अलौकिक महत्त्व का प्रतिपादन किया



[छोटा परिवार सुखी परिवार]

है। सतति नियमन का 'काम या यौन स निकट का सम्बन्ध है, अत इस विज्ञान की उपेक्षा नही की जा सकती। भारतीय परम्परा म कर्म व पुनर्जन्म म दृढ विश्वास किया जाता है। मनुष्य जन्म को बहुत ही दुलभ माना जाता है। जीव चौरासी

योनियों में भ्रमण करता हुआ मनुष्य जन्म पाता है। यदि वह मनुष्य-जन्म में भी सत्कर्म नहीं करता तो वह पुनः ढोर, शूकर योनि में पहुँच जाता है। जैन धर्मावलम्बी यह मानते हैं कि जीवों की संख्या यदि आज समस्त पृथ्वी पर दस खरब है तो वह दस खरब ही रहेगी। जीवों की समस्त योनियों की संख्या जोड़ने से उसकी संख्या में कोई अन्तर नहीं पड़ेगा। भौतिक उन्नति के कारण पाप कर्म बढ़ जाने से मनुष्य का पुनः मानव योनि में आना कम होता जा रहा है। इसलिए जितनी भौतिकता में उन्नति होगी, उतनी ही मानव योनि में जन्म लेने के द्वार बन्द हो जायेंगे परन्तु औद्योगिक विकास के कारण पर्यावरण प्रदूषित हो रहा है जिसमें जल व थल में जन्मे अनेकानेक जीवों का नाश हो रहा है। वायु प्रदूषण से मनुष्य जैसे तैसे अपना जीवन खींच रहा है पर अन्य वायुचर नष्ट होते जा रहे हैं। इन जीवों की अकाल मृत्यु से एक तो योनि धारण का काल घट रहा है जिसमें यह छलांग लगाकर मनुष्य योनि में प्रवेश कर रहे हैं जिससे अर्द्ध विकसित या निम्न विकसित ही मानवों की जनसंख्या बढ़ रही है जो समाज के लिये अहितकर है। गत वर्षों में इतनी अभूतपूर्व उन्नति का कारण सृष्टि की स्पन्दनशीलता, आरोह, अवरोह या संकोच विकास के सिद्धान्त के अन्तर्गत भी हो सकता है। यह युग चूँकि विकास का है अतः इसमें जनसंख्या में वृद्धि होगी तो ह्रास काल में इसमें कमी आयेगी। लहर का भी यही तरीका है। कभी यह ऊँची उठती है फिर नीचे गिरती है यह ही क्रम चलता रहता है।

दशावतार का जो सिद्धान्त है उसके अनुसार विकास का एक युग लगभग साढ़े तीन हजार वर्षों का आंका गया है। दशावतार की पौराणिक गाथाएँ जीवन विकास की सीढ़ियों के रूप में हैं। उसका पहिला जीव 'मत्स्यावतार' जीव के स्फुरण का द्योतक है। फिर शनैः शनैः जीव विकास कर सिंह रूप में अर्द्ध पशु व अर्द्ध मानव के रूप में पहुँचता है। राम व कृष्ण अवतार हुए जो मानव विकास के प्रबल प्रतीक होते हैं। पृथ्वी जब एक नये अवतार के माध्यम से एक चरण आगे बढ़ती है तो जीवन में एक उत्स उत्थान आता है तथा अचानक ही मानव संख्या में वृद्धि होती है। पूर्व अवतार काल में उनके सम्पर्क में जो भी जीव जन्तु चर अचर आते हैं अगले अवतरण काल में यह सब विकास की चरम सीमा पर पहुँच कर नये नये जन्म ले कर भिन्न भिन्न रूपों में प्रकट होते हैं। जनसंख्या की अतिवृद्धि होने पर युगपुरुष के आने की प्रबल सम्भावना हो जाती है इसलिए अब नरसी अवतार की बाट देखी जा रही है।

आज का समाज युवक युवतियों को बिना ज्ञान विज्ञान की उचित तथा पर्याप्त शिक्षा दिए ही उनको दाम्पत्य जीवन में बांधकर आ परिवार में भाग उठाने के लिए छोड़ देता है। इस अज्ञानता के कारण आज का युवा वर्ग अपने हृदय में

उठने वाली यौन लालसाओं को अस्वाभाविक अनुचित तथा कृत्रिम मार्गों में अभिव्यक्त करने लगता है। इससे वह अस्वाभाविक मैथुन तथा अन्य यौन कुटेवों का शिकार हो जाता है। आज के प्रत्येक युवक तथा युवती को यौन मनोविज्ञान, तथा कामशास्त्र तथा संतति नियमन का पूर्ण ज्ञान कराना आवश्यक है। धर्म और नैतिकता की दुहाई देकर यौनविज्ञान तथा संतति नियन्त्रण के प्रति मौन रहकर सामाजिक समस्याओं का समाधान नहीं वरन उसकी जटिलता को ही बढ़ाया जा सकता है। अतः आज के परिप्रेक्ष्य में यौन शिक्षा की अत्यन्त आवश्यकता है। इसके सदुपयोग से मानव का सब ही दृष्टि से समुचित विकास होगा।

प्रकृति ने निरन्तर मृत्यु व जन्म को संतुलित रखा था। प्राचीनकाल में दस आदमी जन्मते थे, तो सात या आठ जन्म के पश्चात् मर जाते थे। पहले इतनी आबादी नहीं बढ़ी कि भोजन की कमी पड़ जाय मकानों की कमी पड़ जाय। आज स्थिति बिल्कुल उलटी हो गई है। आज विज्ञान की खोज व आधुनिक उपचार विज्ञान (Medical Science) ने इतनी उन्नति कर ली है कि आज दस बच्चे पैदा होते हैं तो उनमें से एक बच्चा ही मर पाता है। अकाल महामारी प्लेग हैजा मलेरिया, चेचक सब पर नियन्त्रण कर लिया गया। हमने मृत्यु के बहुत से द्वार बन्द कर दिये और जन्म के द्वार सब खोल दिए। परिणाम यह हुआ कि मृत्यु जन्म के बीच जो सन्तुलन था, वह समाप्त हो गया।

भारतवर्ष की जनसंख्या इस समय 1986 में 74 करोड़ है। दस वर्ष पश्चात् यदि यही वृद्धि की गति रही तो जनसंख्या 95 करोड़ हो जायगी। पृथ्वी के नीचे पहाड़ी कंदराओं में छिपे हुए समुद्र की सतह में खोजे गए बहुत से ऐसे पशुओं के अस्थि पंजर मिले हैं जिनका अब कोई नामोनिशान नहीं है। आज से दस लाख साल पहले पृथ्वी पर बहुत से ऐसे प्राणी थे जो हाथी से भी पांच व दस गुणे बड़े थे। उनका छोटा प्रतिनिधि केवल मात्र एक छिपकली रह गया है। वे इतने अधिक बढ़ गए कि उनके लिये भोजन, पानी, स्थान कम पड़ गए। इसलिए उनका आमूल नष्ट हो जाना पड़ा। यदि जनसंख्या इस ही गति से बढ़ती रही तो न हमें सभा करने की आवश्यकता रहेगी, न मेला की। सब स्थान मानव से भरे होंगे।

यदि हम 100 बन्दरों को कठघरे में बन्द कर दें तो वे विक्षिप्त हो जाएँगे। इसी प्रकार आज बड़े बड़े नगरों में छोटे छोटे कमरों में 10 से 15 तक आदमी रहते हैं व आज पागल नहीं हो रहे हैं तो कल पागल होना प्रारम्भ कर देंगे। मनुष्य को घूमने के लिए खुला व अकेला स्थान चाहिए। वह नहीं मिलेगा तो क्या होगा, कविता संगीत चित्र, प्रार्थना प्रेम ध्यान सब एकान्त में हुए हैं व फूले फले हैं। जनसंख्या जितनी बढ़ी है व्यक्तित्व उतना ही कम हो जाता है। भीड़ द्वारा ही मन्दिर, मस्जिद तोड़े गए हैं। हत्याएँ बलात्कार तोड़ फोड़ सब भीड़ द्वारा ही किए गए हैं। यदि भीड़

नारे लगाती है तो आप भी नारे लगाते हैं। जब भीड़ तेज चलती है तो आप भी तेज चलते हैं। भीड़ समागम है वह युद्ध भी करवा सेती है। इससे व्यक्तित्व खत्म हो जायगा। हो सकता है कि हम समुद्र से भोजन निकाल सकें, मिट्टी में भी खाना निकाला जा सके सिर्फ गालियां खाकर ही जी सकें। परन्तु आज जो लोग पागल हो रहे हैं वे भीड़ के दबाव को नहीं सह पा रहे हैं, मन दबाव को सहन नहीं कर पा रहा है अतः इस दबाव से मुक्त होने का प्रश्न है। 1947 में भारत और पाकिस्तान की मिलकर जो जनसंख्या थी, आज अकेले भारत की उससे कहीं ज्यादा है। आज जन्म दर 1000 में 34 है तथा भारत सरकार का यह प्रयास है कि यह घट कर 21 हो। परन्तु इसमें कई अड़चनें हैं। वे हैं 'गरीबी और अशिक्षा। गरीब के पास मनोरंजन का एक ही साधन है यौन, (Sex)। यदि इसे भी बन्द कर दिया जावे तो वह मर ही जायेगा। यदि वह सिनेमा देखे, टलीविजन देखे, किताबें पढ़े, संगीत सुने व नाचे गावे तो रुपया खर्च होता है, वह रुपया वह कहाँ से लावे? लोग ब्रह्मचर्य की बात करते हैं। गरीब समाज के लिए ब्रह्मचर्य की बात व्यर्थ है। परमात्मा की खोज में कोई चला जावे तो ब्रह्मचर्य को उपलब्ध हो सकता है परन्तु ब्रह्मचर्य से कोई परमात्मा की तरफ नहीं जाता। यौन (Sex) की वृत्ति से मुक्त हुआ जा सकता है अगर यौन से निकलने वाली शक्ति को किसी और दिशा में प्रवाहित कर दिया जावे।

एक वैज्ञानिक, एक चित्रकार एक संगीतज्ञ, एक कवि, एक कलाकार, एक मजदूर बिना ब्रह्मचर्य के यौवन से मुक्त हो सकता है क्योंकि उसकी सारी शक्ति सारी यौन की ऊर्जा एक लक्ष्य की ओर लग जाती है। उसकी सारी शक्तियां इतनी लीन हो जाती है कि उसके पास यौन की दिशा में सोचने के लिये न शक्ति का बहाव बचता है न ही आकांक्षा। ब्रह्मचर्य की बात आज के इस युग में अवज्ञानिक और अव्यावहारिक है। कृत्रिम साधन जो परिवार कल्याण के अन्तर्गत सुझाए जाते हैं यदि उनका उपयोग किया जावे तो मानव बिना किसी चित पर दबाव दिए जन्म से बचा जा सकता है।

पुरुषोत्तमदास टंडन ने जब खजुराहो व कोणार्क में युगल प्रेम में लिप्त मूर्तियां को देखा तो उन्होंने कहा कि इन पर मिट्टी पोत कर बन्द कर दिया जावे। परन्तु क्या इन पर मिट्टी पोतने से मनुष्य इस गन्दगी से मुक्त हो सकता है। खजुराहो दर्शन के लिये जो भी यात्री जाता है वह इन युगल क्रीड़ा में लिप्त मूर्तियां को देखे बिना नहीं रह सकता क्योंकि उनके भीतर बैठी जिज्ञासा व काम प्रवृत्ति को तो वे नहीं ढंका सकते है।

सेक्स (यौन) को आज तक स्वीकार नहीं किया गया। जिससे जीवन का जन्म होता है, जिससे जीवन के बीज फूटते हैं जिससे जीवन में फूल खिलते हैं

जिससे जीवन का सारा नृत्य है उस मौलिक प्रवृत्ति को अस्वीकार कर दिया गया है। क्या यह मानव मात्र में ही है। फूल हो, पशु पक्षी हो, बीज हो, पौधे हो इन सब में सक्स है। आपका मन विपरीत सेक्स का दर्श कर ही आकर्षित नहीं होता है। फूल, पौधे व प्रत्येक सुन्दर वस्तु को देखकर मन आकर्षित होता है क्योंकि आपके मन में भीतर छिपा हुआ प्रेम (Love) है सेक्स है।

जो लोग आदमी को दमन के द्वारा, वर्जना के द्वारा नैतिक बनाने का प्रयास कर रहे है, वे भूल कर रहे हैं। उनका कहना है कि फिल्मों मे नग्न तस्वीर नहीं होनी चाहिए, पोस्टर अश्लील नहीं होने चाहिए चुम्बन कितना लिया जावे इन पर सरकार नियन्त्रण करे। फिर भी पोस्टर अश्लील होते जा रहे हैं। माता पिता, पुत्र व पुत्री सब एक साथ बैठकर 'चित्रहार' में युगल प्रेम व युगल नृत्य देख रहे हैं, अश्लील पुस्तकें धड़ाधड़ बिक रही हैं और उनको धार्मिक पुस्तकों के सुन्दर रंग कर छुपकर पढ़ा जा रहा है। स्त्रियों के अर्द्धनग्न चित्र छपी हुई फिल्मी पत्रिकाएँ धड़ाधड़ बिक रही हैं क्यू फिल्म देखी जा रही हैं। होटलों में क्या कुछ नहीं हो रहा है जिसमें युवक व युवतियां छिपकर भाग न रहे हैं। आखिर ऐसा क्या होता है ? इसलिये कि बुनियाद में आदमी की मांग है कि अश्लील पोस्टर लगें अश्लील फिल्म बने, जितना अश्लीलता का प्रचार किया जावेगा उतनी ही सिनेमा में भीड़ अधिक होगी। House full का बोर्ड लगा होगा। जितनी इसकी वर्जना की जायगी जितना सेक्स पर रोक लगायी जावेगी उतना ही आज का नवयुवक और भी कामुक से कामुक होता चला जायगा।

इटली देश के सच्चे देश भक्त मैजिनी का कथन है कि देश का भविष्य उसके नवयुवकों पर ही निर्भर है। जिस देश के नवयुवक बलहीन और अशक्त होते हैं वह देश कभी भी उन्नति नहीं कर सकता। कारण तो अनेक हो सकते हैं परन्तु एक कारण यह भी है कि हमारे देश के नवयुवक यौवन विज्ञान (Sex) सम्बन्धी बातों से नितान्त अनभिज्ञ हैं। शारीरिक और मानसिक उत्थान के लिये कुछ विशेष शारीरिक और मानसिक नियमों का जानना बहुत आवश्यक है। हमारे कुछ अंग प्रत्यंग ऐसे हैं जिनको अनुचित रूप से व्यवहार किए जाने की अधिक संभावना है और वे हमारी जनेन्द्रियाँ हैं। यौवन के पूर्व किशोरावस्था में ही कामोद्रेक उत्पन्न होना आरम्भ हो जाता है। परन्तु जिनको अज्ञान के कारण इस अवस्था का पर्याप्त ज्ञान नहीं होता वे जीवन में अनेक आपत्तियों में पड़ जाते हैं। भारतवर्ष में यौन संबंधी बातें नवयुवक व नवयुवतियों से छिपाकर रखी जाती हैं। यदि वे जानना भी चाहते हैं तो उनके माता पिता शिक्षक या दूसरे अभिभावक इत्यादि गलत प्रकार के बहाने बनाकर टाल देते हैं क्योंकि यौन सम्बन्धी बात बताना भारतवर्ष में अश्लील समझा जाता है।



विदेशों में जो भारतीय घूमकर आए हैं उनका कहना है कि होटलों व कक्षों में इस प्रकार की फिल्म दिखाई जाती हैं जिनमें जननेंद्रिया का पूरा ज्ञान दिया जाता है। फिल्म ही नहीं प्रत्यक्ष में दिखाया जाता है कि जननेंद्रिया का क्या उपयोग है। जैसे एक बाजीगर बाजार में खड़े होकर कई प्रकार के दृश्य दिखाता है ऐसे ही वहाँ पर कई दृश्य दिखाए जाते हैं जिनका उल्लेख यहाँ पर करना समीचीन नहीं होगा।

डॉ. एम. के. एक्सर ने एक प्रश्न एक हजार नवयुवकों से पूछा कि उन लोगों को जनेन्द्रिय सम्बन्धी ज्ञान पहले पहल कहाँ से मिला। 674 युवकों से उत्तर मिला। 617 में से 544 युवकों को यह ज्ञान अपने मित्रों से प्राप्त हुआ। 33 को कुसंगति से और शेष को कहानियों, उपन्यासों, सिनेमा तथा दूसरे लोगों की बातचीत से यह ज्ञान प्राप्त हुआ। 37 नवयुवकों को यह शिक्षा पहले पहल अपने माता पिता तथा दूसरे निकट सम्बन्धियों से मिली। 14 नवयुवकों को अपने सगे भाइयों में 3 को अध्यापकों से और शेष तीन को व्याख्यानों में यह शिक्षा मिली। इससे यह ज्ञात हुआ कि 91.5 प्रतिशत नवयुवकों को यौन सम्बन्धी विषय का ज्ञान पहले पहल अपने मित्रों और कुसंगति से मिला। इससे यह निष्कर्ष निकला कि इसको कितना ही छिपाया जाय यह ज्ञान कहीं न कहीं से अवश्य प्राप्त कर लेते हैं। कुसंगति या बुरे मित्रों से गलत तरीके से ज्ञान लेने पर वे अपना जीवन नष्ट कर लेते हैं जिससे समाज और देश दोनों की हानि होती है।

जब घर में कोई बच्चा पैदा होता है तो घर के छोटे छोटे बालक यह अवश्य पूछते हैं कि यह बच्चा कैसे पैदा हुआ और कहाँ से आया। ऐसे समय उसकी शंका समाधान करने के स्थान पर उसे बुरी तरह से ताड़ना मिलती है। तो वह समझता है कि इसमें कुछ रहस्य है। रहस्य जानने की जिज्ञासा होती है तो अपनी जिज्ञासा शान्त करने के लिए प्रयत्न करता है तथा बुरी संगत में पड़ता है। अतः अध्यापकों का दायित्व है कि वे देश, समय, स्थान तथा बालकों की अवस्था के अनुसार जिस प्रकार से उचित समझें, इस विषय की शिक्षा दें।

मान लो एक घर में एक कुतिया के अतिरिक्त दूसरे दिन ही बहुत से छोटे छोटे पिल्ले दिखलाई पड़ते हैं जो कुतिया के स्तन से मुँह लगाए हुए उसका दूध पी रहे हैं तो बालकों के आश्चर्य की सीमा नहीं रहेगी। वह इस सम्बन्ध में प्रश्न अवश्य करेगा। यदि इसको इस प्रश्न का उत्तर ठीक ठीक न दिया गया तो वह प्रश्न को सन्तुष्ट करने के लिए इस प्रश्न के उत्तर की आशा दूसरे लोगों से अवश्य करेगा। एक बालक ने अपनी गर्भवती माता से पूछा अम्मा तुम्हारा पेट क्यों फूला है। माता ने बच्चे को फुसलाने के लिए कह दिया कि उसे एक रोग हो गया है। पिताजी से पूछने पर उन्होंने उसे डांट कर बाहर निकाल दिया। जब बच्चा उत्पन्न हो गया तो उसकी जिज्ञासा यह कह कर शान्त कर दी गई कि ईश्वर ने बच्चा ला कर यहाँ

गोद मे सुला दिया। परन्तु इसमे उस बालक की जिज्ञासा शान्त नही हुई। यदि इस बालक को पेट फूलने का कारण सरल भाषा मे वनस्पति जगत तथा पशु पक्षी का उदाहरण देकर समझा दिया जाता तो अच्छा होता।

हमारे पुरखे, हजारो साल की पीढियाँ, इस यौन ज्ञान को देने मे भयभीत रही है। आवश्यकता है इसे समझने की, युवको को समझाने की। क्या है इसकी यत्र रचना (Mechanism), क्या है उसकी आकाक्षा, क्या है प्यास, क्या है उसके भीतर छिपा हुआ भेद। जितना युवक इसको समझेगा उतना ही स्वस्थ हो जायगा, सेक्स से छुटकारा पा जायेगा।

जब एक दूसरे के प्रति आकर्षण स्वाभाविक है तो उनके सम्पर्क के अभाव से जनित समस्याओ का समाधान उनके सामाजिक सम्पर्क स्थापित करने से ही होता है। किशोरावस्था मे काम सम्बन्धी शिक्षण भी परम उपयोगी है। उससे किशोर की काम सम्बन्धी जिज्ञासा की पूर्ति होती है। वह अन्यत्र प्रकार से नही भटकता है। जिस प्रकार एक डाक्टरी के परीक्षार्थी को स्त्री शरीर सम्बन्धी समस्त जानकारी दी जाती है उसी प्रकार किशोरो को भी इस सम्बन्ध मे प्रौढ व विद्वानो द्वारा शिक्षा दी जानी चाहिये जिससे सैक्स सम्बन्धी कुण्ठा व जिज्ञासा समाप्त हो।

नशीले पदार्थों का कुसेवन—धनाढ्य व सम्पन्न व्यक्तियो के किशोर बोरियत बोरियत चिल्लाते हैं। इस निर्मित बोरियत को तोडने के लिये वे बहुत सारे समाज विरोधी कार्यों मे लग जाते हैं, उनकी यह भावना हो जाती है कि ऐसा काम करें जिनसे उन्हे थ्रिल, मिले इस प्रकार के किशोरो मे शक्ति के अतिरिक्त उनमे सरप्लस शक्ति होती है उसका उपयोग नही होने पर वे बोर होते है और बोरियत तोडने के लिये वे नशीली दवाइयो का प्रयोग करने लगते है।

पिछले एक दशक से नशीले पदार्थो का जितना उपयोग बढा है उससे ऐसा लगता है कि धीरे-धीरे आध्यात्मवाद का विश्व गुरु कहलाने वाला देश नशीली वस्तुओ के द्वारा ह्रास की चरमसीमा तक पहुँचने वाला पूर्वी देशो मे सबसे पहला और बडा देश होगा।

नशीले पदार्थों मे हैरोइन, पथेडीन, मार्फिन, अफीम मैंड्रिक्स, कोकीन आदि विशेष रूप से युवा पीढी मे अपनी जड जमाने मे सफल हुए हैं। अब इसमे स्मैक नाम और बढ गया है। वास्तव मे स्मैक अब नशीली वस्तुओ का सामूहिक नाम है। विश्व के बडे बडे देश इसी स्मैक के अपराधीकरण से चिंतित है। नशीले पदार्थों के द्वारा लाखो और करोडो की तस्करी करते है। इस तस्करी मे भारतीय अपराधवृत्ति के लोग भी कम सख्या मे नहा है। इस घृणित व्यापार मे बम्बई, दिल्ली, कलकत्ता और मद्रास जसे महानगरो के साथ साथ गोवा, इम्फाल वाराणसी, हरिद्वार की कन्दराएँ

अमृतसर, फिरोजपुर और सीमावर्ती प्रदेश, राजस्थान के गंगानगर मुख्य रूप में वर्जित स्थान हैं। कुछ पेशेवर अपराधी बच्ची उम्र के वयस्क या अवयस्कों पर इसका प्रयोग करते हैं। धीरे धीरे एक युवक स्मैक की लत के शिकार हो जाते हैं। फिर उनके छुटकारा पाना उनके लिए असम्भव हो जाता है। नशा न मिलने पर ये चोरी, डकैती हत्या और इसी प्रकार के अपराध करते हैं तथा उससे प्राप्त धन को नशीले पदार्थों के सेवन में लगा देते हैं। विश्वविद्यालय के युवक युवतियों और उनमें मध्यवर्गीय मित्रों में नशीली वस्तुओं का सेवन एक प्रकार का फैशन बनता जा रहा है जो भविष्य में पूरे देश के लिए एक दुश्चरित्र पीढ़ी के निर्माण का कारण बन सकता है। स्कूलों और कालेजों के विद्यार्थियों पर मादकता का कितना भूत सवार है उसका नमूना देखिए—विद्यार्थियों का एक दल कमरे में पश्चिमी संगीत की धुन पर बाहों में बाँहें डालकर नशे में धुत्त थिरक रहा है। तभी एक किशोर मस्ती में झूमते हुए एक भूरा पाउडर मुँह में डालकर पागलों की तरह हँसने झूमने लगता है। उसके साथ लड़के और बच्चे उस स्वर्ग में खो जाने के लिए पुड़िया मुँह में लगा लेते हैं। इतने में दूसरा चिल्लाता है स्वर्ग की तलाश में तो यह पुड़िया उस मार्ग गर्मी के नाम पर ले रहा हूँ जिससे पेट में सूरज के विस्फोट जैसा सुख मिले, और इसी के साथ संगीत की तेज धुन में कमरे का हर बच्चा मादकता की लहरों पर चढ़ने उतरने लगता है।

दिल्ली के अपराध विज्ञान के एक विशेषज्ञ डा. एम. जेड खान के अध्ययन के अनुसार नशे की आदत बच्चों के स्कूली दिनों के दौरान पड़ती है। ऐसे मामले कम ही कम सामने आते हैं जब वयस्क होने पर कालेज में यह पड़ी हो।

डा. खान का अध्ययन जबलपुर के 4400 लड़के व लड़कियों से प्राप्त जानकारी पर आधारित है। इस पर उन्होंने एक पुस्तक Drug Among College Youth भी लिखी है जिसका हाल ही में प्रकाशन हुआ है। उनके अनुसार नशे की लत से राष्ट्रीय कैडेट कोर तथा राष्ट्रीय समाज सेवा के कैडेट भी दूर नहीं हैं। इन कैडेटों में भांग तम्बाकू बहुत ही लोकप्रिय हैं और वे इन पदार्थों को पेन किलर बताते हैं।

शराबखोरी—पीना क्या है? किसी जाने या अनजाने आप किसी दुखद स्थिति से बचने के लिए अस्थायी मानसिक शान्ति के लिए, जान बूझकर अपने मस्तिष्क की चेतनावस्था को खोकर अर्द्ध चेतन अवस्था या अपने आपको पूर्ण चेतना से परे की अवस्था में ले जाने की क्रिया ही पीना है। लोग क्या क्या पीते हैं? शराब गाजा, चरस भांग, अफीम, कोकीन, हशीश, ताड़ी आदि एथिल, एल्कोहल या एथेनाल अथवा अन्य एल्कोहल या स्प्रिट (Sp rit)। प्राचीन आर्यों का सोमरस और द्रविड़ों के पेय ताड़ी थे। एल्कोहल पेय जैसे बियर, ह्विस्की और जिन जौ से, वाइन पोर्ट और ब्राडी अंगूर से, साइडर सेब से, और रम शीरे से बनती है। परन्तु एल्को

हल तबका जमता है। आपको आश्चर्य होगा कि पीने की वस्तुओं में सीसा, पारा और आर्सेनिक और मैग्नीज विष होते हुए भी शामिल है। वैसे लोग छलिया को भी नहीं छोड़ते हैं।

मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि लोग इसलिए पीते हैं जिससे मानसिक तनाव, भय, चिन्ता, निराशा, दुखद समस्याओं व संघर्षात्मक परिस्थितियों से बचा जा सके। पीने वाला एक कष्टजनक स्थिति का सामना नहीं कर सकता क्योंकि वह दिल दिमाग से कायर है। जब व्यक्ति नशे में होता है तो वह अप्रिय विचारों से मुक्ति पा जाता है। परन्तु यह सब अस्थायी होता है और नशा उतरने के पश्चात् व्यक्ति अपनी वास्तविक परेशानियों से फिर घिर जाता है। पीने से मादकावस्था होती हो जाती है कि वह अपराध, हत्या या आत्महत्या तक कर सकता है। नशे से नाना भ्रांति हो सकती है जिससे नींद न आना, भूख न लगना, नाड़ी की गति में न्यूनता आदि है। इसके मानसिक लक्षण हैं भ्रम विभ्रम होना जैसे स्वप्न पर पाँव पड़ना, लम्बे का आभास होना, उसकी समस्त संवेदना असंतुलित हो जाती है। शराब पीने वालों को कसर रोग हो जाता है।

नशीले पदार्थों का सेवन करने वाले अनेक अस्वस्थ व्यक्ति चाह कर भी मानसिक कमजोरी के कारण इसे छोड़ नहीं पाते हैं। उनके हाथ पर उनके शरीर में एक विशेष प्रकार की पीड़ा का अनुभव होता है। उनके बाल बच्चे, पत्नी, माता पिता उनको इस स्थिति से परेशान हो कर कभी स्वयं भी उनके लिए नशीले पदार्थों की व्यवस्था करते हैं अथवा मरणासन्न अवस्था में पहुँच कर निराश हताश व्यक्ति भीख माँगने लगते हैं, जब काटते हैं, चोरी करते हैं। उनके घर बर्बाद हो जाते हैं। बीवी बच्चे भूखा मर जाते हैं।

भारत सरकार ने नशा छुड़ाने के लिए विभिन्न केन्द्रों की स्थापना की है। इन केन्द्रों में ये उपचारार्थ दाखिल भी होते हैं। वे अपनी आदत पर पश्चाताप भी करते हैं। नशा छोड़ना चाहते हैं। परन्तु इनकी विवशता इस पान के लिए मजबूर करती है। समाज को इस बुराई के लिये आन्दोलन करना चाहिए। इस संबंध में कठोर नियम बनाने चाहिए, अन्यथा यह दुष्प्रवृत्ति समस्त तन्त्र को खोखला कर देगी।

अच्छी संगत

जब कोई युवा पुरुष घर से बाहर निकल कर बाहरी संसार में अपना स्थिति जमाता है तो उसके जान पहिचान के लोग धड़ाधड़ बढ़ते जाते हैं और थोड़े ही दिन में कुछ लोगों का उससे हेलमेल हो जाता है। यही हेलमेल बढ़ते बढ़ते मित्रता के रूप में परिणित हो जाता है। कम आश्चर्य की बात है कि लोग एक... ध्यानी उन समय उसके गुण दोष का परखते हैं पर किसी की संगत करते

उनके पूर्व आचरण और प्रकृति आदि का कुछ भी विचार और अनुसंधान न करें। जो लोग अपना सम्बन्धी अच्छे बनाना चाहते हैं, उन्हें अपने मिलने वाले के आचरण पर भी दृष्टि रखनी चाहिए। उन्हें यह ध्यान रखना चाहिए कि उनकी बुद्धि और उनका आचरण ठिकाने का है। साधारणतया हमें ऐसे व्यक्तियों का साथ नहीं करना चाहिए जिनसे हमारी विवेचना की गति मन्द हो, और अनुराग विवेक क्षीण हो। जीवन केवल हँसी ठट्ठा, गप उड़ाकर काटना, गपशप करना ही नहीं है, जीवन में गम्भीर बातें और विपत्ति के समय भी आते हैं। महाराणा प्रताप की भाँति संकट में दिन काटना वाजिदअली शाह की भाँति भोग-विलास करने से अच्छा है। शिवाजी के सवारों की तरह कमर बाँध कर चलना, औरंगजेब के सवारों की तरह झूमते व पानदान के साथ चलने से अच्छा है। हमें यह जीवन अपने कर्त्तव्य पालन के लिए दिया गया है, जो आदमी अपना कर्त्तव्य पालन नहीं कर सकता, उसका जीवन व्यर्थ है।

लोग तो हमारी जैसी संगत होगी वैसा ही हमें समझेंगे पर। हम अपने कार्यों में भी संगत के अनुसार सहायता व बाधा पहुँचेगी। यदि हमारी संगति अच्छी न होगी तो उसका प्रभाव हम पर बराबर हर घड़ी पड़ता रहेगा और उसके अनुसार हम उन्नत व अवनत होंगे।

जान पहचान के लोग ऐसे हों जिनसे हम कुछ लाभ उठा सकते हों, जो हमारे जीवन को उत्तम और आनन्दमय करने में कुछ सहायता दे सकते हों। यदि वे ऐसे हों जो हमारे लिए कुछ नहीं कर सकते न कोई बुद्धिमानी या विनोद की बातचीत कर सकते हैं न कोई अच्छी बात बतला सकते हैं न सहानुभूति द्वारा दुःख कम कर सकते हैं न हमारे आनन्द में सम्मिलित हो सकते हैं, तो हमें उनसे दूर ही रहना चाहिए।

आजकल जान पहचान बढ़ाना कोई बड़ी बात नहीं है। कोई भी युवा पुरुष ऐसे अनेक पुरुषों को पा सकता है जो उनके साथ थियेटर देखने जायेंगे, नाच रंग में जायेंगे, सैर सपाटे में जायेंगे। पार्टियों में सम्मिलित होंगे, यदि ऐसे लोगों से हानि नहीं होगी तो लाभ भी न होगा। पर यदि इन लोगों में से कोई मनचले युवक निकल आवें जो अमीरों की बुराइयों और मूर्खताओं की नकल किया करते हैं दिन रात बनाव शृंगार में रहा करते हैं कुलटा स्त्रियों की संगत करते हैं सभाओं में व्यर्थ की वाह वाह किया करते हैं गलियों में आवारागर्दी करके हँसी ठट्ठा करते हैं और सिगरेट का धुँआ उड़ाते चलते हैं शराब व आधुनिक नशीली वस्तुओं का सेवन करते हैं अवसर मिलने पर पाकेटमारी व लोगों को ठगने का कार्य भी करते हैं ऐसे नवयुवकों से बढ़कर शून्य व निस्सार और सोचनीय जीवन और किसका है।

एसे युवकों के लिये न तो संसार में अच्छे कवि हुए हैं और न अच्छे आचरण वाले महात्माओं का महत्व है। उनके लिये वीरों या तथ्यकारों विचारों से कोई लेना देना नहीं है उन्हें फूल पत्तियों से सौन्दर्य नहीं, झरना के कलकल में मधुर संगीत नहीं, उनके भाग्य में सच्ची प्रीति का सुख और कोमल हृदय की शांति नहीं है। उनका मन सदैव कुत्सित विचारों और इन्द्रिय विषय में ही लिप्त है, एसे प्राणियों का संग, जो अपना आचरण बनाना चाहते हों उनको नहीं करना चाहिये।

कुसंग के दुष्परिणाम—कुसंग का ज्वर सबसे बड़ा भयानक है, इससे प्राणी का चरित्र और सद्वृत्ति का ही नाश नहीं होता, बल्कि बुद्धि का भी क्षय होता है। युवा पुरुष की संगति बुरी होगी तो उसे दिन दिन अवनति के गड्ढे में गिराती जायेगी। उसका अपने वंश अपनी मर्यादा आदि का कोई ध्यान नहीं रहेगा और यह अपनी संसारी सम्पत्ति खोकर दर दर का भिखारी हो जायगा। यदि अच्छी संगति होगी तो उसे निरन्तर उन्नति की ओर उठाती जायगी।

बहुत से लोग एसे होते हैं जिनके घडी भर के साथ में भी बुद्धि भ्रष्ट होती है, क्योंकि इस घडी भर में ही एसी एसी कुत्सित गालियां, एसी भद्दी बातें कही जाती हैं जो कानों में नहीं पड़नी चाहिये। चित्त पर ऐसे ऐसे प्रभाव पड़ते हैं जिनसे उसकी पवित्रता नष्ट हो जाती है। बुरी संगत के कारण ही प्रारम्भिक अवस्था में ही युवक हस्त मैथुन जैसे विकारों से ग्रस्त होकर अपना शौर्य नष्ट कर देते हैं।

बुरी बुरी बातें हमारी धारणा में बहुत दिनों तक टिकती हैं, भद्दी दिल्लगी व फूहड गीत जितनी जल्दी ध्यान पर चढ़ते हैं, उतनी जल्दी कोई गम्भीर अच्छी बात नहीं। सिनेमा, टी वी आदि पर जो कामुक दृश्य दिखाये जाते हैं उनका प्रभाव तो बचपन में और भी स्थायी होता है। एसे दृश्य बड़े होने पर भी उसके ध्यान में बार बार आते रहते हैं। जिन भावनाओं को हम दूर करना चाहते हैं, जिन बातों को हम याद नहीं करना चाहते वे बार बार हृदय में उठकर दुःख पहुँचाती हैं। एसे लोगों को कभी साथी न बनाओ जो अश्लील, अपवित्र फूहड बातों से तुम्हें हँसाना चाहें। यदि एक दफा भी इनके साथ हो गए यह सोचकर कि आगे इनके साथ नहीं रहेंगे, इनका सुधार देंगे जब एक दफा किसी बुरे के साथ रह जायेंगे तो आगे उनकी बुरी बातों के अभ्यस्त होते होते उनसे चिढ नहीं मालूम होगी। हमारा विवेक कुण्ठित हो जायेगा और हम भले बुरे की पहचान न रह जायगी और अंत में होते-होते हम भी बुराई के भक्त बन जायेंगे। किसी कवि ने ठीक ही कहा है—

> काजल की कोठरी में कैसे हूँ सयानो जाय,
> एक लीक काजर की लागिहै पै लागहि।



काजल की कोठरी में सयाना आदमी नहीं जाता है क्योंकि उसमें जाने से सदैव काली लकीर लग ही जाती है। बुरी संगत करने पर उसका प्रभाव अवश्य होता है।

मनुष्य सामाजिक प्राणी है, समाज से बिना वह रह भी नहीं सकता। समाज में सम्मिलित होने से हमारी समझ बढ़ती है, हमारी विवेक बुद्धि तीव्र होती है, हमारी सहानुभूति गहरी होती है, हम अपनी शक्ति के उपयोग का अभ्यास होता है, अनुपालन का अभ्यास होता है, न्याय करना सीखते हैं सद्गुणों का आदर करना और सुन्दर चालढाल की प्रशंसा करना सीखते हैं, इसलिये शिविरों का आयोजन होता है सामूहिक यात्राएं की जाती हैं, जहाँ पर गुणों के विकसित होने का अवसर प्राप्त होता है।

अच्छे साथी बनायें—साथी ऐसा हो जो प्रतिष्ठित और शुद्ध हृदय के हों, मृदुल और पुरुषार्थी हों, शिष्ट और सत्यनिष्ठ हों जिससे हम अपने को उनके भरोसे छोड़ सकें हों और यह विश्वास कर सकें कि उनसे किसी प्रकार का धोखा न होगा। बर्क ने कहा है कि, "आचरण दृष्टान्त ही मनुष्य जाति की पाठशाला है, जो कुछ वह उससे सीखता है और किसी से नहीं।"

युवक और युवतियों को उस चाल व्यवहार की अवहेलना करना चाहिए जो भले आदमियों के समाज में आवश्यक समझी जाती है। बड़ों के प्रति सम्मान, और नम्रता का व्यवहार बराबर वालों के प्रति प्रसन्नता का व्यवहार, और छोटों के प्रति कोमलता का व्यवहार अच्छे प्राणियों के लक्षण हैं।

कामुकता उत्पन्न करने वाली परिस्थितियाँ—आज के युवक युवतियाँ और यहाँ तक कि प्रौढ़ व्यक्ति भी बुरी संगत के कारण फिल्मी पुस्तकें, कामुकता उत्पन्न करने वाले उपन्यास जासूसी पुस्तकें व हल्की फुल्की पुस्तकें पढ़ा करते हैं। आज जहाँ तहाँ बाजार में ऐसी पुस्तकें किराये पर भी मिल जाती हैं। जब तक वह इन पुस्तकों को पूरा नहीं पढ़ लेते हैं उनको भोजन करना भी अच्छा नहीं लगता मानो यही उनके सगे साथी हैं। इस प्रकार की पुस्तकें पढ़ने से उनका मन सदा कामुकता विचारों से भरा रहता है। मन इतना चंचल हो जाता है कि किसी भी कार्य में स्थिरता की प्राप्ति नहीं हो पाती। इस प्रकार के उपन्यास व पुस्तकें पढ़ने से उनमें कामुक व मारधाड़ की फिल्म देखने की प्रवृत्ति प्रबल होती है तथा वे ऐसी कामुक व बीभत्स फिल्म जो सरकार से प्रतिबंधित हैं उनको छिप छिप कर वी डी ओ पर देखते हैं। इनको देखने से नवयुवक व नवयुवतियों की पवित्रता संदेहपूर्ण होती जा रही है। जो लोग अपनी सन्तानों को नैतिक पतन से बचाना चाहते हैं वे इस प्रकार की फिल्म न देखने दें।

सगत मे पडने से पान खान का भी रिवाज बढ गया है। पान यदि कभी कभार खाया जावे तब तो बुरा नही है परन्तु यदि यह आदत म आ जाता है तो हानिकारक ह। पान खाने वालो का थूकने की आवश्यकता होती ह। इसस व यहा वहाँ थूकत ही रहत ह। इसस राग का उद्भव हाता ह। आदत छोटी होने पर भी इसके कारण बहुत सा धन व्यथ म व्यय हो जाता ह। इसी क कारण जदा व कोकेन आदि नाना प्रकार की नशीली वस्तुग्रा का प्रयोग होता है जा स्वास्थ्य के लिए हानिकर है।

बुरी सगत म पडन से धूम्रपान भी कुख्याति प्राप्त दुव्यसन ह। इसस फेफडा की हानि और नयनो की ज्याति क्षीण हाती है वीय द्रवीभूत हान लगता है और सन्तान निबल और रागी होती है। स्मरण शक्ति का ह्रास हान लगता है और कफ के आधिक्य हान क कारण काई भी भाजन अधिक प्रभावकारी नहीं हाता ह।

लास एजिल्स मे धूम्रपान पर बडा प्रतिबन्ध--15 अप्रल 1985 से नगर म धूम्रपान आदेश लागू हा गया ह। इसके तहत धूम्रपान पर अनक प्रतिब ध लगाए हुए है। अध्यादेश के अन्तगत पाच या उमस अधिक कामगारा वाल सभी व्यापारिक प्रतिष्ठानो का अपने यहा धूम्रपान मुक्त क्षेत्र बनाना हागा। इसके तहत कमचारी विश्राम गृहो, सीढिया, व चिकित्सा कक्ष म धूम्रपान नही कर सकेंग। कामगारा के दा निहाई स्थला का धूम्रपान वर्जित क्षेत्र घापित किया ह। केवल निजी कार्यालय, रेस्तरा शराबघर व हाटला को इमस छूट दी गई ह।

एक पत्रिका न विश्व स्वास्थ्य सगठन क हवाल स बताया ह कि प्रतिवष विश्व मे नौ लाख लोगो को तम्बाकू के सेवन से कैंसर होता है। विकासशील देशा म जिस ढग से तम्बाकू का बिक्री क लिय प्रचार किया जाता है उसस वहाँ यह रोग और भयकर रूप ले लेगा। पट आर फेफडे के कैंसर क मामल सबस अधिक मिलत है। पुरुषा म फेफडो का कैंसर काफी तेजी स बढ रहा ह। विश्व के 24 हिस्सा म किय गय अनुसधान पर यह अध्ययन आधारित है।

भारत सरकार की तरफ से विज्ञापन निकलता ह 'धूम्रपान स्वास्थ्य के लिए हानिकारक ह" पर तु साथ म उन्ही पत्र पत्रिकाओ मे सिगरट के लाखो रुपए के विज्ञापन निकलत ह। नगर व कस्बा म जगह-जगह पर सिगरट के विशाल हार्डिग व पोस्टर लग हुए मिलेंगे। कसी नीति ह। एक तरफ ता कहा जाता ह कि चार से सावधान और दूसरी तरफ चार का चारी करन लिए उकसाया जाता ह। इस प्रकार धूम्रपान पर राक नही लगगी अपितु इसका प्रसार बढता ही जायगा।

लास एजिल्स के समान ही भारत म भी ऐस कानून बनाय जावें जो विद्यार्थी बीडी सिगरट पीत हा उनका विद्यालय मे प्रवेश नही दिया जाव। कार्यालय, कारखान, अस्पताल, विद्यालय बस, रल व टक्स स्टेशना व स्टण्डा

स्टेडियम आदि को सीमित क्षेत्र बना दिया जावे जहाँ पर न तो बाड़ी सिगरेट का विक्री हो और न कोई इसका पीवे। विज्ञापन पर कड़ी पाबन्दी हो। यदि इस कानून का कड़ा पालन किया जावे तो जो व्यक्ति फेफड़े के कैंसर से मर रहे हैं उनमें काफी कमी आवेगी और साथ ही इस विष को पीने के लिए व्यक्ति जो कड़ा कमाई का पैसा खर्च कर रहा है उसकी बचत से पालन पोषण उचित प्रकार से हो जायगा। सभाओं में धूम्रपान के कारण वातावरण दूषित हो जाता है तथा इसका सेवन नहीं करने वालों को भी दुष्परिणाम भुगतना पड़ता है।

जुआ—यह भी बुरी संगत के कारण प्रचलित दुर्गुणों में से एक है। यह विविध रूपों में पाया जाता है। क्लबों व संस्थाओं द्वारा आयोजित मेलों में भी इसका आयोजन होने लगा है। लाटरी भी इसका एक रूप है जिसमें पढ़ा लिखा समाज भी अपने धन का अपव्यय करता है। हमारा इतिहास इसका साक्षी है। महाभारत का प्रलयंकर संग्राम इसी द्यूत क्रीड़ा के कारण हुआ जिसने हमारे देश की संस्कृति को अपार हानि पहुँचाई। युवक जब बुरी संगति में पड़ जाता है तो वह जुआ खेलने लगता है। काम, क्रोध, हत्या, चोरी अपनी सम्पत्ति व घर की दुर्दशा आदि न जाने कितने विनाशकारी पाप इसमें अन्तर्निहित हैं। यह इन सब का जनक है। जुआरी का जीवन विषादमय हो जाता है। सत्य और असत्य का विचार करने वाली बुद्धि जाती रहती है। बुद्धि हीन होने पर भी वह पशुवत हो जाता है। हम ऐसे लोगों की संगत करनी चाहिए जो हमें उच्चतर संकल्पों से दृढ़ करेंगे। दोषों और त्रुटियों से हमें बचायेंगे। हमारे सत्य, पवित्रता और मर्यादा के प्रेम को पुष्ट करेंगे। जब हम कुमार्ग पर पैर रखेंगे तब हमें सचेत करेंगे। सारांश में वे हमें उत्तमता पूर्वक जीवन निर्वाह करने में सहायता करेंगे।

सिनेमा व टी. वी. में युगल प्रेम नृत्य—यह कहने की अपेक्षा कि शब्द चित्र चिह्न और दृश्य स्वयं ही अर्थपूर्ण हैं कदाचित यह कहना कहीं अधिक यथार्थ होगा कि मनुष्य की मनोवृत्ति ही अर्थपूर्ण और अर्थसूचक हुआ करती है। पाश्चात्य शिल्पकारों के अर्ध नग्न पुतले, शरीर सौष्ठव पाश्चात्य मासिक पत्रों में छपे स्त्रियों के अर्द्ध नग्न या पूर्ण नग्न अवस्थाओं के चित्र टेलीविजन में युगल नृत्य, प्रेम नृत्य देखकर काम वासना पूर्ण नवयुवकों के मन में सदा अनुचित और घृणित कल्पनाएँ ही उत्पन्न होंगी, परन्तु जो लोग शिल्पशास्त्र के ज्ञाता होंगे अथवा जो अपना शारीरिक बल बढ़ाना चाहते होंगे, उनके मन में उन दृश्यों या चित्रों को देखने पर प्रमाणबद्धता और शरीर के अवयवों की भरी पूरी कला की ही कल्पना होगी। साधारण लोग इस प्रकार के दृश्य देखकर यही कहेंगे कि इसमें नैतिकता का दिन दहाड़े खून होता है यद्यपि इस प्रकार के नृत्यों में भी बहुत से ऐसे युवक युवतियाँ सम्मिलित होते हैं जिनकी वृत्ति सात्विक होती है और उन लोगों के

लिय इस प्रकार का नृत्य कभी शारीरिक अथवा मानसिक काम लक्षणो का उत्तेजक नही होना। अशुद्ध मनावृत्ति के जा नवयुवक उन नृत्या म सम्मिलित होत है अथवा देखते हैं उनम ही शारीरिक और मानसिक कामोद्दीपन के लक्षण दिखलाई पडत हैं। इसका कारण यही है कि प्रत्यक व्यक्ति पर बाह्य दृश्यो का प्रभाव उसके पूव सस्कारा के ही अनुसार हाता है।



दृष्टि की सात्विकता स कला की कल्पना

अपने परा के चुभन वाले काटा से बचान के लिये सारा ससार मुलायम चमडे से नही ढका जा सकता। यह सम्भव नहीं ह कि ससार म इस प्रकार के आकषक दृश्य टलिवीजन व अन्य स्थानो पर नही दिखाये जावें। अश्लील साहित्य भी छपता रहेगा और कामात्तेजक दृश्य सामन आते ही रहग। क्योकि इनकी माग है परन्तु जो लाग अपना चरित्र सरक्षण करना चाहत हा व अपनी मनोवृत्ति अवश्य बदल सकत है।

□□

शिक्षा की दुष्प्रवृत्ति—नकल

परीक्षा में नकल की दुष्प्रवृत्ति

आज शिक्षा नीति नकारा साबित हो गई है और इसके कारण मनुष्य एक साधन है। इसलिए मानवीय संसाधन का एक अलग मन्त्रालय बना है, शिक्षा जिसका अंग है। मनुष्य एक महत्त्वपूर्ण साधन है और उसका उचित विकास किया जाना चाहिए ताकि उसका उपयोग अच्छी प्रकार से किया जा सके। यह तभी सम्भव हो सकता है जब इसके लिए उपयुक्त माहौल बनाया जा रहा है और इसके लिए रोजगारपरक शिक्षा प्रणाली विकसित करने पर जोर है। उधर आधुनिकीकरण व कम्प्यूटरीकरण आदि नई तकनीक का महत्त्व इसलिए दिया जा रहा है कि मानवीय साधन उत्पादन में इनका प्रयोग कर विकास की दर को तेज कर सकें ताकि 21वीं सदी में हम उनके साथ कदम से कदम मिला सकें। नई शिक्षा नीति में शिक्षा को रोजगार से और मध्य से भी जोड़ने की कोशिश की जा रही है ताकि व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुसार काम दिया जा सके। मात्र डिग्री के आधार पर नहीं। जब हम व्यवहार के धरातल पर उतरते हैं तो लगता है कि हमारे गुणात्मक सुधार के मंसूबों पर पानी फिर जाता है। इसका एक कारण है आज के शिक्षा के क्षेत्र में नकल की प्रवृत्ति जो दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इसकी बढ़ती प्रवृत्ति के लिए कई कारण उत्तरदायी हैं जिसमें एक परीक्षा प्रणाली भी है।

नकल करने वाले विद्यार्थी वे नहीं हैं जिनके पास अक्ल नहीं है बल्कि वे अधिक अक्लमन्द हैं और बिना प्रयास के पास होना चाहते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि पढ़ना बड़ा कष्टकारी काम है और व्यक्ति जब तक परिपक्व नहीं हो जाता तब तक उसे पढ़ाई में रस नहीं आता। पहले लोग बिना नकल के परीक्षा पास करते ही थे पर अब इसका एक मूलभूत कारण है सामाजिक मूल्यों का ह्रास और तेजी से बिना मेहनत के ऊपर उठने की प्रवृत्ति और दादागिरी। पिछले 39 वर्षों में हमने जिस सामाजिक ढाँचे को विकसित किया है उसमें कानून का उल्लंघन एक फैशन ही नहीं श्रेष्ठता का प्रतीक बन गया है। कानून आज कमजोर का सहारा है। इसलिए हर शक्तिशाली व साधन सम्पन्न आदमी इसे सरलता से तोड़कर आगे बढ़ जाता है। मूल्यों की गिरावट के कारण चोरी और डाके की प्रवृत्ति, हीरोगिरी मानी जाती है। डिग्री की उपयोगिता नौकरी दिलाने की क्षमता और उससे जुड़ी खोखली प्रतिष्ठा पाने की लालसा है। वास्तव में नकल समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार का एक बहुत बड़ा प्रमाण है जिसके दुष्परिणाम हर भ्रष्टाचार से अधिक भयानक हैं क्योंकि इससे भावी पीढ़ियों की बर्बादी हो रही है। नकल करके डिग्री हासिल कर लोग

ही प्रशासन प्रबन्ध म बडे पदा पर आसीन हा रह है और व सम्पूण व्यवस्था का अकुशल बना रह हैं। आज जब लाग निम्न स्तर व गिरती कुशलता की बात करत हैं तो उनमे इस नकल का बहुत बडा योगदान हाता है जिसे हम प्रश्रय दत ह। आज ऊँची ऊँची डिग्रीधारी सामान्य ज्ञान की छाटी सी बात भी नही जानत जिस पर हम क्षाभ करते हैं।

नकल से डिग्री प्राप्त करना और ज्ञान है और ज्ञान हासिल कर मानवीय ससाधन को कुशल बनाना दूसरी बात है। यह राग छोटी कक्षाओं म प्रारम्भ हाता है और उच्च शिक्षा तक चलता रहता है। एम एम हथकण्ड अपनाय जा रह है जिनकी कल्पना भी नही की जा सकती तथा जिनका जानकर बहुत आश्चय हाता है। निरीक्षक राकना चाहकर भी नही राक पात। छात्र ही नही अब ता छात्राएँ भी इस दुष्प्रवत्ति म शामिल हाती जा रही है। नकल रोकन के लिए आवश्यक है कि परीक्षार्थियो को ही नही शिक्षको व निरीक्षको को भी रग हाथो पकडा जाय जो नकल करन म सहयाग देत है। इस प्रवत्ति को शुद्ध चारी व भ्रष्टाचार की दृष्टि से देखा जाना चाहिए और इसका जघन्य अपराध समझा जाना चाहिय क्योकि इसके कारण हमारी भावी सन्तति प्रारम्भ स ही भ्रष्टाचारी व धाखाधडी का प्रशिक्षण प्राप्त कर देश का दुर्भाग्य की आर धकेलने का प्रशिक्षण प्राप्त कर रही ह।

इसमे एक कठिनाई है दादागिरी। डरा धमका कर नकल की जाती ह और शिक्षक अपनी दुदशा के डर क कारण इसका राकने का साहस नही जुटा पात क्योकि उनका राज्य सरकार अथवा अधिकारियो का सरक्षण उपलब्ध नही हाता। इसलिए इसके लिए भी आवश्यक उपाय करन चाहिये। विद्यालयो म भी इस बुराई की आर विद्यार्थियो का ध्यान आकर्षित करना चाहिये और उन्ह स्पष्ट रूप से बताया जावे कि इसस आत्मविश्वास म कमी आती है और नकल करन वाला विद्यार्थी कभी भी अच्छी श्रेणी प्राप्त करन म सफल नही हो सकता। प्रत्यक क्षेत्र म प्रतियोगिताएँ हैं जिन्ह उत्तम श्रेणी म उत्तीण करके ही अच्छा पद प्राप्त किया जा सकता है वहाँ नकल करन वाला ता किसी भी स्थिति म सफल नही हो सकता। अत इस दुष्प्रवत्ति का हर सम्भव उपाय करके सख्ती स राकना अति आवश्यक है।

□□

विद्यालय व महाविद्यालय में युवजन व कार्यरत विद्यार्थी संसद

विद्यालय व महाविद्यालय में छात्र संसद अथवा छात्र यूनियन के चुनाव होते रहे हैं। ऐसा कहा जाता है कि यह चुनाव भावी चुनाव व राजनीति में भाग लेने के लिए युवकों को प्रशिक्षण देता है। इन चुनावों में सभी प्रकार की बुराईयाँ व्याप्त हैं। धन का अपव्यय, नारेबाजी, उपद्रव, दंगा फसाद व कभी कभी हिंसा भी हो जाती है। चुनाव समाप्त होने के पश्चात् नकली चोरी मांगों को पूरा कराने तथा उनको मनवाने के लिए हड़ताल, मारपीट, पथराव, नारेबाजी का सहारा लिया जाता है। प्रधानाचार्य, आचार्य, कुलपति व कुलाधिपति के पुतले जलाए जाते हैं। यह हमारे शिक्षा मन्दिर विद्या अध्ययन, मनन, चिन्तन व चरित्र निर्माण के स्थान हैं न कि राजनीति में भाग लेने, हड़ताल करने, अपने गुरुओं आचार्य का अपमान या उनका घेराव करने के लिए यह पावन मन्दिर बनाए गए स्थान हैं। सम्भव है ऐसा करते हुए ये एक दिन अपने माता पिता पर भी प्रहार करने व उनको मारने से इन्कार करें।

आज के युवक कल जब स्वयं अधिकारी या राजनेता होंगे तो आगे आने वाली पीढ़ी के युवा उनके प्रति भी अभद्र व्यवहार, पथराव व नारेबाजी करने से क्या चूकेंगे। इसलिए आवश्यकता है कि इस उपाय से हटकर तरीके से आगे पर चलना उन्हीं के हित में है। हमने छात्र संघ के कटु परिणाम देख लिए। इससे विद्यार्थियों के चरित्र हनन में कोई कोर कसर उठा नहीं रखी है अतः आवश्यकता है कि हम हमारी गुरु परम्परा में लौटें। हमारे विद्यालयों को, सरस्वती के मंदिरों को राजनीति, चुनाव, सिगरेट, मदिरा, चाय, प्रमाद, आलस्य, उच्छृंखलता, अविनय, ब्रह्मचर्य भंग आदि अनपावन दुर्गुणों से दूर रखकर वहाँ माता पिता और गुरु के प्रति आत्मिक आदर भाव रखना, संयम, तप, त्याग, सत्य आदि का पालन करना व भविष्य के लिए जीविकोपार्जन कर अपने कुटुम्ब का लालन पालन करना सिखाया जावेगा, तब ही भारत का मस्तिष्क उन्नत होगा। हम विदेशों को सीना ठोककर कह सकेंगे कि आज भी भारत अतीतानुसार नैतिक क्षेत्र में अब भी पश्चिमी देशों व अन्य प्रगतिशील देशों को सही रास्ता दिखाने की क्षमता रखता है।

पूर्व में जब इन विद्यार्थी संसदों का निर्माण विद्यालयों में किया गया तो प्रारम्भ में इनके परिणाम सुखद रहे किन्तु ज्यों ज्यों समय बीतता गया इसके अति परिणाम सामने आये और इसमें ऐसे विस्फोट हुए कि विद्यालय व विश्व

विद्यालयों को बन्द करने तक की स्थिति आ गई। जगह-जगह पर अनेकों ने छात्र समुदाय को हथियार बनाकर राजनीतिज्ञों ने अपने स्वार्थ सिद्ध किए। विद्यालयों में राजनीतिक गुटबन्दियों ने शिक्षाशास्त्रियों एवं जागरूक नागरिकों को अन्त में निर्णय लेने को विवश कर दिया कि विद्यार्थियों की, नवयुवकों की अधिकांश शक्तियों का दुरुपयोग हो रहा है, इसको कैसे बचाया जावे। यदि यही परिस्थिति बनी रही तो अन्त में इसका कौनसा विध्वंसात्मक रूप होगा, कहा नहीं जा सकता। इसी भावनानुसार छात्र सभा के स्थान पर कार्यरत छात्र संसद का निर्माण किया जावे तो उत्तम रहेगा। इसका संक्षिप्त प्रारूप नीचे दिया जा रहा है—

विद्यालय या महाविद्यालय में जितने भी विषय पढ़ाये जाते हैं उनके श्रेष्ठ विद्यार्थी विषयानुसार सम्बन्धित विषय के प्रभारी अध्यापक की सम्मति से कक्षानुसार या विभागानुसार चुन लिए जावें तथा यह ही विद्यार्थी विषयानुसार अपने पदाधिकारी आवश्यकतानुसार चुनलें। इस प्रकार विषय समिति का गठन होगा। इनके समक्ष इस कार्यरत छात्र संसद का उद्देश्य स्पष्ट कर दिया जावे कि वे विषय से सम्बन्धित अपनी योग्यता में वृद्धि करने के लिए वर्ष भर के कार्यक्रम आयोजित करेंगे जिसका पूर्व समर्थन आचार्य या प्राचार्य द्वारा होगा। प्रत्येक विषय की समिति में से एक-एक प्रतिनिधि केन्द्र की समिति का निर्माण करेगा जिसके प्रभारी अध्यापक व प्राचार्य पदेन सदस्य होंगे। केन्द्रीय समिति के अध्यक्ष प्राचार्य व विषय समिति के अध्यक्ष प्रभारी अध्यापक होंगे। समय समय पर प्रत्येक समिति के कार्य का मूल्यांकन होगा। इसका प्रयोग लेखक ने स्वयं अपने प्राचार्य काल में छोटे-छोटे व बड़े विद्यालयों में सफलतापूर्वक किया है जिसके परिणाम अति सुखद रहे हैं। इससे विद्यालय तोड़फोड़ व हड़ताल से बच गया व शिक्षण कार्य सफलतापूर्वक संचालित हुआ है।

□□

कोई क्या कहेगा ? की भावना से युवको में सेवा का अभाव

'कोई क्या कहेगा ?' इस भावना से आज का युवक ग्रस्त है। किसी को असहाय, असमर्थ और कठिन समस्या में देखकर आज का युवक द्रवित नहीं होता है। यदि द्रवित हो भी जाता है और सहायता करने का विचार भी करता है तो दूसरा विचार उसके मस्तिष्क में आता है कि कोई क्या कहेगा ? यह हमारी नैतिक और मानसिक दुर्बलता है।

एक वृद्ध यात्री ठण्ड के मौसम में एक हाथ में एक भारी बंडिल को थामे और दूसरे हाथ में एक भारी बक्सा लटकाए रेल्वे पुल को पार करने के लिए सीढ़ियाँ चढ़ रहा था, उसका बदन बोझ से दबा जा रहा था और हाथ पर बक्स के भार से झूल झूल जाते थे। फिर भी वह साँस फूलने की परवाह न कर चढ़ा जा रहा था। ऐसे समय कुछ युवक उसके पास से निकले, उनमें से एक युवक के मन में करुणा उपजी लेकिन ठीक उसी समय दूसरा भाव जगा कि कहीं किसी ने देख लिया तो वह क्या सोचेगा ? क्या कहेगा ? इन्हीं विचारों के ताने बाने में वह युवक निकल गया और ट्रेन में अपने प्रथम श्रेणी के डिब्बे में जा बैठा। वह यात्री द्वितीय श्रेणी के डिब्बे में जा बैठा।

एक बच्चा स्टेशन के प्लेटफार्म पर बेतहाशा रो रहा था। पास में एक अधेड़ स्त्री हाथ पाँव समेट अपनी एक सूती साड़ी में ठण्ड की ठिठुरन और शरीर की लज्जा ढाँकने की विफल कोशिश कर रही थी। बीच बीच में वह बालक को देख भर लेती थी। वह बच्चा भूख से तड़फ रहा था। उसकी माँ के पास चाय या बिस्कुट के लिए पैसे नहीं हैं। पास में खड़े कुछ युवकों का ध्यान उसकी ओर नहीं जा रहा था परन्तु उनमें से एक युवक की इच्छा हुई कि उसकी सहायता कर दी जावे परन्तु एकाएक भाव उठा कि कोई देखेगा तो क्या कहेगा। इस प्रकार उतर कर महिला के पास जाकर पैसे देने का कोई क्या अर्थ निकाले कोई क्या कहे और उसकी सेवा भावना दब कर रह गई।

एक आदमी जख्मी होकर सड़क पर पड़ा हुआ है आपसे सहायता चाहता है कि आप उसे चिकित्सालय पहुँचा दें, परन्तु आप उसको छोड़कर चल देते हैं क्योंकि आप पुलिस के झंझट में नहीं पड़ना चाहते, उस समय आपकी सेवा भावना समाप्त हो गई है।

वैसे यह आम बात है कि कुछ युवक तो इन बातों पर ध्यान ही नहीं देते, कुछ समय, श्रम और धनाभाव का बहाना बनाकर अपने को असमर्थ बताकर ऐसे अवसरों पर विरक्ति का भाव दिखाते हैं। वे यह कह कर अपने आपको अलग कर लेते हैं कि छोड़ो हमें क्या ? इस प्रकार के व्यवहार के लिये दोनों ही नैतिक अपराधी हैं।

जब कोई आदमी कोई बुरा काम करने को अग्रसर होता है, जैसे गाली देने, धोखा देने, झगड़ा करने, चोरी करने, किसी लड़की को छेड़ने, व्यभिचार में पड़ने, शराब पीने आदि में तो आत्मा से एक आवाज उठती है—कोई देखेगा तो क्या कहेगा ? यह कोई क्या कहेगा एक देव पुरुष की तरह सामने आ खड़ा होता है और एक भय की ओर इशारा कर देता है। जिस किसी को भी ऐसे बुरे काम में आगे बढ़ना होता है, वह इस देव पुरुष से ही लड़कर आगे बढ़ता है।

लेकिन जब कोई आदमी या युवा अच्छा काम करने की सोचता है तब भी 'यह कोई क्या कहेगा' भाव जागता है। यह आत्मा की सच्ची आवाज नहीं होती, यह एक काल्पनिक भय होता है जो हमारे अधिक सोचने विचारने, अति सतर्कता बरतने व संशय करने और झूठे अहं की प्रवृत्ति से पैदा होता है। यह हमारी अपराध मनःस्थिति का द्योतक है। यह एक रोग है जो हमें कमजोर करता है।

जब कुछ कर डालने का समय होता है तो भी हम सोचते रहते हैं, करें दूसरी ओर सोचते रहते हैं 'कोई क्या कहेगा' और इस बीच दूसरा उसे कर डालता है। मनुष्य इच्छा रहते हुए भी कुछ नहीं कर पाता। एक अधिकारी अपने अधीन सेवक के बच्चे को प्यार नहीं कर पाता। एक युवा पुरुष किसी असहाय लड़की की सहायता नहीं कर पाता। एक धनिक किसी निर्धन को गले नहीं लगाता, यह सोच कर कि कोई क्या कहेगा ? एक धनी व्यक्ति पैदल चलने से कतराता है इसलिए कि पैदल चलते देखकर लोग उसे क्या कहेंगे। कई लोग अच्छे अच्छे कार्यक्रम देखने से वंचित रह जाते हैं क्योंकि उनके पास दिखावे के लिए स्वयं का वाहन नहीं है अथवा उनको प्रथम श्रेणी का आरक्षण नहीं मिला है। बस में चलते उनको लज्जा आती है, क्योंकि उनके पीछे 'कोई क्या कहेगा' का हव्वा उनका पिण्ड नहीं छोड़ रहा है।

एक लड़की तालाब में डूब रही है या कि वह अकेले चलती डर रही है या बोझे से थकी जा रही है और आप इसलिये उसकी सहायता नहीं कर रहे कि 'कोई क्या कहेगा'। एक अनपढ़ महिला आपसे बात करना चाहती है और आप चूँकि पढ़ी लिखी युवती हैं इसलिए आप उससे कन्नी खिसका रही हैं कि 'कोई क्या कहेगा'। अथवा भिखारी चीख चीखकर आपसे सहायता चाहता है पर इसे, 'कोई क्या कहेगा' के कारण आप उसकी सहायता नहीं कर रहे हैं।

आप अपने व्यवहार, अपनी रुचि, आचार विचार और चरित्र के बारे में चिन्तित होते हैं। आज आप चश्मा लगाना चाहते हैं, ठण्ड में टोपा पहनना चाहते हैं पर अगर समाज में किसी ने न लगाई तो 'कोई क्या कहेगा', सोचकर नहीं पहन रहे हैं। किसी खास फैशन, स्टाइल या रिवाज के वस्त्र आभूषण खान पान आदि इसलिए नहीं कर रहे हैं क्योंकि आपको 'कोई क्या कहेगा' का डर है। आप पत्नी पुत्र पुत्री से भी इसलिए नहीं कह रहे हैं कि वे क्या कहेंगे या सोचेंगे। 'कोई क्या कहेगा' इस भय से आप अपना सामान भी नहीं उठा पाते और गाड़ी निकल जाती है।

ऐसे कई पुत्र हैं, जो बाप की वेशभूषा, भाषा व पद आदि को देखकर कह देते हैं कि यह मेरे परिचित हैं। क्योंकि इन्हें डर रहता है कि यदि वे उन्हें अपना पिता कह देंगे तो उनके मित्र क्या सोचेंगे। कोई क्या कहेगा, यह साधारण विचार नहीं है। यह एक हव्वा या भूत है जो हमें अपनी इच्छानुसार सत्कार्य भी नहीं करने देता। जो हमारी इच्छा की अपरिपक्वता प्रकट करता है और स्वयं में विश्वास न करते हुए दूसरों के प्रति भी अविश्वासी बनाता है। यह हमारे चरित्र की निर्बलता का द्योतक है।

इसलिए आज के युवक युवतियों को अपने विवेक से अच्छे और बुरे का ख्याल करके 'कोई क्या कहेगा' का डर निकाल कर इच्छा को दृढ़ और बलवान बनाकर उचित कार्य को तत्काल बिना किसी संकोच व भावी आशंका के कर डालना चाहिये। इस व्यस्त संसार में ऐसा कोई नहीं है जिसे आपके कुछ करने देखने, आपके बारे में सोचने और कहने की फुर्सत है। यदि कभी ऐसा हो भी जाए तो आपको क्या, कहने वाले तो कहते ही रहेंगे। आप कोई बुरी भावना तो रखते नहीं अतः काम करने से पहले ही अनिष्ट और अपमान की बात सोचना व्यर्थ है।

युवकों द्वारा योग्यतानुकूल व्यवसाय का चुनाव

आज भारत में बेरोजगारी की समस्या इतनी उग्र हो गई है कि उससे देश की सामाजिक व्यवस्था को खतरा हो गया है। रोजगार कार्यालयों में (1986) में 2 करोड़ 35 लाख बेरोजगार लोगों के नाम दर्ज हैं जिनमें से आधे लोग मैट्रिक या उससे अधिक योग्यता रखते हैं। श्रम वर्ग में लगभग 60 लाख लोगों को शामिल किये जाने से बेरोजगार लोगों की मौजूदा संख्या लगभग चार करोड़ है जो 1990 में लगभग 6 करोड़ हो जायेगी। पूँजी प्रधान तकनीक के स्थान पर श्रम प्रधान तकनीक को बढ़ावा और छोटे यूनिटों को बढ़ावा देने के लिये अधिक प्रयास की आवश्यकता है। इस देश में लगभग 7 करोड़ 50 लाख से 8 करोड़ तक लोग पूरी तरह बिना रोजगार के हैं। बेरोजगारी इतनी तेजी से बढ़ रही है कि आर्थिक नियोजन से सम्पूर्ण मुद्रास्फीति हुई है और चारों ओर सामाजिक तनाव पैदा हो गया है।

आज स्थिति यह हो गई है कि डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, कलाकार उच्चस्नातक, प्रशिक्षित अध्यापक आदि भी बेकार फिर रहे हैं। उसका कारण है कि



जहाँ काम नहीं होता वहाँ आराम हो जाता है।

वे नौकरी पर आश्रय का जीवन बिताना चाहते हैं। कुछ युवक ऐसे हैं जो अपने माता पिता का निर्देश नहीं स्वीकार करते और नौकरी का प्रश्न स्वयं हल करने में अपनी बेइज्जती समझते हैं। इसलिए प्रत्येक युवक को जो संसार में अपना कदम विजय कामना रखता हो यह आवश्यक है कि वह शीघ्र ही इस बात का निश्चय करे कि वह अपनी सारी शक्तियां को किस काम में लगायेगा। पढ़ना, लिखना व किसी क्षेत्र में भी प्रशिक्षण प्राप्त करना यह मनुष्य को निश्चित निर्देश देता है। इस युग में जहाँ प्रत्येक क्षेत्र में व्यावसायिक होड़ लगी हुई है और जहाँ Cut throat Competition है वहाँ पर तो वही टिक सकेगा जो इस प्रगति की रेस में अपने को श्रेष्ठ सिद्ध कर सकेगा।

हाथ पर हाथ धर कर बैठ जाना मनुष्य के देह धर्म के भी विरुद्ध है। मनुष्य का मन पनचक्की के समान है, जब तक उसमें गेहूँ डालते जायेंगे, तब तक वह गेहूँ को पीसकर आटा बना देगी परन्तु जब उसमें गेहूँ न डालेंगे तब वह स्वयं अपने आपको पीस पीस कर चौपट बना डालेगी। बहुत कम मनुष्य लाभ के कारण जुआरी या शराबी हुआ करते हैं। कुछ काम न करने के कारण केवल समय बिताने के लिए ही जुआ खेलते है या शराब पीते हैं। किसी ने ठीक ही कहा है कि "खाली दिमाग शैतान का घर है।" (Empty mind is the Devil s workshop)

सबसे पहले हमारा यह कर्तव्य होना चाहिए कि हम कुछ न कुछ व्यवसाय अपने लिए पसन्द कर लें। वह व्यवसाय हमारे मन, इच्छा, कार्य शक्ति और स्वभाव के अनुकूल होना चाहिए। स्वाभाविक प्रवृत्ति के प्रतिकूल व्यवसाय करने में सफलता कभी नहीं हो सकती। विचार करने की बात है कि जिस युवक को ईश्वर ने जन्म सिद्ध चित्रकार बना कर भेजा है उसे यदि किसी कारण से उसका पिता विश्व विद्यालय में पढ़ा कर डिग्री दिलाना चाहे तो वह पढ़ने में ध्यान कैसे लगायेगा। इधर प्रोफेसर साहब उसे किताब की बड़ी बड़ी बातें समझायेंगे और इधर वह युवक प्रोफेसर साहब का मन में चित्र बनायेगा। इसी प्रकार एक जन्मसिद्ध संगीतज्ञ, श्रेष्ठ खिलाड़ी, श्रेष्ठ अदाकार कैसे किताबों में दिल लगायेगा। मनुष्य जीवन के असफल होने के दो मुख्य कारण है—पहला यह कि वह कभी कभी अपनी स्वाभाविक कार्य शक्ति के विरुद्ध व्यवसाय में लग जाता है। दूसरा कारण यह है कि मनुष्य व्यवसाय कुशल हुए बिना ही अपने कार्य को शुरू कर देता है। परन्तु जब तक कार्य कुशलता और कामचलाऊ अनुभव नहीं हो जाय तब तक यकायक कोई काम शुरू नहीं करना चाहिए साथ ही उसके सब पहलुओं पर लाभ हानि भविष्य की योजना पर भी पूर्णतया व्यावहारिक रूप में विचार कर लेना चाहिए।

आजकल में पढ़े लिखे लोग केवल मानसिक और लेखक कार्य White Kaulor job करना अधिक पसन्द करते हैं। लोगों में शारीरिक व्यवसायों से एक

प्रकार की घृणा उत्पन्न हो गई है। ढाई सौ रुपये माहवार में नौकरी का मुंशी बनना अधिक पसन्द करेगा, परन्तु अन्य शारीरिक काय करके अधिक द्रव्य पैदा करने में उसे लज्जा मालूम होगी। भारत पाकिस्तान के बँटवारे के समय में लाखों सिन्धी लोग अपनी सम्पत्ति, कारखाने व दुकान, मकान व खेत छोड़ कर भारत में आए, परन्तु अपने परिश्रम के बल पर भारत के कोने कोने में आज सफल व्यापारी, कारखाने के मालिक व प्रतिष्ठित दुकानदार बने हुए हैं। व्यापारियों को भी उन्होंने काफी पीछे छोड़ दिया है। इसके एक जुलूस में एक आदमी दस्तक का नेतृत्व का अवसर प्राप्त हुआ उसमें उसका भाव था कि चन्द्रमा पर भी सिन्धी ही अपनी पहिली दुकान खोलेगा। यह है परिश्रमी व्यक्तियों का साहस जो परिस्थितियों को अपने अनुकूल बनाने की दृढ़ इच्छा रखते हैं।

लेकिन आज परिस्थितियाँ ऐसी हो गई हैं कि अपनी रुचि के अनुकूल व्यवसाय नहीं मिलता है। इस समय भी निराश होने की आवश्यकता नहीं है। भारत में आज इतने व्यवसाय नहीं हैं जिसमें अपनी प्रवृत्ति के अनुकूल ही उनका चुनाव किया जा सके। ऐसी सकटकालीन परिस्थिति में यदि व्यक्ति परिश्रमी हो तथा उसमें किसी भी क्षेत्र में अपने को जमाने के लिए संघर्ष करने की प्रवृत्ति हो तो अपने परिश्रम से वह अच्छा विद्वान, राजनीतिज्ञ, यशस्वी, व्यापारी इत्यादि सब कुछ बन सकता है। माना कि वह अच्छा कवि नहीं बन सके तो भी खासा तुकबन्द तो बन ही सकता है और आज के युग में तो तुकबन्द भी अच्छे कवियों को पीछे छोड़ जाते हैं। होना चाहिये उनमें व्यावहारिकता, सूझबूझ व समय से लाभ उठाने की बुद्धि।

यह तो सही है कि बाल्यावस्था के कार्यों से यह जाना जा सकता है कि बालक की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ किस ओर हैं। जो लड़का बाल्यावस्था में कालिदास बनने को पैदा हुआ है, वह छोटी उम्र में भी अच्छी कविता कर सकता है। जो भविष्य में शिवाजी बनता है, वह बचपन में लड़कों की सेना बना कर सेनापति का काय भी किया करता है और जो भविष्य में विख्यात अमीर अली ठग बनता है वही लड़का पहिले भुट्टे चुराकर अपना पहला पाठ सीखता है। यह भी सही है कि बचपन व युवावस्था में जिन पर समाज व सरकार द्वारा अत्याचार किये गये हैं वे भविष्य में कुख्यात डाकू भी बन गए हैं। जिनको बचपन से ही चोरी करने की आदत या कुसंस्कार पड़ जाते हैं मौजमस्ती की आदत पड़ जाती है उनका भविष्य में, यदि मौजमस्ती के लिए पैसा न मिलता वे गुंडागर्दी करके जोर जबरदस्ती या ठगी करके पैसा कमाते हैं तथा भविष्य में कुख्यात ठग व तस्कर बन जाते हैं जो समाज व देश के लिये कलंक होते हैं। परन्तु कई दफा ऐसा भी होता है कि बाल्यावस्था में भविष्य जीवन का पूर्ण प्रतिबिम्ब नहीं दिखता है परन्तु यदि उसमें प्रारम्भ से ही परिश्रम, धैर्यवान व साहस जैसे गुणों की शिक्षा, खेलकूद प्रतियो-

पिताओं द्वारा व अन्य साधनों के द्वारा दी जावे तो वे बालक भविष्य में अपना व्यवसाय स्वयं चुन कर जीवन में सफलता प्राप्त कर लेते हैं।

जिस तरह इस सृष्टि की प्रत्येक वस्तु में एक एक विशेष गुण रहता है उसी प्रकार प्रत्येक मनुष्य में भी कुछ छिपे कार्य करने की शक्ति अवश्य ही रहती है। यह शक्ति अथवा स्वाभाविक प्रवृत्ति चाहे किसी विशिष्ट अवस्था अथवा परिस्थिति में न भी मालूम हो सके परन्तु यह ऐसी दृढ़ और उत्कृष्ट होती है कि वह आप ही आप प्रकट हो जाती है। उसे कोई छिपा नहीं सकता। आवश्यकता है आज के युवकों के सामने समस्त व्यावसायिक क्षेत्रों का पूर्ण चित्र रेडियो, समाचार पत्र टेलीविजन व अन्य प्रचार साधनों के माध्यमों से उनके सामने स्पष्ट चित्र रख दिया जावे जिससे कि वे अपने में छिपे कार्य करने की शक्ति का पूर्ण उपयोग कर सकें।

जब हम अपनी रुचि और प्रवृत्ति के अनुसार कोई व्यवसाय चुनलें तब फिर हम उसमें हजारों बाधाओं के होने पर भी लगे रहना चाहिये। बहुधा युवावस्था में कुछ कष्ट उदासीनता अथवा सम्बन्धियों द्वारा निरुत्साहित करने पर युवकगण हताश होकर अपने इच्छित व्यवसाय को यह समझ कर छोड़ देते हैं कि कदाचित वे किसी दूसरे व्यवसाय में लग जाने से अधिक सफलीभूत होवें परन्तु यह बड़ी भारी भूल है। जीवन संग्राम में विजय प्राप्त करने के लिये अपनी प्रवृत्तियों के अनुकूल व्यवसाय चुनने की जितनी आवश्यकता है उससे बढ़ कर उसमें दृढ़तापूर्वक लगे रहने की आवश्यकता है। सभी धन्धों या व्यवसायों में लाभ व हानि होता है परन्तु अपने धन्धे में कई दफा हानि हो नजर आती है पर ऐसा होना सम्भव नहीं है। इसलिए अपने एक बार के व्यवसाय को बिना सोचे समझे नहीं छोड़ना चाहिये अन्यथा यह स्थिति हो जायगी ' कि न खुदा ही मिला न विसाले सनम, न इधर के रहे न उधर के रहे। हमें व्यवसाय को छोड़ने या चुनने में चपलता अथवा जल्दी नहीं करनी चाहिये। कभी कभी मनुष्य जब व्यवसाय में हजार प्रयास करने के पश्चात भी सफल नहीं होता तब उसे अपने व्यवसाय को बदल कर दूसरा चुनने की आवश्यकता होती है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि उसने व्यवसाय चुनने में बड़ी गलती की। इसका कारण बुरी संगति, अचानक घटना, माता पिता की दुर्घटना होनता अधूरी शिक्षा समय का दुरुपयोग व समय से काम न करने की प्रवृत्ति के कारण अथवा धन के अभाव के कारण हो सकती है। आज भारत सरकार ने राष्ट्रीय बैंकों से कम ब्याज पर व्यवसाय के लिये ऋण देने की सुविधा प्रदान की है, तथा प्राप्त ऋण को आसान किश्तों में चुकाने की व्यवस्था की है। आजादी से पहिले धन की कमी के कारण व्यवसाय प्रारम्भ करने का कोई साहस भी नहीं कर सकता था। वही लोग व्यापार या व्यवसाय प्रारम्भ करते थे जिनके यहाँ पुश्तैनी काम चला आ रहा था पर अब ऐसा नहीं है। अब तो सुविधा है परन्तु इससे लाभ वही उठा सकता है जिसमें तकनीकी श्रेष्ठता व बुद्धि की प्रखरता हो।

प्राय यह भी देखा जाता है कि अनेक युवक उस व्यवसाय को छोड बैठते हैं जिसमे थोडे से ही अधिक परिश्रम से वे सफलीभूत हो गये होते। जो व्यवसाय जितना ही अधिक अच्छा होगा उसमे सफलता प्राप्त करने के लिये उतना ही अधिक समय और परिश्रम भी लगेगा। पहिले वर्णाश्रम धर्म के कारण बाप बेटे को व बेटा पोते को वह व्यवसाय सिखा दिया करता था जिससे वह इसमे स्वत ही दक्ष बन जाता था तथा जोखिम नही रहता था, परन्तु अब व्यवस्था मे परिवर्तन आ गया है। सबको ही सब कार्य करने की स्वतन्त्रता है व कार्य कोई भी छोटा बडा नहीं है। जूता बनाना कपडे धोना आदि हेय दृष्टि से नही देखे जाते। जिस व्यवसाय को करना पडे, उसे घृणा की दृष्टि से मत देखो। कई लोग कहा करते है कि हम अपनी योग्यता के अनुकूल व्यवसाय नही मिला। अत हम अपनी योग्यता को बरबाद कर रहे है। इस तरह की व्यर्थ की बकवास के कारण वह अपना तिरस्कार स्वयं ही कर रहा है। क्योकि जिसमे थोडी बहुत आश्चर्यजनक योग्यता विद्यमान है वह किसी न किसी रूप मे अपनी योग्यता दिखा ही देगा। इसलिये अपने व्यवसाय की तुच्छता की शिकायत करते रहने या बदल उसे उच्च और कुलीन बनाने के लिये मनोपूर्वक लगे रहना है। इससे ही अधिक लाभ और ख्याति मिलेगी। बार बार व्यवसाय बदलने से बाजार मे पैठ नहीं जमती है, यह ध्यान रहे। व्यवसाय को अपना कर्तव्य समझकर उसके सम्पादन मे लग जाना ही श्रेयस्कर है।

हमारे देश की योजना मे भी पूँजी प्रधान तकनीक के स्थान पर श्रम प्रधान तकनीक को बढावा देना और छोटे यूनिटो को बढावा देने के लिये अधिक धन का प्रावधान करना होगा। छोटे तथा कुटीर उद्योगो के विकास तथा आधुनिकीकरण के माध्यम से दूसरी ओर स्थानीय कुशलता तथा तकनीक के माध्यम से बेरोजगारी मे कमी आ सकती है। सातवी योजना मे 3 लाख करोड रु० की राशि खर्च करने का जो प्रस्ताव है उससे कोई लाभ मिलने वाला नहीं है क्योकि उसमे केवल 10 प्रतिशत लोगो को ही काम मिलेगा। इस देश मे बेरोजगारी इतनी तेजी से बढ रही है कि आर्थिक नियोजन की सम्पूर्ण प्रक्रिया का औचित्य ही घट गया है। योजनाओ से इतनी मुद्रा स्फीति हुई है कि चारो ओर सामाजिक तनाव पैदा हो गया है। उद्योगो के प्रसार पर ध्यान दिया जावे राजनैतिक स्थिरता और आर्थिक परिवर्तन को सुनिश्चित करने के लिए एक शान्तिपूर्ण क्रान्ति की अत्यन्त आवश्यकता है।

आज की परिस्थितियो मे युवको का कर्त्तव्य

हमारे युवको मे विचारो का अभाव सा है और उनमे पराक्रम नाम की कोई चीज नही रही है। ईसाई मिशनरियाँ अपने धर्म के प्रभाव से पिछडे क्षेत्रो मे जाकर मुफ्त मे दवा बांटते है शिक्षा का प्रसार करते है परन्तु हमारे -

युवको म राई उत्साह नहीं है। पाकिस्तान–भारत के 1971 के युद्ध न इस देश के युवका म उत्साह व वीरता का वातावरण बनाया, आज वसा उत्साह यहा देखने को नहीं मिलता। जो स्वय युद्ध करता है उसके नागरिक और बनते हैं सब जानते हैं। अग्रेजो के बारे म महात्मा गाधी के नेतृत्व म भारतीयो ने देश की आजादी की लड़ाई लड़ी तो उनका चरित्र बना, वीरता की भावना उत्पन्न हुई। युद्ध म हानिया है तो लाभ भी हैं, परन्तु आज का युवक निठल्ला है उसको बिना परिश्रम अर्जन मिल रहा है जीवन म सघर्ष का नाम नहीं है। वियतनाम व इजराइल का युद्ध का अनुभव है वहा के युवक वीर बन गए हैं। अब उस देश के काला बाजार किया स भी वहाँ के युवक निपट लेंगे। ईरान व ईराक म अब युद्ध हो रहा है वहा भी युद्ध का अनुभव हो रहा है। वीरता की परीक्षा हो रही है। भारत म हजारो वर्षों स कोई युद्ध नहीं लडा गया अत वीरता क्या होती है इसका हमें अनुभव नहीं है। आसाम के युवको न अपने अस्तित्व के लिए सघर्ष किया है, ये ही युवक एक दिन वीर बन कर निकलेंगे। जर्मनी दो युद्ध के कारण तबाह हो गया, परन्तु पुन उठा, खड़ा हुआ व आज के राष्ट्रो को चुनौती दे रहा है। जापान युद्ध के कारण बरबाद हो गया था परन्तु पुन उठकर पहिले स भी अधिक बलवान हो गया।

अग्रेज कौम का इतिहास वीरता, अभियान व युद्ध की कहानियो से भरा पडा है तो आज भी उस देश की गणना श्रेष्ठ देशों की गिनती म आती है, परन्तु भारतवर्ष न क्या किया? केवल आक्रमणकारियो स अपना बचाव नहीं कर सका तो विदेशियो के गुलाम बन गए। किसी देश पर आक्रमण करना न्यायसगत नहीं है लेकिन जब विदेशी ताकतें आप पर लगातार आक्रमण करती हैं तो क्या आप बचाव ही करते रहेंगे। शान्तिकाल म भी युवको के पास करने को बहुत है। वे सुयोग्य अध्यापक होकर छात्रो के जीवन की दशा बदल सकते हैं, उन्हें उत्तम सुसस्कृत करने म सहयोग कर सकते हैं। डॉक्टर बनकर इस वर्ग म जो धनलिप्सा प्रवेश कर गया है उन्हें मानवीय साहस से अपदस्थ करके, दीन दुखिया की सेवा कर सकते हैं। उत्तम व्यापारी बन कर सकटकालीन परिस्थिति म अन्न के गोदामो को खोलकर गरीब व भूखे लोगो म बाट सकते हैं। ईमानदार व सच्चे वकील बन कर झूठ की पैरवी करने वालो को परास्त कर सकते हैं। मिलावट करने वालों झूठी दवा बनाने वालो को पकड़वा सकते हैं। चुनाव की प्रथा ने हमारे सारे नतिक मान्यताओ को धराशायी कर दिया है। एक विधानसभा के सदस्य की या ससद के सदस्य के लिए खर्च की सीमा 25 हजार या एक लाख है। ये सदस्य वोट के लिए शराब पिलाना कम्बल बाँटना रिश्वत के तौर पर हजारो रुपय बाँटना इसी शराब और धन का उपयोग करना तथा सारी नतिकता को एक तरफ उठाकर रख

देना, उनकी विजय का कारण है। खर्चे के रिटन 25 हजार पेश किये जाते हैं। परन्तु चुनाव पर लाखों रुपये खर्च किये जाते हैं मानो चुनाव क्या हुआ झूठ का कारोबार हो गया बेईमानी का, दुराचार का आधार बन गया। आधार जब झूठा बेईमान व दुराचार का बन गया तो ऐसे नेताओं का प्रारम्भ से ही आचरण भ्रष्ट हो गया। इस प्रकार के चुने हुए प्रतिनिधि तो झूठ, दुराचार व बेईमानी का ही समर्थन करेंगे। यदि वे सच्चाई की जगह जगह भाषण देंगे तो ऐसे भाषण निष्प्रभावी होंगे। अतः युवकों का कर्त्तव्य है कि वे देश में ऐसी भावना जाग्रत करें जिससे हमारे चुनाव कानून धर्म सम्मत व न्यायसंगत हों। अभी हाल ही में दल-बदल पर रोक लगाने के लिए कानून बनाया गया है। आशा है इससे चुने हुए प्रतिनिधि जो धन व लोभ से पार्टियां बदल लेते हैं, उन पर रोक लगेगी।



संतान के प्रति माता-पिता के कर्तव्यबोध का मूल्यांकन

अपने बच्चों को अपनी शक्ति और प्रकृति के अनुसार अपनी महत्वाकांक्षा चुनने और उसके लिये यत्न करने का अवसर देना ही विवेक है। यह विवेक आप में कितना है इस जाँच की प्रश्नावली से नापें—

(1) क्या आप इसका ध्यान रखते हैं कि घर पर और स्कूल में बच्चों से जो माँग की जाती है, वह उनके बूते के भीतर है। (हाँ/नहीं)

(2) क्या आप ठीक से जान समझ गए हैं कि आप अपने बच्चे से किस प्रकार की सफलता की आशा रखते हैं। (हाँ/नहीं)

(3) क्या आप इसकी जाँच करते रहते हैं कि बच्चों से आप उचित आशायें ही रखते हैं। यह आशा आपकी अपनी जरूरतों से उपजी है या अपने बच्चे की जरूरतों से। क्या यह आशा इस बच्चे की शक्ति, स्वभाव और पृष्ठभूमि से मेल खाती है। (हाँ/नहीं)

(4) क्या आप अपनी माँगों व स्कूल की माँगों में ऐसा मेल बैठा रहे हैं कि बच्चा दो परस्पर विरोधी माँगों में न फँस जाय। (हाँ/नहीं)

(5) क्या माता पिता के रूप में आप दोनों बच्चों के विषय में अपने ध्येयों में इस तरह ताल मेल बैठा लिया है कि बच्चा दो परस्पर विरोधी माँगों में न फँस जावें। (हाँ/नहीं)

(6) क्या आप बच्चे को इस बात के लिये मदद दे रहे हैं कि वह अपने आगे वाजिब और सम्भव ध्येय ही रखे। (हाँ/नहीं)

(7) क्या ये ध्येय उसके अपने ही ध्येय हैं आपके रूपान्तर तो नहीं। (हाँ/नहीं)

(8) क्या आप विभिन्न उम्र के बच्चों की प्रकृति और वातावरण के बारे में काफी कुछ जानते हैं जिससे अपनी माँगें उनके स्तर के अनुरूप ही रख सकें। (हाँ/नहीं)

(9) क्या आप बच्चों के व्यक्तित्व, स्वभाव, क्षमता आदि के अन्तर पर पर्याप्त ध्यान देते हैं और यह मानते हैं कि सब बच्चे एक ही प्रकार की सफलता प्राप्त नहीं कर सकते। (हाँ/नहीं)

(10) बच्चों की अपने सम्बन्ध में जो तस्वीर है उसमें भी क्या आपकी उतनी ही रुचि है जितनी कि आपकी अपनी निर्धारित की हुई सफलता में है।
(हां/नहीं)

(11) क्या सफलता की आपकी व्याख्या भौतिक सिद्धि के बजाय व्यक्तित्व की परिपूर्ति को ज्यादा महत्त्व देती है। (हां/नहीं)

(12) क्या आप बच्चे को स्पष्टतः बता चुके हैं कि उसे क्या करना है, क्या बनना है, बजाय उसके सामने 'मैत्रीपूर्ण बनो', 'सारा से भिन्न बनो', विश्वसनीय बनो' जैसे अस्पष्ट ध्येय रखो। (हां/नहीं)

(13) क्या आप बच्चे को इसमें मदद देते हैं कि वह कदम ब कदम अपने ध्येय की ओर बढ़े, बजाय इसके कि एक साथ ही एक सपाटे में शानदार विजय पा लेने की कोशिश करे। (हां/नहीं)

(14) क्या आप बच्चे से अपना अभीष्ट व्यवहार कराने के लिये उसे अनुभव कराते हैं कि ऐसा व्यवहार करने का तुरन्त लाभ मिलता है। (हां/नहीं)

(15) क्या आप बच्चे को यह महसूस कराने से बचते हैं कि वह चाहे कुछ भी हासिल करले, आप कभी संतुष्ट नहीं होंगे। (हां/नहीं)

(16) क्या आप प्रशंसा करने और शाबासी देने में उदार हैं। (हां/नहीं)

(17) आलोचना करते समय क्या आप इस बात का ध्यान रखते हैं कि बच्चे के समूचे व्यक्तित्व की आलोचना कर डालने के बजाय किसी खास प्रवृत्ति या क्रिया की दोषपूर्णता, उसे समझाई जावे। (हां/नहीं)

(18) क्या आप इसका पूरा ध्यान रखते हैं कि बच्चे को स्कूल में इसलिये विफल नहीं होना पड़े कि वहाँ उससे असम्भव आशाएँ की जाती हैं। (हां/नहीं)

(19) क्या बच्चे के साथ आपका ऐसा सम्बन्ध है कि अपनी निराशा और विफलता आपके सामने कह सके। (हां/नहीं)

(20) भले आप उसे ढाढ़स बँधाने वाले हो, मगर क्या आप उसे कुछ क्षण अपनी निराशा व विफलता व्यक्त करने देते हैं। (हां/नहीं)

(21) क्या आप उसकी विफलता के प्रति अपने को इस तरह तटस्थ बना सकते हैं कि इस निष्फलता के सम्बन्ध में बातें करते समय अपने ही बारे में बोलते रहते हैं, बजाय इसके कि बच्चे के बारे में बोल सकें। (हां/नहीं)

(22) क्या आप बच्चे को यह पता लगाने में सहायता देते हैं कि वह क्यों विफल हुआ और भविष्य में कम सफल हो सकता है। (हां/नहीं)

(23) क्या सामान्यत ऐसी विफलताओं के बारे में आपस बात करने के पश्चात् बच्चा अधिक अच्छी मन स्थिति में दिखाई पडता है। (हां/नहीं)

(24) क्या आप बच्चे को इस चीज में सहायता देते हैं कि वह अपनी विफलता के बहाने ढूँढने के बजाय सच्चे कारण पता लगाए और पहिचाने। (हां/नहीं)

(25) क्या आप अनुभव करते हैं कि आपका बच्चा क्या बनता है, वह आप पर है, उसकी योग्यताएँ आप निर्धारित नहीं कर सकते।

(26) क्या आप अपने बच्चे का पूरा आनन्द उठाते हैं और उससे प्यार करते हैं। (हां नहीं)

प्रत्येक 'हां' का एक अंक दीजिए। अगर आपके कुल प्राप्तांक 22 या अधिक हैं तो उत्तम, 16 व 21 के बीच सामान्य अगर 16 से कम हैं तो समझिये कि आप अपने बच्चे को सफल होने में सहायता नहीं दे रहे हैं।

ஜ

युवकों के स्मरण योग्य गायन

आज देश की बलिवेदी पर, शीश चढाने कौन चलेगा।
आज तिरंगा ओढ, मृत्यु को गले लगाने कौन चलेगा॥
वीरो आज तुम्हें ललकारा, भगतसिंह बलिदानी ने।
वीरो आज तुम्हें पुकारा शेखर की कुर्बानी ने॥
स्वर्ग लोक से तुम्हें निहारा, उस झाँसी की रानी ने।
दूर देश से किया इशारा, उस सुभाष सेनानी ने॥
उन वीरों को दिया हुआ, कौल चुकाने कौन चलेगा।
मातृभूमि की रक्षा हेतु प्राण लुटाने कौन चलेगा॥
हम चलेंगे, हम चलेंगे, हम चलेंगे।

इंसाफ की डगर पर, बच्चो दिखाओ चल के।
ये देश है तुम्हारा, नेता तुम्ही हो कल के॥
दुनिया के रंज सहना और कुछ न मुँह से कहना।
सच्चाईयों के बल पे आगे को बढते रहना॥
रंग लाएगी एक दिन तुम संसार को बदल के इंसाफ
अपने हों या पराये, सब के लिये हो न्याय।
देखो कदम तुम्हारा, हरगिज न डगमगाए॥
रस्ते बडे कठिन है, चलना सम्भल सम्भल के।
इंसाफ ॥
इन्सानियत के सर पर, इज्जत का ताज रखना।
तन मन की भेंट देकर भारत की लाज रखना॥
जीवन नया मिलेगा, अंतिम चिता मे जलके इंसाफ ।

चलो सडक की बाँई पटरी, जाना हो या आना।
आगे पीछे, दायें बायें खूब देखते जाना॥
अगर कहीं दब गए यार तो हो गए लंगडे लूले।
चलने वालो सब सडकों से सावधान हो जाना॥

तृतीय सोपान

प्राचीन भारतीय सस्कृति मे स्त्री

शोचन्ति जामयो यत्र विनश्यत्याशु तत्कुलम् ।
न शोचन्ति तु यत्रैता वर्धते तद्धि सर्वदा ॥
यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता ।
यत्रै तास्तु न पूज्यन्ते सर्वा स्तत्रा फला क्रिया ॥ (मनुस्मृति)

अर्थात्—जिस कुल म स्त्रियो का आदर मान तथा सत्कार होता है उस कुल की वृद्धि और देवता प्रसन्न होते हैं और जिस घर मे उनका अनादर होता है, तथा रात दिन कलेशित रहती है वह कुल उनके शाप से तत्काल नष्ट हो जाता है।

इस प्रकार से भारतीय सस्कृति म स्त्रियो को पूर्ण आदर दिया गया है। प्राचीन भारत मे ऐसी बहुत सी स्त्रियाँ हुई है जिन्होने पुरुषो के समान ही ख्याति अर्जित की है।

गार्गी क्षेत्रीय ब्रह्मनिष्ट थी कि जिसने महर्षि याज्ञवल्क्य से शास्त्रार्थ कर अपनी योग्यता तथा विद्वता का परिचय दिया था। योग विद्या मे राजा जनक को विदेह मुक्त कहा जाता था तो उन्ही के समान देवी भी इस विषय मे बहुत ही निपुण तथा पण्डित थी कि जिसने राजा जनक जसे आत्मज्ञानी महापुरुष को सवाद कर आत्म ज्ञान सम्बन्धी बहुत सी सूक्ष्म क्रियायें बताई थी। वह इतनी अगाध पण्डिता थी कि इनको अपने समान वर न मिलने के कारण ब्रह्मचार्याश्रम से ही सन्यास ग्रहण करना पडा था। महर्षि याज्ञवल्क्य जसे ब्रह्म ज्ञानी तथा विद्वान थे तो उन्ही के समान उनकी पत्नी मत्रयी भी विलक्षण गुण वाली थी कि जिसने अपने पति के साथ ही साथ वानप्रस्थ आश्रम म प्रवेश किया था। एक ओर राम, अर्जुन, नल आदि स्त्रीव्रत का धारण करने वाले थे तो दूसरी ओर पतिव्रत धर्म का पालन करने वाली उनकी पत्नियाँ सीता सुभद्रा तथा दमयन्ती आदि रानियाँ भी थी कि जिन्होने अपने पतियो के साथ जग म घोर आपत्तियाँ सहन करने पर भी साथ न छोडा और न्याय सदा मे मग्न हो अपने पतिव्रत धर्म पर डटी रही। राम, कृष्ण तथा युधिष्ठिर आदि बडे बडे उपदेष्टा उन्ही के समान सीता तथा मन्दोदरी भी विद्वान रावण जैसे योद्धा को सुन्दर तथा नीतिप्रद उपदेश देकर समझाने की चेष्टा की थी। कौशल्या ने सीता को सुमित्रा ने अपने पुत्र लक्ष्मण को, तारा ने बाली

को, कुंती ने अपने पुत्र पाण्डवों को तथा सुभद्रा ने अपने पुत्र अभिमन्यु को सुंदर उपदेश दिया था।

जैन धर्म के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में दृष्टिपात करने पर भी ज्ञात होता है कि जहाँ जैनाचार्यों के अपने उपदेशों से पुरुष आदि ने अपना कल्याण किया वहीं नारी जगत ने भी जिनेन्द्र द्वारा प्रतिपादित धर्म की महती प्रभावना की है। व्रत, उपवास त्याग, तपस्या आदि का रूप स्त्री जाति में बहुतायत से पाया जाता है वहीं ज्ञान जगत में भी नारी जगत अग्रणी रहा है। सुलोचना सती को एकादश अंग साहित्य का अनुगम था। भगवान महावीर का संघ (1) मुनि (2) आर्यिका (3) श्रावक (4) श्राविका, इन चार अंगों में विभक्त था। अनेक आर्य महिलाएँ संसार से विरक्त होकर आर्यिका संघ में शामिल हो गई थी। इनमें प्रमुख साध्वी चन्दना थी। वह वैशाली के प्रमुख राजा चेटक की पुत्री थी व रानी त्रिशला की छोटी बहन थी। श्राविकाओं में भी राजा चेटक की दूसरी पुत्री महारानी चेलना प्रमुख थी। पूर्व संचित अशुभ कर्मों के फल के घटाचक्र के वशीभूत होकर कोशाम्बी में एक सेठ ने उसको मूल्य चुकाकर खरीद लिया। उस सेठ की सेठानी ने डाह के वश उसके हाथ पाँव में हथकड़ी बेड़ियाँ डालकर तहखाने में बन्द कर दिया। सेठ ने उसको छुड़ाया परन्तु हथकड़ी बेड़ियाँ खुल न सकी। ऐसे समय भगवान महावीर आहार की वेला पर चन्दना के सम्मुख आ खड़े हुए। चन्दना ने सूप के कुछ दानों से प्रभु महावीर का पड़गाह किया तथा उसकी अनन्य भक्ति सफल हुई। इसके पश्चात् वह साध्वी होकर दुर्धर तप करने लगी। आत्मज्ञान की अपूर्व ज्योति उसमें चमकने लगी और वह शीघ्र ही आर्यिका संघ की प्रमुख हो गई। श्राविकाओं में भी महारानी चेलना मुख्य रूप से प्रसिद्ध थी, वह भी राजा चेटक की पुत्री थी। चेलना का विवाह मगध सम्राट श्रेणिक के साथ हुआ था व बौद्ध धर्म के अनुयायी थे। रानी चेलना बौद्धों के क्षणिकवाद की निस्सारिता को अच्छी तरह जानती थी अतः वह बौद्ध गुरुओं से अप्रभावित रही। राजा श्रेणिक भी अन्त में जैन धर्मानुयायी हो गये। पूर्ववत अशुभ कर्मों के परिणामस्वरूप श्रेणिक के पुत्र अजातशत्रु ने विद्रोह कर अपने पिता को बन्दी बनाया। उनके देहावसान के पश्चात् वह राजगृह में न रही और महावीर संघ में सम्मिलित होकर आत्म कल्याण करने लगी।

रानी त्रिशला ने तीर्थंकर की जननी होने का सौभाग्य प्राप्त किया था। जब राजकुमार महावीर घर छोड़कर साधु हुए तो उन्होंने सहर्ष उनको विदा किया और स्वयं भी धर्मसाधन में लिप्त हो गई।

कपिलवस्तु के राजा शुद्धोधन की पटरानी महामाया महात्मा बुद्ध की जननी थी। पुत्र जन्म के बाद सातवें दिन ही उनका देहावसान हो गया। शोक संतप्त राजा ने बच्चे को सम्भालने का भार अपनी दूसरी रानी महामाया की

छोटी बहिन महाप्रजापति को दिया व उन्होंने इस महान् बालक का पालन पोषण किया।

विश्व के कल्याणकर्ता ईसा को जन्म देन का सौभाग्य मरियम का है। इनके उचित लालन पालन के कारण ही वे महान् महात्मा व मसीहा हुए। मुहम्मद साहब के पिता की मृत्यु उनके जन्म से पहिले ही हो गई थी। अतः इनकी परवरिश का जिम्मा उनकी माता आमिला पर आ पडा। परन्तु इसका श्रेय हलीमा नामक धाय को है जिसने इन्हें 6 वर्ष की अवस्था तक पाल पोस कर बडा किया। मुहम्मद साहब की जीवन संगिनी खदीजा थी जिसने 25 वर्ष तक मुहम्मद साहब का हर संकट में साथ दिया था। उनके स्नेहपूर्ण प्रोत्साहन, विश्वास और सहारे से मुहम्मद साहब को बडी शक्ति मिली थी।

ஓஓ

महिलाओं की स्थिति तथा सुधार

अशिक्षा, पर्दा प्रथा, बाल विवाह आदि रूढ़ियाँ विकसित हो गई, पर अंग्रेजी शासन ने इन समस्याओं के समाधान हेतु महत्वहीन प्रयास किये। स्वतन्त्रता के पश्चात महिलाओं में सुधार लाने हेतु प्रयास किये गये। इसी हेतु 1975 में महिला वर्ष मनाया गया। जब यह महिला वर्ष विकास कार्य की सफलता के लिये कम लगा तो अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक की घोषणा हुई। महिला दशक देखते देखते बुझ गया पर आधी आबादी की समस्याएँ आज भी उतनी ही दुरूह बनी हुई हैं। नारी एक सजावटी वस्तु के रूप में सदियों से चर्चा का केन्द्र बिन्दु रही है। जब-जब उसने अपने इस दायरे से निकलना चाहा, उसका मजाक बनाया गया। कभी उसे शक्ति या देवी कहा तो कभी अबला और पराश्रिता। इस प्रकार से नारी की स्थिति बड़ी विवादास्पद रही है। नारी स्वयं उत्तरदायी है इसकी। जब उसने अपना जो रूप चाहा, परिताथ किया। कभी वह "अभिसारिका" और "भोग्या" बन कर पुरुषों के हाथ की कठपुतली, अबला बन गई तो कभी सकल्पशील सहयोगिनी की तरह अपने शक्ति स्वरूप को चरितार्थ कर बैठी।

इस "महिला दशक" में महिला विकास के विविध पक्षों की समय समय पर चर्चाएँ होती रही हैं। नारी जीवन से विशेषकर जुड़ी पत्रिकाओं में नारी की आर्थिक, आत्म निर्भरता के चर्चे खूब ही पढ़ने को मिले। उसके बाह्य रूप पर प्रकाश डालने वाले सौन्दर्य प्रसाधनों, जेवरों वस्त्र विन्यास आदि पर भी अथक चर्चा हुई, गृह सज्जा, पुष्प सज्जा के अतिरिक्त पकवान जैसे आचार, चटनी, न जाने कितने स्वादों के व्यंजन बनाने की कला भी नारी को सिखाई जा रही है परन्तु नारी उपभोग के दायरे को कहाँ तोड़ पाई है।

आज वह मातृ शक्ति का प्रयोग क्यों नहीं कर पा रही है। शक्ति शब्द अदम्य तेजोमय है जो जड़ता में नव प्राण संचारित कर देता है। नारी नवप्राण सजग है। मां शब्द में स्वतः स्फूर्त मातृत्व शक्ति आभासित होती है। आज भी नारी में आत्म विश्वास क्यों नहीं। वह आया, मदरसा या बालघरों की आश्रिता क्यों बनती जा रही है। वस्तुतः बालक तभी संसार में आना चाहिये जब माँ उसके निर्माण के लिये पूर्ण सक्षम हो। अन्यथा समाज कंटक ही बनेंगे, सुपुत्र या सुपुत्री नहीं।

अपने इस वक्तव्य में संयुक्त राष्ट्र संघ महासचिव श्री जावियर पेरेज़ डि क्वेलयर ने कहा कि इस वर्ष का ही विशेष महत्व है क्योंकि इस वर्ष संयुक्त राष्ट्र संघ की 40वीं वर्षगांठ है और अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक का अन्तिम वर्ष है। इस वर्ष अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक के दौरान महिलाओं के उत्थान तथा उन्हें समानाधिकार दिलाने के चलाए गए विभिन्न कार्यक्रम अपनी चरम सीमा पर होंगे।

यह उचित होगा कि हम संयुक्त राष्ट्र संघ के महिलाओं के प्रति स्वीकार किए गए दायित्वों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा घोषित मानव के मूल अधिकारों के घोषणा पत्र के परिप्रेक्ष्य में यह देखने का प्रयास करें कि महिलाओं को समानाधिकार प्राप्त हुए हैं या नहीं। उन्हें पुरुषों के समान अधिकार प्राप्त हुए हैं या नहीं। 1946 से ही संयुक्त राष्ट्र संघ महिलाओं के उत्थान के लिए प्रयत्नशील है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये उसने महिला सम्बन्धी आयोग का गठन किया ताकि समाज में महिलाओं को उनका उचित स्थान दिलाया जा सके और इन अधिकारों के सम्बन्ध में विश्व चेतना को जागृत किया जा सके।

इस दिशा में सही उपलब्धियों के लिए कुछ कानूनी सुविधाएँ भी महिलाओं को दिलाई गई। 1952 में एक प्रस्ताव द्वारा महिलाओं को उनके राजनैतिक अधिकार दिलाने की कानूनी व्यवस्था की गई है। इसके पश्चात् 1979 में महिलाओं के साथ किए जाने वाले भेदभाव को समाप्त करने के लिये व्यवस्था की गई।

अन्तर्राष्ट्रीय महिला दशक के दौरान यह प्रयास किया गया कि महिलाएँ राष्ट्र के आर्थिक व सामाजिक विकास में बराबर सहयोग दें और विश्व में शांति की स्थापना के लिये अपना पूरा योगदान दे सकें। विभिन्न देशों की सरकारों तथा गैर सरकारी संस्थाओं का इस काम में विशेष सहयोग रहा है। अतः निःसंकोच रूप से कहा जा सकता है कि महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार दिलाने के लिये गत वर्षों में काफी काम हुआ है। किन्तु महिलाओं के उत्थान में अभी बहुत कुछ किया जाना है विशेषतः भारत में।

महिलाओं को कानूनी अधिकार

इस दिशा में सही उपलब्धियों के लिये कुछ कानूनी अधिकार भी भारतीय महिलाओं के लिये स्वतन्त्रता से पूर्व तथा उसके पश्चात् दिए गए।

स्वतन्त्रता से पूर्व निर्मित कानून—

(1) सती रेगुलेशन 1829—राजा राममोहन राय के सतत् प्रयासों से यह नियम बना। इसके अनुसार हिन्दू स्त्रियों को पति की मृत्यु पर जिन्दा जलाने या दफनाने की प्रथा को अवैध घोषित किया गया ताकि विधवा स्त्री के जीवन का अन्त करने की इस अमानुषिक प्रथा को रोका जा सके। कानून का उल्लंघन करना दण्डनीय अपराध घोषित किया गया। पुलिस अफसरों को आदेश दिया गया कि वह किसी स्त्री के विधवा होने पर उसके पति की अर्थी के साथ रहें और 16 वर्ष

मे छोटी लडकी या जो स्त्री गर्भावस्था मे हो या नशीली वस्तु पान से प्रभावित हो उस पर विशेष निगरानी रखे ताकि वह अपने जीवन का अन्त न कर लें। इस कानून से सती प्रथा पर रोक लग गई और सभी आयु की विधवा स्त्रियो के जीवन पर इसका अच्छा प्रभाव पडा।

(2) महिला शिशु हत्या निरोधक अधिनियम 1870—दहज प्रथा के कारण बालिका उत्पन्न होने पर शोक मनाया जाता था और बालिकाओ को जन्म लते ही मार दिया जाता था। इस कानून से लडकियो की हत्या करना अवध घोषित किया गया।

(3) हिन्दू विधवा पुनर्विवाह अधिनियम, 1856—इस अधिनियम ने विधवा पुनर्विवाह को वैधता प्रदान की परन्तु पुनर्विवाह पर उसका अपने मृत पति की सम्पत्ति पर अधिकार समाप्त कर दिया गया। विधवा को पति के अतिरिक्त किसी अन्य स्रोत से कोई आर्थिक सहायता मिल तो पुनर्विवाह करने पर उस जाय दाद के मिलन पर कोई बाधा नही रखी गई। यदि पुनर्विवाह करने वाली विधवा स्त्री की अवस्था नाबालिग हो तो उसे अधिकार दिया गया कि अपने पिता अथवा सरंक्षक की आज्ञा से वह पुनर्विवाह कर सकती है।

(4) भारतीय विवाह विच्छेद अधिनियम, 1869—इस अधिनियम से पत्नी को यह अधिकार मिल गया कि वह विभिन्न विशेष आधार पर विवाह विच्छेद की अधिकारी है। इनसे उसे व्यभिचारी, शराबी, असाध्यरोग से रोगी तथा दुर्गुणो से परिपूर्ण पति से तलाक पाने का अधिकार मिल गया।

(5) विवाहित स्त्री सम्पत्ति अधिनियम, 1874—इसके अनुसार विवाहित स्त्री की आय तथा बचत उसकी निजी सम्पत्ति मानी जायगी एवं वेतन तथा आमदनी जो उसने प्राप्त किया हो, उससे बचत व अन्य आय के स्रोत बनाए हो, स्त्री की निजी सम्पत्ति मानी जायेगी।

(6) भारतीय उत्तराधिकार कानून, 1925—इस अधिनियम के द्वारा पति एव पत्नी को किसी एक की मृत्यु होन पर एक दूसरे की सम्पत्ति पर समान उत्तराधिकार होगा। इसमे सम्बन्ध पिता की ओर से हो या माता की ओर से, किसी प्रकार का भेदभाव नही किया जावेगा।

(7) बाल विवाह निरोध अधिनियम, 1929—इस अधिनियम से विवाह हेतु लडको की न्यूनतम आयु 18 वर्ष तथा लडकियो की 15 वर्ष निर्धारित की गई ताकि बाल विवाह की प्रथा का निवारण हो सके। 18 वर्ष से अधिक आयु का कोई व्यक्ति यदि किसी का बाल विवाह करवाता है या उसके लिए निर्देश देता है तो वह दण्ड का भागी होगा। यदि कोई बालक या बालिका जो 18 वर्ष से कम हो अपना

विवाह करता है, तो उसकी जिम्मेदारी उसके माता पिता या संरक्षक की मानी जायगी और उन्हें दण्डित किया जायगा। यदि उस बालक/बालिका की संरक्षक कोई स्त्री हो तो उस कैद की सजा नहीं दी जायेगी।

स्वतन्त्रता के पश्चात निर्मित कानून

(1) **कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, 1948**—यह अधिनियम सभी कारखानों पर लागू होता है, इसमें रोग, प्रसूति, विकलांगता, निर्भरता एवं चिकित्सा सम्बन्धी लाभ का प्रावधान है। कारखाना अधिनियम, 1948, खान अधिनियम, 1952 और बागान श्रमिक अधिनियम, 1951।

इन सभी कानूनों के अन्तर्गत, कारखानों और बागानों में महिलाओं को रात को 7 बजे से प्रातः 6 बजे तक काम पर लगाने की मनाई है। इसके अतिरिक्त उनके काम करने का समय, सुरक्षा एवं कल्याण का प्रावधान भी है।

(2) **विशेष विवाह अधिनियम, 1954**—इस अधिनियम के द्वारा अन्तर्जातीय विवाहों को मान्यता प्रदान की गई। विवाह के लिए जातीय प्रतिबन्ध नहीं रहे। इसके अतिरिक्त विवाह के लिए पति की आयु 21 वर्ष तथा पत्नी 18 वर्ष निर्धारित कर दी गई ताकि बाल विवाह की समस्या का निराकरण हो सके। इस अधिनियम के अनुसार धार्मिक कुरीतियों से किये गए विवाह भी इस कानून से पंजीकृत किये जा सकते हैं जिससे पति पत्नी में से प्रत्येक तलाक अथवा परित्याग का अधिकारी हो जाता है।

(3) **हिन्दू विवाह अधिनियम, 1955**—इसमें विवाह के लिए लड़के की आयु 18 वर्ष तथा लड़की की 15 वर्ष निर्धारित की गई है। विवाह के समय किसी भी पक्ष पति अथवा पत्नी का अन्य कोई पूर्व विवाहित जीवन साथी पति अथवा पत्नी जीवित नहीं होना चाहिये। दोनों पक्षों में कोई सदस्य विवाह के समय विकृत मस्तिष्क वाला अथवा मूर्ख एवं पागल नहीं होना चाहिये। विशेष परिस्थितियों में तलाक की अनुमति प्रदान की गई है जिसमें रोग, अत्याचार अथवा अमानुषी व्यवहार विवाह के उपरान्त किसी अन्य स्त्री अथवा पुरुष से लैंगिक सम्बन्ध, धर्म परिवर्तन सन्यास पति बलात्कार इत्यादि शामिल हैं। भरण पोषण वृत्ति का भी प्रावधान किया गया है। बहु विवाह निषेध किया गया है।

(4) **हिन्दू उत्तराधिकार कानून, 1956**—इसमें पुत्र पुत्री का पैतृक सम्पत्ति पर समान अधिकार प्रदान किया गया है। इसके पूर्व पुत्र पुत्री में जो विषमताएँ थी, उनको समाप्त कर दिया गया है। विधवाओं को भी इस अधिनियम से अपने पिता तथा पति के हिस्से की सम्पत्ति का सहयोग मिल सकेगा। वह अब उसका सुविधानुसार उपयोग करेगी।

(5) हिन्दू दत्तक पुत्र ग्रहण तथा निर्वाह अधिनियम, 1956—दत्तक पुत्र ग्रहण करते समय पत्नी की सम्मति अनिवार्य है। स्त्री यदि विधवा है, मानसिक स्थिति से स्वस्थ है बालिग है तो दत्तक पुत्र गोद ले सकती है। पुरुष भी ऐसी अवस्था में ही गोद ले अथवा दे सकता है। यदि उसकी स्त्री जीवित है तो उसको अपनी पत्नी की भी सहमति लेना अनिवार्य है, ऐसा न करने पर दत्तक पुत्र अवैध समझा जायेगा। अविवाहित स्त्री भी, यदि वह बालिग है, दत्तक पुत्र ग्रहण कर सकती है। लड़की अथवा दत्तक पुत्री गोद ली अथवा दी जा सकती है। अविवाहित स्त्री पुरुष द्वारा दत्तक पुत्र एवं पुत्री के मध्य 21 वर्ष का अन्तर होना आवश्यक है। हिन्दू पत्नी अपने जीवन काल में भरण-पोषण के व्यय की अधिकारी है। पति द्वारा छोड़े जाने पर भी वह पति के आश्रित मानी जाती है। विधवा पुत्र वधू अथवा पौत्र-वधू का दायित्व श्वसुर पर होगा। असमर्थ एवं बूढ़े माता पिता का दायित्व पुत्र पर होगा।

(6) महिलाओं एवं बालिकाओं के अनैतिक व्यापार की रोकथाम अधिनियम, 1956—इस अधिनियम के अनुसार वैश्यावृत्ति के उद्देश्य से महिलाओं एवं बालिकाओं का अनैतिक व्यापार करना निषेध है। इस हेतु जो व्यक्ति वेश्या के अड्डे चलाता। वैश्या की कमाई पर जीवनयापन करेगा व सहायता देगा उसे अपराधी घोषित कर दिया जायेगा तथा दण्डित किया जावेगा। जो व्यक्ति वेश्यावृत्ति हेतु स्थान देगा या उसके प्रबन्ध से किसी प्रकार की सहायता करेगा, लड़कियों को वेश्यावृत्ति के लिये प्रोत्साहित करेगा, वह दण्ड का भागी होगा। वेश्यावृत्ति का अड्डा सार्वजनिक स्थल से कम से कम 200 गज की दूरी पर होना आवश्यक है। इसमें मन्दिर, शिक्षण संस्था छात्रावास, अस्पताल या अन्य कोई ऐसा स्थान शामिल किया जा सकता है जिसे पुलिस कमिश्नर या मजिस्ट्रेट प्रतिबन्धित करे।

(7) हिन्दू अल्पवयस्कता एवं अभिभावकता अधिनियम, 1956—18 वर्ष से कम का बालक नाबालिग माना जायगा। बालक की उम्र 5 वर्ष से कम हो तो उसका संरक्षण माता के हाथ में जा सकता है। अभिभावक को नाबालिग की जायदाद गिरवी रखने, बेचने अथवा दान देने का कोई अधिकार नहीं है। वास्तविक अभिभावक अपने बच्चों के विरुद्ध कुछ भी काम नहीं कर सकते।

(8) दहेज निरोधक अधिनियम 1961 व दहेज निषेध (संशोधित) कानून 1984—ऐसी सम्पत्ति या मूल्यवान वस्तुएँ जो चाहे विवाह के समय दी जाय, चाहे विवाह से पहले दी जाये, चाहे विवाह के बाद दी जावे, अगर इनका दिया जाना सगाई या विवाह के लिए एक शर्त है तो वह दहेज कहलायगा। यदि कोई विवाह के सम्बन्ध में वर या वधू के माता पिता या अन्य सम्बन्धियों से या संरक्षक से प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में कोई दहेज मांगता तो वह कारावास और जुर्माने का भागी।

इसकी अवधि 6 मास से कम नहीं होगी। किन्तु दण्ड पाँच वर्ष तक का हो सकेगा और जुर्माना दस हजार रुपये तक हो सकेगा। जो दहेज देगा या लेगा अथवा इसके लिए प्रेरित करेगा उसे 6 मास से दो वर्ष तक का कारावास होगा। जुर्माना दस हजार रुपये या दहेज के मूल्य की रकम तक हो सकेगा। न तो वधु और न विवाह के समय उसे भेंट देने वाले दण्ड के भागी होंगे। यदि भेंट इस निमित्त बिना किसी माँग के वधु को दी जाती है और भेंट नियमों के अनुसार रखी गई सूची में दर्ज कर दी जाती है। नियमों के अधीन ऐसी सूची वधु के द्वारा रखी जायगी। सूची में प्रत्येक भेंट का वर्णन, उसका अनुमानित मूल्य, भेंट देने वाले का नाम और भेंट देने वाले का वधु से सम्बन्ध होगा। सूची पर वर वधु दोनों के हस्ताक्षर होंगे। यदि इनमें कोई भी अपढ़ा लिखा होगा तो उस पर अंगूठे का निशान लगायेंगे। यदि ऐसी सूची नहीं रखी जाती है तो भेंट देने या लेने वाले दोनों ही दण्ड के भागी होंगे।

(9) प्रसूति सम्बन्धी लाभ अधिनियम, 1961—प्रसूति के समय सभी संस्थान, खान, कारखाना व बागान संस्थापक के लिए महिला को प्रसूति अवकाश की सुविधा उसकी औसत दैनिक वेतन के आधार पर देना अनिवार्य है।

(10) गर्भ निस्तारण चिकित्सा अधिनियम, 1971—मानवीय दृष्टिकोण एवं स्वास्थ्य का ध्यान में रखते हुए प्रशिक्षित लोगों द्वारा किसी महिला का गर्भ निस्तारण वैध माना जायगा।

दहेज का दानव—कन्या के जन्म से ही माता पिता को उसके सगाई ब्याह के लिए धन की चिन्ता लग जाती है क्योंकि बिना दहेज के समाज में अच्छा वर नहीं मिलता। इसलिए हिन्दू समाज में कन्याएं नीची दृष्टि से देखी जाती हैं। कन्या और पुत्र के पालन और खान-पहनान में भेद रखने वाले निर्दयी माँ बाप महापातकी हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु इस पाप के लिए दहेज की बुरी प्रथा जारी रखने वाला समाज ही प्रधान जिम्मेदार है। कन्या का पिता यदि मुँह माँगा दहेज नहीं दे सकता तो बहुधा विवाह के पहले ही सम्बन्ध छोड़ दिया जाता है और ब्याह में नहीं देने पर बेचारी लड़की को तरह तरह के ताने माता पिता के लिए अपमानजनक शब्द और गालियों की बौछार सुननी व सहनी पड़ती है। यहाँ तक कि लड़कियों को ससुराल वाले जिन्दा भी जला देते हैं। ऐसे उदाहरण दिन प्रतिदिन अखबारों में पढ़ने व समाज में देखने को मिलते हैं। यह कुप्रथा तब ही बन्द हो सकती जब लड़के वाले दहेज लेना बन्द कर दें। सरकार ने इस सम्बन्ध में कठोर कानून बनाया है जिसके अन्तर्गत दहेज लेने और देने वाले दोनों ही दण्ड के भागीदार होंगे। विवाह में बिजली, बैंडबाजा, सजावट व पार्टी आदि पर अनाप शनाप रुपया खर्च किया जाता है। समाज में प्रतिष्ठा के लिए खर्च करना पड़ता है।

इस धाये माह का निकालकर कम खच करने वालों की प्रशंसा की जावे और उनका उत्साह बढाया जावे।

पुत्री भार है—स्वास्थ्य परिवार कल्याण उपमंत्री कृष्णकुमार ने लोकसभा म एक प्रश्न के उत्तर म बताया कि राज्यों का निर्देश दिए गए ह कि लोग गर्भपात के लिए प्रसव पूर्व लिंग निर्धारण सम्बन्धी जाँच करान जाते हैं उनके विरुद्ध समुचित कार्यवाही की जावे।

वैज्ञानिक प्रगति के कारण यह सम्भव हो गया ह कि प्रसव स पूर्व ही यह जानकारी हो सकती ह कि लडका होगा या लडकी। इसका उद्देश्य यह ही था कि दम्पति अपनी इच्छानुसार चयन कर सकें एव अवांछित संतान से गर्भपात द्वारा मुक्ति पाकर नियोजित परिवार की सृष्टि कर सकें। किन्तु नारी का पूजन वाले हमारे समाज की मान्यताएँ इतनी विकृत हो गई है कि पुत्री बोझ मानी जाती है। अनेकानेक कारणों से इस प्रकार की भावना का एक कारण दहेज भी ह।

यौन भेदभाव की यह चरम परिणति ह जो आज किसी भी आधार पर तर्क सगत नहीं कही जा सकती। किसी जमाने म राजपूतों द्वारा कन्या का जन्म लेते ही कत्ल कर दना यदि नृशंस कृत्य था तो आज विज्ञान के सहारे कन्या का प्रसव हो नहीं होने देना भी कदापि अनुशासित नहीं कहा जा सकता। किसी भी तरह स लडकी से छुटकारा पाने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिल जाए तो उसके भयावह परिणाम हो सकते ह जिसकी कल्पना मात्र स ही रोगटे खडे हो जाते ह। स्त्री पुरुष की आबादी म अत्यधिक असमानता एव तज्जनित यौन असंतुलन तो इसके शीघ्र प्रत्यक्ष होने वाले परिणाम हैं। लेकिन यह प्रवृत्ति निरंकुश हो जावे तो एक स्थिति यह भी आ सकती ह जब वंश परम्परा कायम रखने क लिए स्त्री का मिलना ही दुर्लभ हो जायगा।

सबसे अधिक खेद की बात तो यह है कि यह दुष्प्रवृत्ति तथाकथित उच्च कुल सम्पन्न, शिक्षित एव शहरी लोगों में ही सर्वाधिक व्याप्त है। यह वही वर्ग है जो समाज को दिशा देन का दम्भ भरता है, और यही पर अंकुश लगाने से इसका प्रसार निश्चित रूप स रुकेगा। लेकिन अपराधी वे नहीं ह जो गर्भपात करते ह बल्कि वास्तविक अपराधी वे लोग हैं जो पुत्री को संतान के रूप म देखना ही नहीं चाहते एव इस प्रयोजन क लिए वांछित सुविधाओं की माँग को बढावा देते ह। वास्तविक अपराधी तो वह समाज है जिसम पुत्री बोझ बन गई है। जब तक समाज स्वयं को इस अपराध के लिए दण्डित करने को तैयार नहीं होगा तब तक केवल कानून से ही समाधान भी नहीं होगा। क्योंकि जब तक समाज म जाग्रति नहीं होगी यह कानून निरर्थक ही होंगे। नारी समाज की रीढ है और समाज का दीप भी। यदि उस अग्निराग का तेल प्राप्त हुआ तो समाज को आलोकित करने ...

अटल दीप शिखा बन जायगी। हिंदू संस्कृति के उच्च वर्ग द्वारा तलाक का विरोध किया गया है। परन्तु कोई भी विचारशील मानव यथार्थता की अवहेलना नहीं कर सकता। यदि पति चोर, डाकू, पतित और अन्यायी होने पर तथा दूसरा विवाह करने पर नारी का परवश, वैधव्य, त्याग और तपस्या की वेदी पर अपना अभि स मा या बलिदान करने म असमर्थ होने के कारण व्यभिचार पर उतरने की अ ा सम्मान पूर्वक विवाह कर लेना कही अच्छा है। पत्रिक सम्पत्ति पर समान अ कार प्राप्त करने पर ही नारी को अपने पिता के घर म सम्मान प्राप्त होगा। नि र्वाह अधिनियम द्वारा हिंदू पत्नी अपने जीवन काल मे पति द्वारा छोड जाने पर उस पति द्वारा गुजारा भत्ता प्राप्त होगा। इसम नारी का सम्बल प्रदान किया है। वेश्यावृत्ति के उद्देश्य स महिलाओ एव बालिकाओ का अनैतिक व्यापार करना निषध है इस हेतु जो इसमे सहयोग देगा उस अपराधी घोषित करने स महिलाओ एव बालिकाओ को उचित सरक्षण प्राप्त होगा।

भारतीयो द्वारा पश्चिम के समाज का अन्धानुकरण—पश्चिम का उत्थान वैज्ञानिक प्रगति के साथ हुआ, इस कारण वहाँ के निवासियो के जीवन म औद्योगिक दक्षता और भौतिक सुखो का विशेष महत्त्व है। भौतिक सुखो की चाह और उनकी प्राप्ति के लिए प्रयत्नो का यहाँ विशेष महत्त्व दिया जाता है। इस वृत्ति को भौतिक वाद कहा जाता है। भारतीय जीवन में आध्यात्मिक जीवन का भौतिकवाद स अच्छा समझा जाता है। पाश्चात्य जीवन क मूल्यो और हमारे जीवन के मूल्यो मे बडा अन्तर है। मदिरापान वहाँ के सांस्कृतिक जीवन की एक परम्परा है जिस हम हर हालात म सामाजिक पतन मानते है। किसी पर स्त्री के साथ पर पुरुष का नृत्य करना पाश्चात्य सभ्यता की एक साधारण बात है जिस हम चरित्र का पतन कहग। शादी क बाद पुत्र तथा वरवधू का घर स अलग हो जाना भारतीय परम्परा की दृष्टि स अनुचित है। हमारे देश म यह आशा की जाती है कि विवाहित पुत्र अपने माता पिता के साथ रहकर उनकी सेवा करगा पर पश्चिमी समाज म यह बात अनहोनी समझी जाती है। पश्चिम का सारा समाज व्यक्तिवाद पर आधारित है। वहाँ क समाज म व्यक्ति प्रमुख है। पारिवारिक जीवन मे जो मिठास तथा स्नेह भारतीय समाज म है वह पश्चिम के समाज म नही है। वहाँ व्यक्ति बहुत कम अपने माता पिता भाई बहन के प्रति अपनी जिम्मेदारी को मानता है। वहाँ वृद्ध माता पिता की देखभाल का काय सरकार पर छोडा गया है।

नारी का क्षेत्र

भारतीय समाज म महिलाओ न भी प्रत्यक क्षेत्र म उन्नति करली है। राजनीति म सफलता का कीर्तिमान पूर्व प्रधानमन्त्री इन्दिरा गाँधी न प्रस्तुत किया है। विज्ञान क क्षेत्र म भी महिलाएँ पीछे नही हैं। प्रशासनिक सेवाओ व कृषि म भी महिलाएँ पुरुषो क साथ काम कर रही है। अन्तर्राष्ट्रीय क्रीडा म, कला, संगीत

आदि प्रतियोगिताओं म उन्होंने नाम कमाया ह। आज की नारी अपन आपको हर दृष्टि से पुरुष के समान समझती है और बहुत हद तक ह भी। लज्जा, सहनशीलता, विनम्रता जो पहिले नारी के गुण समझे जाते थे, आज उसकी कमजोरी मानकर छोडे जा रहे हैं।

आज समाज के 85 प्रतिशत लाग नौकरी करने वाली स्त्री को श्रेष्ठ मानत हैं, जो लडकी नौकरी पर नही है, यदि वह मध्यमवर्गीय परिवार स है तो उसके विवाह म भी पचासो बाधाएँ हैं। एसा क्या है? नारी के धनोपार्जन का महत्त्व क्या दिया जाता है? इसका प्रमुख कारण ह दश म निरतर बढती महगाई, आधुनिक फशन, दूसरा की नकल करना आदि ह। इन सभी की पूर्ति क लिए धन की आवश्यकता होती ह और वह उसकी जीवन सगिनी ही नौकरी करके धन कमा कर उसकी सहायक हो सकती है। पर इसका कुप्रभाव उनके बच्चा पर पडता ह। बच्चे माँ के प्यार स वचित होकर अनक बुराइया के शिकार हो जात हैं। जिन परिवारा की आर्थिक स्थिति ठीक नही ह उनकी स्त्रिया को नौकरी करन म कोई एतराज नहीं ह पर जिनकी आर्थिक स्थिति ठीक है उनको शौकिया नौकरी करने के बजाय सास ससुर व अन्य परिवारजना की सेवा करनी चाहिए। इसस न केवल उनके बच्चा का जीवन सुधरेगा अपितु पूरा परिवार सुखी होगा। स्त्री पर नौकरी व परिवार दोना का बोझ डालकर उस कुछ ही दिना म वृद्धावस्था की ओर धकेल देना कहाँ का न्याय है। यदि महिलाओ को अपना गृहस्थ सुखमय बनाना है तो जहाँ तक हो सके, वे नौकरी न कर। खाली समय म व रचनात्मक एव कलात्मक काय कर सकती है।

नारी समस्या पर प्रकाश डालत हुए एक बार महात्मा गाँधी न कहा था—"आज की नारी के कर्तव्य बहुमुखी है गृहस्थी का पालन उसका एक कर्तव्य हो सकता है, सब नही।' असलियत भी यही है। भारतीय नारी स आज यह आशा करना कि वह पुरुष की इच्छाओ की दासी बनकर रह सकेगी, यह दुराशा मात्र ही है। हम यह नही भूलना चाहिए कि नारी के प्रति हमारे इस सकुचित दृष्टिकोण न ही भारतीय नारी को इतना कायर और भीरु बना डाला ह कि वह घर स बाहर के विषय म सोच ही नही सकती।

विदेशी नारिया का उदाहरण हमारे सामन ह जहाँ की सामान्य नारिया भी अपन देश की बाता का समझती हैं और उसे उन्नति की ओर ले जान का प्रयास करती है, वही पर भारतीय नारी घर गृहस्थी, बाल बच्चे, सास ननद और साडी तथा आभूषणा के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं सोच सकती। भारत म आज भी 10 प्रतिशत शिक्षित नारियाँ मिलेगी और उनम भी उच्च शिक्षा के सहारे जो अपना मनोविकास कर सकें एसी नारिया की संख्या उनस भी आधी होगी अर्थात् एसी 5 प्रतिशत नारिया कठिनाई स मिलेगी जो स्वय को और अपन कर्त्तव्या को भलीभाँति समझती है।

लोग कहते हैं घर का त्याग कर नारी को कन्धे पर बन्दूक धर कर युद्ध क्षेत्र में जाना क्या शोभा देता है। निश्चय ही नारी को इसकी आवश्यकता नहीं थी, परन्तु आज देश की स्थिति को देखते हुए इसकी भी आवश्यकता पड़ सकती है। महारानी लक्ष्मीबाई ने क्या अंग्रेजों से अपनी नारी सेना के साथ युद्ध नहीं किया था। युद्ध को छोड़कर भी भारत में ऐसे क्षेत्रों की कमी नहीं जहाँ नारी का सहयोग आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। शिक्षा और डाक्टरी क्षेत्र में भी नारी की उतनी ही आवश्यकता है जितनी पुरुष की। नर्सिङ्ग का कार्य सीख कर सीमा में लगे हुए घायल जवानों की सेवा करने वाली महिलाओं की अत्यन्त आवश्यकता है। आज हमारे देश की कितनी ही माताएँ कुष्ठ रोगों से पीड़ित होकर मृत्यु को प्राप्त होती हैं। महिलाओं की और बच्चों की उचित चिकित्सा महिलाएँ ही करती हैं।

आज जो भारत का 90 प्रतिशत नारी समाज अभी अन्धकूप में ही पड़ा हुआ है उन्हें प्रकाश में लाने का समस्त भार भी आज के शिक्षित नारी वर्ग पर ही है और यह कार्य घर बैठकर नहीं हो सकता। उसके लिए उन्हें घर घर, गाँव-गाँव जाना होगा तभी वे अपनी बहनों को शिक्षित बना सकेंगी और उनको अपने अधिकारों का जो कानून द्वारा उन्हें प्रदान किए गए हैं तथा कर्त्तव्यों से अवगत करा सकेंगी।

यदि नारी घर से बाहर के क्षेत्र में काम करने लगेगी तो गृहस्थी का काम कौन करेगा बच्चों का पालन पोषण कौन करेगा, ऐसी शंकाएँ उठाई जाती हैं। घर से बाहर के क्षेत्र में काम करने का यह तो अर्थ नहीं होता कि वह घर से ही नाता तोड़ लेगी और उसे अपने बच्चों का लालन पालन करने का समय ही नहीं मिलेगा। आज कितनी ही महिलाएँ सेवा भी करती हैं और बच्चों का लालन-पालन और पति की सेवा भी भली प्रकार करती हैं। ध्यान तो उन महिलाओं का जाता है जो आधुनिक क्लबों और मद्यपान पार्टियों में अपना समय जुआ, ताश, डांस आदि अवाञ्छित कार्यों में भाग लेकर अपना समय नष्ट कर देती हैं।

युग युग की त्यागमयी और वात्सल्यमयी नारी घर और बाहर के बीच सामञ्जस्य स्थापित कर सकेगी। जो नारी सेवा नहीं करती हैं यदि वे गृह कार्य और मातृत्व का उचित निर्वाह करते हुए अवकाश का समय बाहर सामाजिक क्षेत्रों में व्यय करें तो देश का कितना कल्याण हो सकता है। समानाधिकार और घर की सङ्कुचित सीमा से बाहर आने का यह अर्थ नहीं कि नारी घर को छोड़कर बाहर ही अपना क्षेत्र बनाए। नारी तो उस स्वच्छन्द पक्षी के समान होगी जो मुक्त आकाश में ऊँचे से ऊँचा उठने की भी शक्ति रखते हुए अपने नीड़ से प्रातः व सायं से भी बंधा रहता है। नारी का जीवन उस गहरे सागर से कम नहीं है जिसके अन्तर में सागर के गर्जन के अतिरिक्त मोती की शान्ति भी निहित है।

ॐ

विवाह दो शरीरों का पवित्र मेल

आज पति पत्नियों में तलाक की प्रथा में वृद्धि हो गई है उनमें कोई तृप्ति नहीं है। जो समाज प्रेम के आधार पर विवाह को निर्मित करेंगे, उन समाजों में तलाक अनिवार्य होगा, क्योंकि प्रेम तरल है, मन चंचल है, शरीर स्थिर और जड़ है। शरीर के तल पर जो विवाह है वह स्थिरता लाता है वह समाज के हित में है। शरीर के तल से ज्यादा पति और पत्नि का कोई सम्बन्ध नहीं है। उनका मिलन एक यान्त्रिक, एक मैकेनिकल रूटीन हो जाता है, जहाँ प्रेम नहीं है वहाँ रोज रोज एक तरह का सम्बन्ध पैदा हो जाता है और यह जीवन भर निभ भी जाता है।

दूसरा तल है मानसिक। जो लोग प्रेम करते हैं और फिर विवाह करते हैं उनका सम्बन्ध शरीर के तल से थोड़ा गहरा मन तक जाता है लेकिन रोज रोज उसकी पुनरावृत्ति होने से थोड़े दिनों में वह भी शरीर के तल पर आ जाता है और यान्त्रिक हो जाता है। दो सौ वर्षों में पश्चिम ने जो विवाह की व्यवस्था विकसित की है वह प्रेम को मानसिक तल तक ले जाती है। इसीलिए पश्चिम में समाज अस्त व्यस्त हो गया है क्योंकि मन का कोई भरोसा नहीं है। 'बायरन' पश्चिम का एक प्रसिद्ध विद्वान हुआ है, विवाह से पूर्व उसका सम्बन्ध कई स्त्रियों से हुआ। जब वह विवाह करके चर्च की सीढ़ियों से उतर रहा था तो उसे चर्च के सामने ही एक और सुंदर स्त्री जाती दिखाई दी और उसका मन उसका पीछा करने लगा। मन इतना चंचल है कि जिन लोगों को समाज को व्यवस्थित करना है उनने अपना मन शरीर के तल पर ही रोक लिया है जैसे भारत। अतः विवाह करो, प्रेम नहीं फिर विवाह से प्रेम आता है तो आये, न आता हो तो न आये। शरीर के तल पर स्थिरता हो सकती है। पश्चिम मन के साथ प्रयोग कर रहा है इसलिए विवाह टूट रहे हैं परिवार नष्ट हो रहे हैं।

तीसरा तल है आध्यात्मिकता का। बेटा नौ मास तक पेट में माँ की सांस से सांस लेता है, माँ के हृदय से धड़कता है, माँ के खून से खून, माँ के प्राण से प्राण, उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं होता वह माँ का एक हिस्सा होता है। इसीलिए स्त्री माँ बने बिना कभी भी तृप्त नहीं हो पाती। कोई भी पति स्त्री को कभी भी तृप्त नहीं कर सकता जो उसका बेटा उसे कर देता है। माँ का निखार, पूरी तरह सौंदर्य, उसके माँ बनने पर प्रकट होता है। बहुधा पति हैरान होते हैं कि उनकी पत्नि माँ बनने के बाद उसमें कम रुचि लेती है क्योंकि उसने मातृत्व का एक गहरा रस ले लिया है। पिता बिल्कुल सामाजिक व्यवस्था है, माँ आध्यात्मिक गरिमा है।

पश्चिम म आज उलटा हो रहा है, आज वहाँ स्त्रियाँ शारीरिक सम्बन्ध म अधिक रस लेती है। माँ बनने स इन्कार करती हैं। वहाँ पर एक नया भय समा गया है कि यहा जनसंख्या कम न हो जाय क्योंकि सीमित नियमन म सख्ती की जा सकती है। लेकिन किसी स्त्री को मजबूर नहीं किया जा सकेगा कि वह बच्चे पैदा ही कर। वहाँ के मनोवैज्ञानिक सलाह दे रहे हैं कि बाल विवाह प्रारम्भ कर दें क्योंकि स्त्री म समझ आ जाने पर वह माँ बनने स इन्कार कर देती है। पति पत्नी का सम्बन्ध उसकी तैयारी है, उसका अन्त नहीं है। यह उसकी यात्रा है और यात्रा सदा कष्ट म होती है मंजिल पर आराम मिलता है। इस कष्ट का अन्त तो वहीं होगा जहाँ स्त्री माँ बन जायगी और पुरुष फिर बेटा हो जायगा। यह तब ही सम्भव होगा जब पति और पत्नि म आध्यात्मिक काम का सम्बन्ध स्थापित हो जायगा। आध्यात्मिक काम को ही प्रेम कह सकते हैं।

तन्त्र व सेक्स—तन्त्र न सेक्स को आध्यात्मिक बनाने का सबसे पहिला प्रयास किया था। खजुराहो म खड़े मन्दिर, पुरी और कोणार्क के मन्दिर इसके प्रमाण हैं। खजुराहो क मन्दिर जिन्होंने बनाये थ उनका ख्याल था कि इन प्रतिमाओं को अगर कोई ध्यान स देखें तो वासना स मुक्त हो जायगा। यह प्रतिमाएँ ध्यान की वस्तु हजारों वर्षों तक रही। जो लोग अत्यन्त कामुक थ उन्ह खजुराहो के मन्दिर म जाकर उन्ह ध्यान करवाने क लिये कहा जाता था कि तुम ध्यान करो इन प्रतिमाओं को देखो और इनम लीन हो जाओ। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि यदि मैथुन की प्रतिमाओं को कोई शान्त होकर ध्यानमग्न होकर देखे तो उसके शरीर म जो मैथुन की विकृत पागल दशा है वह विलीन हो सकती है। यदि रास्ते म दो आदमी लड़ रहे हों तो हजारों काम छोड़ कर भी आप उनका लड़ना देख सकते हैं। इसका कारण है, दो आदमियों का लड़ते देख कर आपके भीतर जो लड़ने की प्रवृत्ति है, वह विसर्जित होती है। उसका निकास होता है वह वाष्पीभूत हो जाती है। एक मालिक स एक नौकर बहुत नाराज था क्योंकि वह उसे अपमानित करता था। यदि यही स्थिति रही तो आवेश म एक दिन नौकर उसे वह जूता भी मार दे परन्तु नौकरी का जो डर था। उसने घर वालों से भी यह कहा तो व इसे एक मनोवैज्ञानिक क पास ल गए। उसने बताया कि मालिक की एक तस्वीर घर म रखे और रोज सुबह पाँच जूते धार्मिक भाव स उसे मारे। पहिले तो उसे यह पागलपन मालूम हुआ, परन्तु जब वह रोज पाँच जूते मारकर दफ्तर जाता तो 15 दिन पश्चात् ही उसे अनुभव हुआ कि वह मालिक के प्रति अत्यन्त विनयशील हो गया। इसका कारण था तस्वीर को जूता मारने स जूता मारने का भाव तिरोहित हो गया, वह वाष्पीभूत हुआ।

आज बच्चे पैदा होना आकस्मिक है, बच्चे बिना बुलाये मेहमान हैं इसलिये बच्चों क प्रति वही प्रेम हो सकता है जो बिना बुलाये मेहमानों के प्रति हो सकता

है। सारी दुनिया मे हमेशा से यह कोशिश रही कि बच्चे से किसी प्रकार बचा जाय। आयुर्वेद के ग्रथो मे दवाइयो का उल्लेख है जिनके लेने से बच्चे नही होगे। आयुर्वेद के तीन चार हजार साल के पुराने ग्रथ इसका विचार करते है और आज का परिवार नियोजन भी इसका खूब प्रचार करता है क्योकि बच्चे बीच मे आ जाते हैं, जिम्मेदारी ले आते है और आप इस जिम्मेदारी से बचना चाहते है। आपको बच्चो से प्रेम नही है अपनी सपत्ति से प्रेम है कि एक हकदार मेरे खून का उसे बचाने के लिये होना चाहिये। वह होना है आपका पुत्र, पुत्री नही। भारत मे पुत्र होने पर थालिया बजायी जाती हैं, मिठाईयां बाटी जाती है परन्तु पुत्री उत्पन्न होने पर मातम मनाया जाता है। पुत्री के पैदा होने के साथ दहेज का दानव आपके समक्ष खड़ा हो जाता है। समस्याएँ बहुत है और मनुष्य को इन्ही मे जीना है और सुख दुःख को समान मान कर चलना है। दुःख सुख है और सुख दुःख है। यह तो मानने वाले पर निर्भर है। दुःख मनुष्य की कसौटी है सुख मनुष्य के अस्तित्व को भुला देते हैं क्योकि मनुष्य नही जानता कि वह कहाँ है। दुःख सबक सिखाने वाला है और सबक सीख लेना दुःख का अन्त है। वह मनुष्य को सच्चे स्वरूप का ज्ञान कराता है।

डा० सर्वपल्ली राधाकृष्णन का कहना है कि—काम वासना को अपवित्र या अशिष्ट समझना नैतिक विकृति का ही चिन्ह है। यह कोई रोग या विकार नही है, अपितु एक स्वाभाविक सहज वृत्ति है। जीवन मे इस समय जो घोर अशान्ति है उसकी यह चेतावनी है कि ऐसा सदाचार जो अवसर पाते ही सत् के बन्धन से निकल भागना चाहे वह कोई सदाचार नही है।

अत सुखी दम्पत्ति का जीवन बिताने वालो के सम्बन्ध टूटे नही, जुड़े रहे। पाश्चात्य जीवन मे जहाँ तलाको की बाढ आ रही है, भारत मे भी ऐसा होने लगा तो हमारा वैवाहिक जीवन जो हजारो वर्षों से बना है पाश्चात्य देशो के समान ही भविष्य मे टूट कर बिखर जायेगा। हमारे आपसी सम्बन्ध की बुनियाद पक्की हो और हम सुखमय जीवन बिता सकें, यही कामना है।

अर्धे भार्या मनुष्यस्य भार्या श्रेष्ठतम

मनुष्य के जीवन को निर्वाह योग्य, रहस्यमय और सुखपूर्ण बनाने मे लिंग भेद बहुत बडा कारण है। समाज के नष्ट होने के भय से समाजशास्त्र मे अविवाहित आयुष्य श्रम अमान्य किया गया है। नीतिशास्त्र मे ऐसा मनुष्य श्रम इसलिये मान्य नही है कि अविवाहितो की बढती हुई संख्या से समाज मे व्यभिचार बढेगा। इसीलिए इन दोनो मे सामजस्य स्थापित करने वाले और परामर्श का चिन्तन करने वाले धर्मशास्त्रो मे यह श्रेयस्कर नही माना गया है। आयुर्वेद शास्त्र मे भी अविवाहित जीवन मान्य नही है क्योकि अविवाहित पुरुष का दीर्घायु और सर्वांगपूर्ण होना

एक प्रकार से असम्भव सा ही है। स्त्री और पुरुष एक दूसरे के पूरक हैं, इसीलिए इन दोनों का परस्पर साहचर्य होना आवश्यक है, और समाजशास्त्र, नीतिशास्त्र तथा धर्मशास्त्र तीनों की दृष्टि से यह साहचर्य विवाह की रीति से होना आवश्यक है। ऐसे भी उदाहरण देखने में आते है कि अविवाहित स्त्री पुरुषों ने भी संसार में प्रसिद्धि प्राप्ति की है परन्तु यह अपवाद ही है।

स्त्री पुरुष का वैज्ञानिक मेल—विद्युत शक्ति सदा धन और ऋण इन दो प्रवाहों के मेल से अपना कार्य करने में समर्थ होता है। इसी प्रकार मानवीय जीवन को पूर्ण बनाने के लिये स्त्री और पुरुष के धन और ऋण जीवन विद्युत प्रवाह का संगम करने की आवश्यकता होती है। पुरुष धन विद्युत प्रवाह है और प्रेरक है। स्त्री ऋण विद्युत प्रवाह है और संग्राहक है। प्रारम्भ से ही पुरुष शिकार को गया और स्त्री ने घर बसाया है। पुरुष आक्रामक है और स्त्री ग्राहक है। सारी सभ्यता का जो स्थिर तत्व है वह स्त्री ने बनाया है। अगर स्त्री न हो तो पुरुष आवारा ही होगा। घुम्मक्कड़ ही होगा। नगर की सभ्यता स्त्री के कारण से हुई। क्योंकि स्त्री एक जगह रुकना चाहती है, पुरुष को उसके आसपास दुनिया बसानी पड़ती है, इसलिये नगर बसे, गाँव बसे, सभ्यता बसी, घर बना। अतः जब स्त्री और पुरुष दोनों का मिलाप होगा तभी इनमें विश्व चेतना का प्रवाह प्रवाहित होगा परन्तु इसके लिये दोनों के ही समस्त गुणों का मेल होना आवश्यक है। दोनों की समस्त वृत्तियों में ऐसा मेल होना आवश्यक है। दोनों की समस्त वृत्तियों में ऐसा मेल होना चाहिये जो आपस में एक दूसरे की विरोधी न हो अपितु पोषक हो और इन दोनों में सामंजस्य या एकरसता आनी चाहिये। दोनों में स्वभाव वैचित्र्य हो तो भी काम चल जायेगा परन्तु यदि वह वैचित्र्य परस्पर पोषक और अविरोधी होगा, तो वह सम्बन्ध स्वर्गीय तथा सुखद होगा और अन्त में उसका परिणाम अपूर्व सुख-दायक होगा।

मनुष्य प्राणी या उसका समूल शरीर भिन्न-भिन्न रासायनिक द्रव्यों की प्रक्रिया से बना हुआ है। एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य में जो विचित्रता देखने में आती है, वह इन्हीं रासायनिक मिश्रणों के भेद के कारण उत्पन्न होती है। मनुष्य का सूक्ष्म मनोमय देह समस्त सूक्ष्म स्थिति और शक्ति इन्हीं रासायनिक प्रक्रियाओं के सूक्ष्म रूप हैं। दो व्यक्तियों का मिलाप एक नवीन रासायनिक मिश्रण होता है। बहुत से रासायनिक द्रव ऐसे होते हैं जो स्वतः पूर्ण रूप से निरुपद्रव्य होते हैं। परन्तु कुछ द्रव्य ऐसे भी होते हैं जिनमें यदि दो विशिष्ट निरुपद्रवी द्रव्यों का मिश्रण कर दिया जाय तो वह मिश्रण एक भीषण विष बन जाता है। कुछ द्रव्य ऐसे भी होते हैं जिनका मिश्रण कभी हो ही नहीं सकता। वे सदा एक दूसरे के विरोधी और आपस में झगड़ा करने वाले ही रहेंगे।

(9) एक दूसरे पर विश्वास व प्यार करें, यह समझकर कि हम दो शरीर एक जीव हैं, किसी भी प्रकार की कोई बात एक दूसरे से न छुपावें।

(10) सभी काम एक दूसरे की आज्ञा, इच्छा व स्वीकृति से हो। मतभेद होने पर समझाकर बीच का रास्ता निकालने का प्रयास किया जावे।

(11) किसी बात पर विवाद होने पर स्वयं ही झगड़े को निपटा लें। किसी दूसरे को मध्यस्थ न बनावें।

(12) अपने आचरण और व्यवहार से बच्चों पर उत्तम संस्कार डालें। यदि कोई बुरी आदत नशा, बीडी, सिगरेट आदि की हो तो यह बच्चों के सामने कभी न करें।

(13) एक दूसरे के सम्बन्धियों का पर्याप्त आदर करें। यदि उनमें कोई बुराई भी हो तो उसे एक दूसरे को न कहें। सास बहू मिलकर रहें।



सास बहू मिलकर रहें

(14) छोटी छोटी बातों या भूलों को अधिक महत्व न दें। यह समझ कर क्षमा का भाव लावें कि ऐसा होना ही था इसमें किसी का क्या अपराध।

(15) पति पत्नी जीवन की गाडी के दो पहिये हैं गाडी जब ही ठीक चल सकती है जब दोनों पहिए समान हों व साथ साथ चलें, इसीलिये एक दूसरे के महत्व को समझें।

(16) जो आदतें एक दूसरे को पसन्द नहीं हों, उनको छोड़ने का प्रयास करें। पत्नी को यदि पति का सिनमा देखना क्लब में जाना, ताश खेलना पसन्द नहीं हो तो उसे छोड दें या कम से कम कर दें।

(17) पत्नी घर को सुघड़ महिला के अनुसार घर की सभी वस्तुओं को करीने से सजा कर रखें। पति का भी कर्त्तव्य है कि इसमें उसे सहायता करे। परन्तु एक दूसरे की रुचि का ध्यान अवश्य रखें।

(18) पत्नी व्यर्थ की निन्दा चुगली में बचे और पति के काम से घर आने पर ही शिकायत न करे। अवसर देखकर वह उसको बाद में बता दिया जावे। पति भी पत्नी की शिकायत करते समय, समय का ध्यान रखें।

(19) दोनों ही घर का बजट आमदनी के अनुसार बना लें तथा उसी के अनुसार चलने का प्रयास करें जिससे फिजूल खर्ची न हो। अपव्यय से सदा बचा जावे।

(20) दोनों ही अन्धविश्वास, छुआछूत, झूठ व ढोंग आदि व्यर्थ की बातों को लेकर घर में कलह नहीं करें। यदि पत्नी अनुभवहीन हो तो उसे जीवन में ऊँच नीच समझा कर अध्ययन का और ज्ञान कर दक्ष बनाया जावे।

प्राथमिकता के अनुसार कर्त्तव्य निश्चित किए जायें। बच्चों का पालन पोषण, पड़ोसियों से व्यवहार व सामाजिक संस्कारों में दान सेवा आदि को आवश्यकता के अनुसार महत्त्व दिया जावे।

दोनों ही सादा जीवन उच्च विचार का उद्देश्य अपने समक्ष रख कर कार्य करें। पति पत्नी को यह अनुभव करावें कि वास्तव में वह गृहस्वामिनी है और उसका दायित्व महत्त्वपूर्ण है। पत्नी के माता पिता से अथवा सम्बन्धी से कोई वस्तु आवे तो सहर्ष स्वीकार करे और उसमें दोष न निकाले। इसी प्रकार पत्नी भी पति के सम्बन्धियों की वस्तुओं में दोष न देखे। पति में जो भी गुण हैं उनकी भीनी भीनी प्रशंसा करें। उसके सौन्दर्य उसके वस्त्र व उसकी वस्तुओं की विशेषता बताएँ। परन्तु उसके सम्मुख दूसरी स्त्री की प्रशंसा तुलना के रूप में न करें।

एक दूसरे की भूल हो जाने पर प्रेम से उसे बतलाएँ, आवेश में आकर कटुवचन न बोलें, अपनी भूल स्वीकार करने में संकोच न करें एक दूसरे को आदर से सम्बोधन करें। पति पत्नि को अपना जीवन साथी समझे सेवक नहीं। पति चाहे कितना ही व्यस्त हो, नित्य प्रति अपना थोड़ा समय पत्नी व बच्चों के साथ बातचीत करने के लिए अवश्य निकालें।

पति अपनी महानता न जताये न उसे यह कहे कि उसकी कमाई पर ही घर चल रहा है। स्त्री का काम भी घर का सम्भालना, बच्चों का पालन पोषण करना भी कम महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं है। पति व पत्नि बच्चों में से किसी एक को अधिक प्यार करते हैं व पक्षपात करते हैं ऐसा व्यवहार घर में कभी कभी कलह का कारण होता है। इससे बचा जावे।

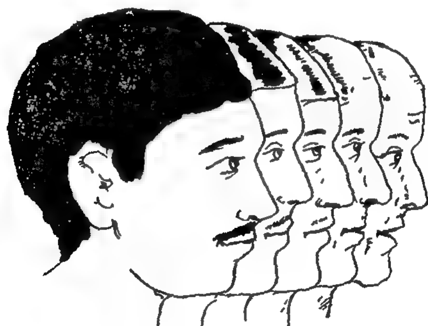
राजनैतिक व धार्मिक विश्वास में यदि दोनों समान विचार रखने हों तो उत्तम है परन्तु मतभेद होने पर एक दूसरे का सहन किया जावे। दोनों को ही परस्पर अथवा अन्य लोगों के साथ व्यवहार में मधुरता, सत्यता तथा स्पष्टता का ध्यान रखना चाहिए।

□

चतुर्थ सोपान

वृद्धावस्था

जन्म से लेकर मृत्यु तक मनुष्य के शरीर में ही नहीं प्रत्येक जीव मात्र के शरीर में अवस्था बदलती रहती है। बालक से जवान होता है जवान से वृद्धावस्था आती है, किसी भी अवस्था को हम टाल नहीं सकते, पर इतना तो अवश्य कर सकते हैं कि जवानी को अधिक वर्षों तक कायम रख सकते हैं। वृद्धावस्था को कई वर्षों तक टाला जा सकता है ऐसा बताया गया है जिससे 70 वर्ष का व्यक्ति अपने



वृद्धावस्था युवावस्था की छाया है।

को 50 वर्ष का अनुभव करे। 50 वर्ष का व्यक्ति इतना तरो ताजा रह सकता है एक शायर की यह उक्ति कितनी ठीक है—बुजुर्गी व अक्लस्त न साल व तवन्गरी न दिलस्त न बमाल। 70 80 वर्ष का व्यक्ति इतना फुर्तीला हो सकता है जैसे

40 50 वर्ष का हो। मनुष्य का स्वप्न रहा है कि वह वृद्ध न हो। जवानी वापस पाने की औषधियां दवा के इतिहास के सहारे न जाने कितने सालों से, कुश्ती वैद्य हकीमों की गुजर बसर हो रही है। आदि युग से ही आदमी अमृत और अमरत्व की तलाश में रहा है। सोमरस और संजीवनी बूटी के नाम पर पता नहीं क्या-क्या खाया पीया जाता रहा है। च्यवन ऋषि का फिर से यौवन पा जाना च्यवनप्राश खूब बिकता है। स्वर्णभस्म, अवलेह, शिलाजीत और अन्य राज वैद्यों द्वारा सुरा सुन्दरी में मस्त रहने वाले राजा महाराजाओं और नवाबों के लिए तजवीज किये जाते रहे हैं। ऐसे उदाहरण बहुत से मिल जाते हैं।

अठारहवीं सदी के अन्त में हार्मोनों की खोज हुई तो वैज्ञानिकों की ललक फिर भभक उठी। एक फ्रांसीसी फिजियोलाजिस्ट ने घोषणा की कि बन्दरों के अण्डकोषों के इंजेक्शन से वह फिर जवान हो गया है। बन्दरों का शिकार होने लगा और हमने कितनी ही विदेशी मुद्रा कमाई। विटामिनों की इस अंधी दौड़ में क्या नहीं आजमाया गया। उत्तेजक रसायन ट्रैंक्विलाइजर, ग्लीसरल पानी कलियां और टैस्टोस्टरोन जैसे सक्रिय हार्मोन, भ्रूण की कोशिकाएं, जेर का रस, रूमानिया के डाक्टर के आविष्कृत उद्दीपक, डाक्टर बोगामोलेट्स द्वारा उत्पन्न से बनाया गया उद्दीपक सीरम, मधुमक्खियों की रायल जैली तथा नाइसिन और उससे म्युल्सन रसायन आदि की एक लम्बी श्रृंखला है। यहां तक कि दूध मुंहे बच्चों का मूत्र तथा युवकों का शुक्र भी यौवनकारी रसायनों के रूप में आजमाया गया है। लेकिन इनमें कोई भी चीज ऐसी साबित नहीं हुई जिससे कोई विशेष लाभदायक परिणाम निकला हो। यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि दीर्घ जीवन तथा निरोग रहने का रहस्य मनुष्य के बाहर नहीं मनुष्य के भीतर ही छिपा है। किसी डाक्टर, हकीम वैद्य की कीमती औषधियों में नहीं मनुष्य के अपने हाथ में है बिना शुद्ध खर्च किये। आखिर बुढ़ापा क्यों आता है? उम्र बढ़ने के साथ साथ शरीर के पुर्जे घिसने लगते हैं। 25 से 35 वर्ष तक शारीरिक और मानसिक विकास का स्वर्ण युग होता है। दिमाग 21 साल तक बढ़ता जाता है और 30 साल से 75 साल और आगे धीरे-धीरे घटता जाता है। दिमाग के आकार में भी वृद्धावस्था में 10 से 22 प्रतिशत तक कमी हो जाती है। दिल और दिमाग की तथा स्नायु पेशी की कोशिकाएं नष्ट होने के पश्चात अपनी जगह दूसरी कोशिकाएं नहीं बनातीं। आंखों के तारों का लचीलापन 12 साल की उम्र से ही घटने लगता है।

श्रवणेंद्रियां दस साल में परिपक्व हो जाती हैं और फिर ह्रास शुरू हो जाता है। दिल के खून पम्प करने की ताकत में 30 से 50 प्रतिशत कमी हो जाती है। फेफड़े अब उतना आक्सीजन नहीं खींचते। पेट की पाचन शक्ति भी दुनिया भर के व्यंजनों से लड़ते लड़ते हार जाती है और गैस और कब्ज की शिकायत

है। गुर्दे पहले से 2/3 काम करने लगते हैं। शरीर में जीवन रस हार्मोन का सचार करने वाली ग्रंथियाँ भी शिथिल हो जाती हैं। एक विशेष अवधि के पश्चात शरीर की कोशिकाओं के विभाजन से बनी नई सतति कोशिकाएँ कमजोर होती हैं फिर उनसे और कमजोर कोशिकाएँ पैदा होती जाती हैं।

शरीर के भीतर कोशिकाओं में चलने वाली रासायनिक क्रियाओं में अतिरिक्त रूप से पैदा हुए विषैले पदार्थ इकट्ठे होते जाते हैं। एड्रीनल, पिट्यूटरी और थाईराईड आदि ग्रंथियाँ अन्ततः बुढापा ले आती हैं। परन्तु इसका सबसे मुख्य कारण मनुष्य की धमनियों तथा शिराओं में तलछट निक्षेप का जम जाना है। यदि नस नाडियों में तलछट के जमने को न रोका जायेगा तो शरीर के अन्य अवयव भी रोग से आक्रान्त होने लगेंगे और सम्पूर्ण शरीर का ह्रास होने लगेगा। परिणाम यह होगा कि युवावस्था में अंगों की जो लचक थी वह जाती रहेगी और अंग अंग में कड़ापन मालूम होने लगेगा। शरीर के अंगों की लचक ही युवावस्था है और लचक का न रहना ही वृद्धावस्था है। धमनियों में चाक सरीखा यह तत्त्व अथवा यूरिक एसिड अधिक जम जाता है तब वे कड़ी पड़ जाती हैं, सकुचित हो जाती हैं। जब धमनियों में तलछट निक्षेप जमने लगता है तब शरीर का अवनतामुखी ह्रास होने लगता है इसी अवस्था को पुरुषों तथा स्त्रियों में वृद्धावस्था कहा जाता है।

बुढापा व मनोभ्रंश विकार—

मस्तिष्क की एसीटाईल कोलिन प्रणाली की खोजबीन में लगे तन्त्रिका वैज्ञानिकों की दिलचस्पी इन दिनों आल्तसहाईमर रोग की गुत्थी सुलझाने में बढती जा रही है। यह मनोभ्रंश के विकार का एक विशिष्ट रूप है जिसमें इससे पीड़ित 50 से 60 प्रतिशत तक रोगी रखे जा सकते हैं। सन् 1907 में जर्मनी के एक तन्त्रिका रोग विज्ञानी आल्तसहाईमर ने सबसे पहले इसका वर्णन मस्तिष्क में होने वाले निश्चित परिवर्तनों के रूप में किया था। कुछ रोगियों के मस्तिष्क की चीर फाड़ के पश्चात वह इस परिणाम पर पहुंचे थे कि इस किस्म के मनोभ्रंश में आदमी के दिमाग के अन्दर कुछ खास तब्दीलियाँ होती हैं।

पक्की उम्र के लोग अब सारे ससार में पहले से अधिक सख्या में पाए जाते हैं और इसलिए आल्तसहाईमर के मामले भी बढते जा रहे हैं। पश्चिमी देशों में 65 साल से अधिक उम्र के लोगों में से 15 प्रतिशत आल्तासहाईमर रोग से कराह रहे थे इनमें से एक तिहाई रोगियों की हालत इतनी खराब है कि उन्हें अपनी देखभाल के लिए बाहरी सहारे की आवश्यकता होती है।

मनोभ्रंश के रोगी की मानसिक क्रियाओं में कमी आना सही फैसला न कर पाना और बुद्धि से जुड़े कामों में चूक होना और उसके साथ ही याददाश्त की कमी

ही मनोभ्रंश के कारण हैं। बाद में इस रोग से पीड़ित व्यक्तियों के मस्तिष्क के उत्तकों की सूक्ष्मदर्शी से जांच करने पर कई तरह के परिवर्तन दिखाई देते हैं। मुख्यत यह देखा जाता है कि तन्त्रिका ततुओं में फंदे पड़ जाते हैं, बुढ़ापे से जुड़े कुछ चिन्ह दिखाई देते हैं, जैसे तन्त्रिकीय चकत्ते। इसके साथ ही दिमाग के कुछ हिस्से में तन्त्रिका कोशिकाओं की संख्या भी घट जाती है। इन फन्दों को दोहरे धागे वाले ततुओं का झुण्ड कहा गया है जो तन्त्रिका कोशिकाओं के आस पास की जगह में चकत्ते से बन जाते हैं जिनमें मरणशील तन्त्रिका कोशिकाओं का मलबा इकट्ठा हो जाता है और उसके चारों ओर उनसे प्रतिक्रिया करने वाली कोशिकाएँ जमा हो जाती हैं। रोग अधिक बढ़ने पर तन्त्रिका कोशिकाओं की संख्या में स्पष्ट कमी देखी गई है।

ज्यों ज्यों आयु बढ़ती जाती है, त्यों त्यों शरीर का तापमान नियमन क्षमता घटती जाती है जिसके कारण बूढ़े लोग अधिक ताप और शीत सहन करने में असमर्थ हो जाते हैं। उनमें विटामिन डी की कमी हो जाती है जो कि अस्थियों के निर्माण के लिए आवश्यक तत्व है। यह भी ज्ञात हो गया है कि आयु के साथ साथ शरीर की रोग प्रतिरोधक शक्ति घटती जाती है क्योंकि उनके अन्दर अस्थायी रासायनिक कचरे के जमा होने से लिम्फोसाईटस क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। इस रासायनिक कचरे को एण्टी आक्सीडेन्ट के सेवन से प्रभावहीन बनाया जा सकता है।

जवानी को कैसे कायम रखा जाय

कम कलारी किन्तु अधिक पौष्टिकता से सम्पन्न आहार जीवन काल बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका रखता है। लेकिन आहार का अनुशासन कठिन ही नहीं कभी कभी खतरनाक सिद्ध हो सकता है।

थकान रहित व्यायाम के लिए एक विद्युत यन्त्र का प्रयोग किया जा रहा है जो मांस तन्त्रिका के लिए लाभकारी है। इसका प्रयोग बीमार व्यक्ति भी शय्या पर लेटे लेटे कर सकते हैं। यह व्यायाम आहार नियमन से अधिक प्रभावी पाया गया है। अब कृत्रिम रक्त और कृत्रिम त्वचा का भी आविष्कार हो चुका है जो बुढ़ापे के निवारण में उपयोगी हो सकता है। बुढ़ापा किसी दवा से ठीक नहीं किया जा सकता। प्रकृति का एक ही उपाय है वह उपाय है घर्षण रगड़ना। Friction शरीर के अंग प्रत्यंग में जो निक्षेप आ बैठे हैं उन्हें रगड़कर दूर करने का क्या उपाय है? यह उपाय है—नस नाड़ियों तथा मांस पेशियों का संकोचन करना, Contraction फिर इनके शिथिलीकरण से उनमें एक रगड़ पैदा होगी जिससे धमनी तन्त्र में जो भी खनिज तत्व या यूरिक एसिड जमा पड़ा होगा वह उखड़ जायगा और रुधिर के साथ बह जायेगा। रुधिर की नाड़ी धाड़ी हो जायगी और शरीर की स्वच्छन्द प्रवाह में जो रुकावट पड़ी हुई थी, वह दूर हो जायगी। अगर धमनी तन्त्र (System) को चूना, गुग्गिया, ... खनिज पदार्थों से मुक्त रखा जाने तो

नियों तथा वाशिराम्रा की दीवारें युवा शरीर की धमनियां तथा कोशिकाम्रा की तरह चमकीली बनी रहगी, उसके द्वारा हृदय विना किसी कठिनाई के रुधिर का सब म्रगों मे पहुँचा सकेगा। शरीर के म्रग प्रत्यग का क्रमश सिकोडना म्रौर ढीला कर देना यही शरीर के कायाकल्प का रहस्य ह। इसी स वृद्धावस्था टल सकती है। इसा से वृद्ध हो रहे म्रगा को युवा बनाया जा सकता ह।

छोटे छाट बच्चा का दरिय व कितन क्रियाशील रहत ह। इसा क्रियाशीलता म उनके यौवन का रहस्य छिपा हुम्रा ह। प्रकृति न म्रारम्भ स बच्चा के जीवन म यौवन की क्रियाशीलता डाल दी ह। वह एक जगह टिक कर बठ नहीं सकता, इस लिए उसक सभी म्रगा को व्यायाम मिलता रहता है।

व्यायाम—व्यायाम बहुत प्रकार स किए जात ह, जस टहलना, दड, बठक करना, कुश्ती लडना, मुगदर घुमाना, तरना, वजन उठाना, दौडना, फुटबाल, हाकी वास्केटवाल, वालीवाल खलना, यौगिक व्यायाम करना, प्राणायाम करना, तल मालिश म्रादि हैं। सभी व्यायाम म्रपनी म्रपनी जगह ठीक ह परन्तु शरीर का लचीला बनान के लिए रक्त वाहिनी नाडिया म खून का सतुलित रूप स प्रवाह हाता रह उसके लिए यागिक व्यायाम, प्राणायाम ही उत्तम एव वैज्ञानिक माना गया है। वृद्धावस्था का रोकन क लिए ता सर्वोत्तम यौगिक म्रासन, प्राणायाम एव मालिश घषण ही प्रधान ह।

व्यायाम करने का समय—व्यायाम करन का समय प्रात काल ह। जब सूय निकलन का समय हा। उस समय की वायु का यदि हम फेंफडा म गहरा सास लकर भरें ता वह हमारे म्रग प्रत्यग का विद्युत शक्ति स भर दती ह। भारतीय शास्त्रा म इस प्राणशक्ति कहा गया ह। दीघ जीवन के लिए जो म्रभ्यास किए जाव उनस तब जाकर लाभ हाता ह जब व प्रात काल सूर्योदय क समय एस स्थान पर किए जावे जहा पर नग्न शरीर पर सूय की रश्मिया पडे। सूय व्यायाम इसक लिए म्रत्यन्त उपयागी ह। शरीर की युवावस्था को बनाए रखने क लिए कलसियम तथा फास फारस की म्रावश्यकता ह परन्तु यह शरीर म तब ही घुलत ह जब उन्ह विटामिन डी प्राप्त होता ह। इसलिए प्रत्यक गृहस्थ को सूय स्नान करना म्रर्थात सूय का किरणा का सारे बदन का लगाना म्रावश्यक ह। सिर पर म्रधिक समय तक धूप नहीं लग इसलिए उस पर तौलिया या म्रन्य कपडा रख लना चाहिय। शेष शरीर को खुला रखकर धूप लगानी चाहिय। सायकाल क समय दिन भर की धूल व गद वायुमण्डल म रहती ह, सायकाल व्यायाम करन स वह फेफडा म जा सकती ह। रात के समय वह नीचे जाती है इसलिए प्रातकाल का वायुमण्डल जब शुद्ध हाता ह तब उसम गहरा सांस लेने से फेफडा मे शुद्ध वायु पहुँचती ह।

यौवन के लिए इच्छा शक्ति—इच्छा शक्ति का हमारे जीवन को नियन्त्रित करने में बड़ा भारी हाथ है। भारतीय विचारधारा तो यह है कि शरीर की रचना ही मन या इच्छा शक्ति से होती है। शरीर विचार का निर्माण नहीं करता, विचार शरीर का निर्माण करता है। मनुष्य के जैसे विचार होंगे, वैसा ही उसका चेहरा बन जायगा।

किसी दुष्ट का चेहरा किसी संत का सा नहीं होता, किसी संत का चेहरा दुष्ट का सा नहीं होता। इसका यही कारण है कि मन विचार संवेग, आदतें, स्वभाव इच्छा शक्ति, प्रेम, द्वेष ये सब जो मानसिक गुण हैं उनका ही मनुष्य की रचना में मुख्य अंग है। भोजन से शरीर स्वस्थ होगा, किन्तु हमारे भीतर मन है, इच्छा शक्ति है, संवेग है इसके साथ उनको भी मिला देने से ही मनुष्य सम्पूर्ण का विकास होता है, और इसीसे चरित्र बनता है। यौवन को उभारने वाले वृद्धावस्था की रोकथाम करने वाले शारीरिक प्रयासों, अभ्यासों, व्यायामों को किया जाय, तब इच्छा शक्ति को इन अंग प्रत्यंगों पर केन्द्रित करना चाहिये, जिनको हम व्यायामों से क्रियाशील बना रहे हैं। उदाहरणार्थ जब हम सीने का व्यायाम कर रहे हों तो सम्पूर्ण इच्छा शक्ति को सीने की मांस पेशियों पर केन्द्रित करना चाहिये। हम शरीर तथा मन दोनों को यौवन बनाये रखने के लिए क्रियाशील बनाना होगा।

मन को दृढ़ निश्चयी बनाना—अगर मन में दृढ़ निश्चय कर लिया जावे कि दीर्घजीवी होना है तो लम्बी आयु होना निश्चित है। अगर कोई यह अनुभव करता है कि अब तो वह वृद्ध हो गया, उसके जीवन में उत्साह व उल्लास नहीं रहा तो उसे समझ लेना चाहिये कि उसका अन्त निकट ही है। मनुष्य उतना बूढ़ा होता है, जितना बूढ़ा वह अपने आपको अनुभव करता है। जब मनुष्य मन में निश्चित कर लेता है कि वह ठीक होकर रहेगा, भले ही कुछ हो जाए और उसके लिए मंत्र पर आस्था रखकर उसका पाठ करता है तो उससे अभीष्ट सिद्धि होती देखी गई है। विज्ञान के अनुसार यह सब काल्पनिक तथा अंधविश्वास हो परन्तु इच्छा शक्ति में इतना बल है कि वह मनुष्य में नवजीवन का संचार कर सकती है। रोगी को जिस डाक्टर पर विश्वास होता है, उसी की दवा से लाभ मिलता है क्योंकि हमारे भीतर की आशा और विश्वास ही उसमें प्राण का संचार करने लगती है। विज्ञान के अनुसार विचार या आस्था से ठीक होना अंधविश्वास का परिणाम है परन्तु ऐसे रोगी ठीक होते देखे गए हैं।

मनुष्य के बाहर का जो ढाँचा है, वह उसके भीतर से ही निर्माण हुआ है। अगर बाहर रोग है तो वह भीतर से ही उठा है, इसलिए बाहर को ठीक करने के लिए अपने भीतर ही जाना होगा। अपने भीतर बैठी इच्छा शक्ति का प्रयोग जिस

ओर होगा, वैसा ही बाहर भी होगा। इस सिद्धान्त को उन शारीरिक व्यायाम, आसन के साथ जोड़न होगा जिसमें मांसपेशियों का तनाव, संकोचन तथा उसके बाद फैलाव (प्रसारण) करें।

शरीर की मालिश–घर्षण—त्वचा शरीर का मुख्य अंग है और उसका काम शरीर के सभी अंगों की रक्षा करना है। त्वचा के दो काम हैं—त्वचा के भीतर लाखों करोड़ों छोटी छोटी ग्रंथियां (Glands) होती हैं, जिनका काम भीतर ही भीतर रसीला रखना है। इसके अतिरिक्त त्वचा में लाखों करोड़ों छिद्र (Pores) होते हैं जिनमें से पसीने के रूप में शरीर के भीतर की गन्दगी बाहर जाती है। अगर यह दोनों काम न हों तो शरीर स्वस्थ नहीं रह सकता। ग्रंथियों का काम शरीर के भीतर रसों का उत्सर्जन (Secretion) है, छिद्रों का काम भीतरी मल का विसर्जन (Extraction) है। अगर शरीर के भीतर ग्रंथियों द्वारा रसों का निर्माण तथा स्राव नहीं हो तो शरीर में रोग आ जाते हैं। यदि शरीर में विषाक्त पदार्थों का विसर्जन न हो तो भी मनुष्य बीमार हो जाता है। ग्रंथियों तथा छिद्रों (रंध्रों) को क्रियाशील बनाए रखने से ही मनुष्य में यौवन का उत्साह बना रहता है। इसके नियमित काम करते रहने से पाचन शक्ति ठीक होती है। आंतें ठीक काम करती हैं, गुर्दे भी निरोग रहते हैं।

त्वचा को स्वस्थ रखने का उपाय है—त्वचा का घर्षण। त्वचा का अच्छी तरह से घर्षण किया जाय, उसे रगड़ा जावे और रगड़ने के पश्चात स्नान कर लिया जाय। इससे त्वचा स्वस्थ रहती है और चमड़े पर सिकुड़न नहीं पड़ती। चमड़े पर सिकुड़न का न पड़ना ही वृद्धावस्था को दूर रखना है। त्वचा की दो तह होती हैं ऊपर की तह को चमड़ा कहते हैं। चमड़ी को मुलायम रखने के लिए लोग क्रीम, पाउडर का उपयोग करते हैं पर उससे चमड़ी के छिद्रों के भीतर कोई असर नहीं होता। कुछ समय तक चमड़ी मुलायम हो जाती है पर लाभ के बदले कभी नुकसान हो जाता है क्योंकि छिद्र बन्द हो जाते हैं और छिद्रों से जो दूषित पदार्थ पसीने के रूप में बाहर निकलता है, वह रुक जाता है। तेल घर्षण से हानि नहीं होती है।

त्वचा के घर्षण का तरीका—खुली जगह में बैठकर शरीर की स्वयं मालिश करें या किसी जानकार व्यक्ति से करावें। स्वयं करने से आपके शरीर को भी ताकत मिलेगी। स्नान के समय मालिश करने से प्रत्येक छिद्र जो रुके हुए हैं उनमें प्राण आ जायेंगे। मुलायम ब्रुश से भी मालिश की जा सकती है। नींद न आती हो, नाड़ी दुर्बल हो, शरीर में अधिक गर्मी हो तो सूखी मालिश, हाथ पांव में सरसराहट हो तो ठंडी मालिश या तेल मालिश, कमजोर और पतले मालिश करें। मोटापा दूर करने के लिए गर्म मालिश या ठंडी मालिश, दोनों में शीत [illegible]

का पोलियो आदि म तल मालिश, ठड गरम व बिजली की मालिश, उपवास म तल मालिस व ठडी मालिस लाभदायक है।

घषण कहाँ से प्रारम्भ करें—प्रथम सिर म कम स कम 2 मिनट करें। उसके पश्चात् बालो की जडो को ब्रुश या हाथ से करें फिर नाक गाल, पीछे की गदन पर करें। फिर छाती पर पट पर पीठ पर फिर नितम्ब पर, जघा पर पिडली पर और अन्त म पर के पजा पर एव पर के तलवा पर करके समाप्त कर दें। इसम कम से कम 18 20 मिनट तो लगाना चाहिये। मालिश के बाद स्नान करें। स्नान ठडे पानी स करें और खुरदरे तालिए से सारे बदन का मलें।

सतुलित आहार लें—प्रोटीन कलसियम, लोहा, विटामिन, आयरन, फासफोरस आदि सभी चीजें उचित मात्रा म मिलने से सतुलित भोजन माना जायगा। अधिकतर लोग केवल चावल गहूँ और दाल तथा तल या घत उपयोग करत ह किन्तु बाकी चीज जो शरीर का सतुलित बनाए रखती है उनका प्रयोग नही करत हैं उनके अभाव म बीमारी का आना शरीर का बेडौल होना स्वाभाविक ह।

कम खाया जाय जिसस पट पर जरूरत स ज्यादा बोझ न पडे। कम खान स उम्र कम नही होती ज्यादा खान से उम्र कम होती है और इसी स लोग मरत हैं पट को कुछ आराम भी दिया जाय। खाना पट का सकोचन (Contraction) है उपवास करना पट का प्रसारण (Relaxation) है। इसी स लम्बी उम्र हो सकती ह। सभी धर्मों म उपवास का महत्त्वपूण स्थान दिया गया है। ईसाई, मुस्लिम, जैन, बौद्ध, हिन्दू सभी धर्मों म उपवास का धम का अग बना दिया गया ह, ताकि मानव मात्र का स्वास्थ्य बना रह और दीघजीवी बनकर चरित्र का निर्माण कर सकें। निम्न शर्तों का पालन करें—

(1) प्रात काल सूर्योदय स पहल उठें।

(2) शौच आदि से निवत होकर स्नान कर।

(3) कम स कम 15 मिनट और अधिक स अधिक 30 मिनट ध्यान या साधना के लिए नियमित रूप दे।

(4) आसन या व्यायाम कर तथा प्रात काल घूमन का कायक्रम रखें।

बुढापे की सोच के कारण भी मनुष्य बूढा होन लगता ह। उसके पोते पड पोते हैं और उसे दादा परदादा कहन लगत हैं "बाबा" दिन म सकडो बार सुनने को मिलता ह तो उसे तजी से बुढापा लाने म और मदद मिलन लगती ह। इसके अतिरिक्त अपने बाल बच्चो, स्त्री व पुत्र वधुओ आदि के रुख के कारण भी उसे दुख होता है। पहिले वह सारे परिवार का मालिक बन कर सचालन करता था जो वह चाहता था वही होता था। अब बाल बच्चे व उसकी स्त्री जो कहती ह उसे हो उसे मानना पडता ह। इसस भी उसके मन पर बोझ पडता ह।

अकेलापन—बुढ़ापे में मनुष्य काम धंधा छोड़ कर बैठ जाता है या नौकरी से अवकाश हो जाता है। दिन पहाड़ के समान लगता है और काटे नहीं कटता। क्या करे यह भी समझ में नहीं आता। उसे जीवन, भार स्वरूप लगने लगता है। वह अपने को जवान बस अनुभव करें।

बुढापा प्रत्यक्ष रूप से शरीर पर दिखाई पडने लगता है, बाल सफेद हो जाते हैं। चेहरे पर झुरियां पड जाती हैं, चमडे पर सिकुड़न होने लगती है। गले के नीचे मांस के झोल से लटकने लगते हैं। कमर झुक जाती है, दिखना कम हो जाता है, थकान अनुभव होती है कान से कम सुनते है, भूख कम लगती है, यह लक्षण एक साथ नहीं होते, धीरे धीरे 45 वर्ष से लेकर 70 वर्ष तक होते है। परन्तु सब के साथ नहीं। कई व्यक्ति 70 वर्ष की अवस्था में भी जवान के समान कार्य करते हैं शारीरिक बुढ़ापे का कारण रक्त परिभ्रमण (Circulation of Blood) का अक्रियाशील हो जाना है। बुढापे में रक्त का सचारण मद पड जाता है।

गृहस्थी की समस्याएँ भी सामने होती है, जैसे लडके लडकियों के विवाह की चिन्ता। जब काम धंधा करते थे या नौकरी करते थे तब तो इस ओर ध्यान नहीं गया परन्तु रिटायर के पश्चात आमदनी भी कम हो जाती है और खर्चे वही रहते है, इस चिन्ता से भी बुढापा जल्दी ही लगता है।

यदि वृद्धावस्था में पति पत्नी से पति अकेला रह जाता है या पत्नि अकेली रह जाती है जिनको इस अवस्था में एक दूसरे की अत्यन्त आवश्यकता होती है तो उनका जीवन अंधकारमय दिखने लगता है। जो लोग बुढ़ापे की योजना बना कर नहीं चलते, आमदनी का ठोस साधन नहीं बनाते, बाल बच्चों पर निर्भर रहते है उनकी दशा तो और भी बुरी होती है। घर में प्रतिदिन के ताने, व्यग्य से वे टूट जाते है और सदैव मृत्यु का आह्वान करते रहते हैं। वे भाग्यशाली है जिनके पुत्र आज के युग मे अपने माता पिता की निस्वार्थ सेवा करते हैं परन्तु ऐसे उदाहरण आज के इस यान्त्रिक युग में विरले ही मिलेंगे। वृद्धावस्था में मित्र भी साथ छोड़ जाते हैं। अकेलेपन की समस्या को हल करने के लिए जीवन में शौक (Hobby) पैदा कर लिया जावे। यदि जमीन हो तो फुलवारी या साग सब्जी लगाने का काम, छोटे बच्चों के साथ खेलने व पढाने का काम, प्रातः स्वच्छ वातावरण में घूमना भजन या गान के कार्यक्रम में भाग लेना, पुस्तकालय में जाकर पुस्तकें पढना या लिखना यदि योग्यता हो। समाजसेवी संस्था में जाकर काम में लग जावे या पदाधिकारी या सदस्य बनकर इन संस्थाओं के माध्यम से समाज सेवा का कार्य करे।

अगर धर्म में रुचि है तो अपनी मान्यताओं के अनुसार धार्मिक संगठनों में भाग ले सकते है। दैनिक क्रिया का विभाजन इस प्रकार करें कि सेवा पूजा आदि में समय व्यतीत हो जावे। राजनीति में जिनको रुचि हो तथा अनुभव हो तो इसमें भी क्रियाशील हो सकते है। यथासम्भव वृद्धावस्था मे [illegible]

जिनमें अनुभव हो अन्यथा धन व समय की वर्बादी होगी। भारत म भी वृद्ध लोगो के लिए स्वीडन की भांति Old Age Association खोली जाव जहाँ पर अपनी रुचि व स्वभाव के अनुसार विभिन्न कार्यक्रमों मे भाग लेकर वृद्धावस्था म भी युवावस्था का आनन्द ले सकते है। सरकार द्वारा वृद्धो के लिए पेंशन व अन्य उपयोगी कार्यक्रम प्रारम्भ किये गये है परन्तु वे पर्याप्त नही है। अकेलेपन की समस्या का हल करने के लिए रचनात्मक कार्य प्रारम्भ करने की आज अत्यन्त आवश्यकता है।

वृद्धो के लिये उपयोगी सुझाव—जो अधिक आयु के हैं उन्ह निम्नलिखित बातो का ध्यान रखना चाहिये —

(1) अपने मन से बूढ़ेपन की भावना दूर भगाव। जिसके जीवन म उत्साह आनन्द, प्रसन्नता रसिकता, स्फूर्ति, ताजगी तथा उमग ह। वह वृद्ध होता हुआ भी वास्तव म युवा है।

(2) कुछ समय सात्विक आमोद प्रमोद तथा हँसी खुशी म अवश्य रह।

(3) बच्चो क साथ प्रसन्न रहे।

(4) सदा हर्ष उल्लास तथा आनन्द की दिव्य भावनाओ म रमण कर।

(5) अपने मन को सदा जवानी की मीठी तथा सरस चेतनाओ तथा दिव्य भावनाओ से इतना भरपूर रखें कि बुढ़ापे का विचार तक भी न आने पाव।

(6) नित्य कुछ समय भजन स्वाध्याय तथा सत्सग तथा परोपकार म अवश्य लगावें व अपने को व्यस्त रख।

(7) प्राणीमात्र क प्रति उदारता विशालता तथा कोमलता और प्रम की भावना अपने हृदय म रखें।

(8) अपनी जिह्वा पर पूरा सयम रखे। भोजन सात्विक करें व अधिक मसाले व गरिष्ठ भोजन स बच।

(9) प्रतिदिन घूमे, कुछ श्रम कर जो बागवानी व घर क कार्य भी हो सकते है।

(10) अपनी मित्र मण्डली भी बनाए रख जिनसे प्रतिदिन कुछ गपशप कर सकें यदि सम्भव हो तो आन्तरिक खेलो (Indoor games) म रुचि लें।

(11) अपने जीवन की योजना बनावें जिससे अपने पुत्र पुत्रियो क विवाह आदि कार्यो स समय पर ही मुक्त हो जाव।

(12) मादक पदार्थ अर्थात नशीले पदार्थों को विष क समान समझ कर त्याग दे। सिगरेट, चाय, काफी भी यदि पीने क अभ्यस्त हो तो उन्ह भी धीरे धीरे छोड़ने की कोशिश करें या कम कर दें।

(13) गर्दन झुका कर न चलें, चलते समय सिर सीधा और सीना उभरा हुआ रखें।

(14) नींद पूरी लें अर्थात 6 से 9 घंटे तक व सोते समय दिन की सब घटना भुलाकर मन की पूर्ण शान्ति स बिस्तर पर लेट। यदि नींद न आती हो तो अच्छी पुस्तकें उपन्यास या कहानियाँ पढ़ें।

द्वितीय पथ

व्यावहारिक गुण

स्वदेश के प्रति गौरव की भावना व भावनात्मक एकता के लिये देश भक्ति पूर्ण प्राथना

सब की नसों में पूर्वजों का पुण्य रक्त प्रवाह हो।
गुण, शील, साहस, बल तथा सबमें भरा उत्साह हो ॥
सबके हृदय में सवदा, समवेदना की दाह हो।
हमको तुम्हारी चाह हो, तुमको हमारी चाह हो ॥

विद्या कला कौशल में सबका अटल अनुराग हो।
उद्योग का उन्माद हो, आलस्य अघ का त्याग हो ॥
सुख और दुख में एक सा सब भाइयों का भाग हो।
अन्तःकरण में गूँजता राष्ट्रीयता का राग हो ॥

कठिनाइयों के मध्य अध्यवसाय का उन्मेष हो।
जीवन सरल हो, तन सबल हो, मन विमल सविशेष हो ॥
छूटे कदापि न सत्य पथ निज देश हो कि विदेश हो।
अखिलेश का आदेश हो, जीवन का यही उद्देश्य हो ॥

आत्मावलम्बन ही हमारी मनुजता का मम हो।
षड्रिपु समर के हित सतत चरित्र रूपी धर्म हो ॥
भीतर अलौकिक भाव हो बाहर जगत का कर्म हो।
प्रभु भक्ति पर-हित और निश्चल नीति ही ध्रुव धर्म हो।

उपलक्ष के पीछे कभी विचलित न जीवन लक्ष हो।
जब तक रहे ये प्राण तन में पुण्य ही का पक्ष हो ॥
कर्तव्य एक न एक पावन नित्य नेत्र समक्ष हो।
सम्पत्ति और विपत्ति में विचलित कदापि न लक्ष हो ॥

उस वेद के उपदेश का सबमें सदा प्रस्ताव हो।
सौहार्द्र और मतैक्य हो अविरुद्ध मन का भाव हो।
सब इष्ट फल पावें परस्पर प्रेम रखकर सवथा।
निज यज्ञ भाग समानता से देव लेते हैं यथा ॥

द्वितीय पथ

व्यावहारिक गुण

विश्व को भारत की देन के प्रति हमारी गौरवपूर्ण भावना

आज से पन्द्रह सौ से तीन हजार वर्ष पूर्व के बीच भारत में बड़े बड़े सम्राट हुए। उनके विशाल साम्राज्य में तत्कालीन भारत में आध्यात्मिक चर्चा के साथ कला, साहित्य एवं सामाजिक विषयों में भी अच्छी उन्नति थी। राजकीय संगठन अपने ढंग का निराला था। भगवान बुद्ध और महावीर के समय में भी जहाँ एक ओर लोग संसार त्याग कर भिक्षु वृत्ति ग्रहण कर रहे थे वहाँ दूसरी ओर व्यापार और राजनीति में भी उन्नति हुई। यहाँ से व्यापार करने के लिए बड़े जहाजी बेड़े दोनों तरफ के देशों को जाते थे। इनके साथ हमारे धर्म प्रचारक भी जाते थे।

भारत से निर्यात काफी होता था। प्रायः सभी चीजें इसी देश में बनती थीं। इसलिए बाहर से निर्यात के बदले सोना आता था। रोम में जब नीरो का राज्य था उस समय दस करोड़ रोमन सिक्कों के बराबर सोना भारत में आया था। रोमन सिक्का करीब ढाई दिरम के बराबर होता था। ग्रीक विद्वान मैगस्थनीज लिखता है कि चन्द्रगुप्त मौर्य का महल बड़ा शानदार था जो कारदार लकड़ी पर सुनहरा काम करके बनाया गया था। धातु पर भी नक्काशी का काम होता था। सिक्कों के अलावा ऐसी मूर्तियाँ भी मिली हैं। कुल्लू में तांबे का लगभग दो हजार वर्ष पुराना एक कलश मिला था जिसके चारों ओर कलापूर्ण नक्काशी का काम था। भारतीय वस्तु कला के प्राचीन समय के अवशेष मोहन जो दड़ो उत्खनन से प्राप्त भगवान ऋषभदेव जो जैन धर्म के प्रथम तीर्थङ्कर हुए हैं, उनके सम्बन्ध में एक प्रतिमा प्राप्त हुई है जो जैन धर्म की प्राचीनता को सिद्ध करती है। अशोक के समय में सांची का स्तूप का निर्माण हुआ जो अपनी कारीगरी के लिए संसार में प्रसिद्ध है।

अशोक के शिला स्तम्भों में सारनाथ का स्तम्भ बहुत प्रसिद्ध है। गुप्त युग के भवन निर्माण कला के सुन्दर नमूने और उत्तर प्रदेश के झांसी जिले में देवगढ़ के दशावतार मन्दिर व सहस्त्रकूट चैत्यालय बड़े ही मनोज्ञ हैं जो अद्वितीय हैं। अजन्ता एलोरा की गुफाएँ अद्वितीय हैं। साहित्य की प्रगति को उपनिषद् और गीता बताती हैं। उस समय का गौतम ऋषि का न्याय दर्शन, कपिल ऋषि का सांख्य दर्शन, पातंजलि ऋषि का योग दर्शन, कणाद ऋषि का वैशेषिक दर्शन, बादरायण ऋषि का वेदान्त दर्शन, जैमिनी ऋषि का भी मीमांसा दर्शन व बृहस्पति ऋषि का

चार्वाक दशन, मनुष्य जीवन के और इस सृष्टि के पीछे क्या सत्य है इसका दिग्दशन कराते हैं। इक्कीस सौ वष पहले पाणिनी जसा व्याकरण लिख गया, वह भी भारत के साहित्य की सबसे बडी देन है।

वर्यात्मक वणमाला उल्टे सीधे रोमन वर्णो के मुकाबले तरतीबवार जमाए हुए पहले स्वर फिर व्यजन वणमाला बनाना उस जमाने म सचमुच अनाखी सूझ थी। इसी वणमाला की कृपा से विदेशी व्याकरणीय ध्वनिक सगीत वण सीख सके। यह साहित्यिक प्रगति प्राय आज से डेढहजार साल पहले तक चलती रही। इसी काल म अश्वघोष, कालिदास, भारवि आदि कई महा कवि हुए जिनका आज भी सब जगह नाम है। विदेशा मे जहा धर्म के नाम पर खून खच्चर हुए वहाँ भारत ससार का सबसे प्रमुख देश है जहाँ विभिन्न विचारधाराओ को समान रूप से फलन, फूलन का अवसर मिला। यहा बुद्ध जो नास्तिक थे, महावीर जो ईश्वर की सत्ता मे विश्वास नही करते थे उनको भगवान की तरह पूजा गया। चार्वाक ऋषि जिन्होने वभव का ही आराम का जीवन माना। श्राद्ध, यज्ञ, होम व अन्य धार्मिक क्रियाओ को जीविका चलाने के लिए किये जाते हैं अत उन्हे भाज्य माना।

यावज्जीवेत्सुख जीवे ऋण कृत्या घृत पीवेत्।

भस्मी भूतस्य देहस्य पुनरागमन कुत

जब तक जीवे तब तक सुख से जीवे, जो घर मे पदाथ न हो तो ऋण लेके आनन्द करे, ऋण देना नही पडेगा। क्योकि जिस शरीर मे जीव ने खाया पीया है। ऋण लिया है उन दोना का पुनरागमन न होगा फिर कौन किससे मागेगा और कौन किसको देगा। यद्यपि यह विचार भारतीय दशन से मल नही खाते फिर भी उनको आचाय और ऋषि की पदवी दी। विचार और दशन के स्तर पर शास्त्राथ होत रहे लक्ष्य था सत्य की खोज। इन्द्रभुति जो ब्राह्मण थे उनको महावीर का दशन अनुकूल प्रतीत हुआ तो वे उनके प्रथम शिष्य हुए और वे गौतम गण धर कहलाए। उन्हाने बिना हीन भावना के उनको अपना गुरु मान लिया।

ऋतु तो दो से चलकर छह तक कब की बन चुकी थी और वष को बारह मास म विभाजित करके उसका नामकरण भी हो चुका था। नव ग्रहो म राहु और केतु को छोडकर बाकी सात ग्रहा पर दिनो के सात नाम रखे गए। मास चन्द्रमा के साथ तिथियो पर आज भी चलता है। तीस मास बाद एक मास बढाकर सूय की चाल से दिन पूरे किए जाते है।

गणितशास्त्र म भारत जगद्गुरु रहा है। वेदी आदि बनाने के लिए ज्यामिती और दशमलव (Decimal) पद्धति का आविष्कार यहीं हुआ। भारत के गणितज्ञ इसा की सातवी सदी तक भी इतने आगे थ कि ग्रीस और यूरोप म गणित म सबसे ऊँचा माना जाता है, भारत म पिछडा हुआ था।

कौटिल्य अर्थशास्त्र आज से करीब 2400 वर्ष पहले लिखा गया था। उस समय अर्थनीति पर विचार करना और उस पर ग्रंथ लिखना किसी भी देश के विद्वानों की समझ के बाहर था।

न्यायशास्त्र में भी भारत बहुत आगे था। भारतीय दर्शनशास्त्र में आज भी दुनियाँ इससे पिछड़ी हुई है। जहाँ औरों का तत्व ज्ञान समाप्त होता है वहाँ से भारतीय तत्व का आरम्भ होता है।

कणाद ऋषि के वैशेषिक दर्शन में 'अणु परमाणु' की तात्विक शोध कर सिद्ध किया कि जगत में सब कुछ गतिमान है। और वह किसी न किसी नियम पर आधारित रहता है नियम निरर्थक नहीं है अतः कोई निष्क्रिय नहीं हो सकता। प्रकृति का नियम आंतरिक रूप में है पर उसका पालन अनिवार्य रूप से करना पड़ता है। छोटी सी टहनी पर छोटे छोटे पत्ते बढ़ने लगते हैं। पत्ते सूर्य की रोशनी से खुराक खींच लेते हैं और वायु से ऑक्सीजन निकाल कर वापस छोड़ देते हैं कार्बन डाइऑक्साइड पेड़ में पहुँचाते हैं। पत्ते बड़े होकर नित्य का यह काम करते ही सूख कर गिर जाते हैं और उनकी जगह नए पत्ते निकलने लगते हैं। पेड़ भी निष्क्रिय पत्ता को नहीं चाहता। ब्रह्माण्ड में निष्क्रिय कोई नहीं रह सकता। छोटा सा कण, उसके भीतर भी ब्रह्माण्ड है। उसके बीच के न्यूट्रोन और प्रोटोन के पुंज के चारों तरफ जैसे सूर्य के चारों तरफ तारे घूमते हैं, उसी तरह इलेक्ट्रोन घूमते रहते हैं। पर पत्ता सूख कर पत्ता नहीं रह जाता। इससे सिद्ध किया जा सकता है कि कर्म का महत्व सबसे श्रेष्ठ है। लोकमान्य तिलक ने कर्म योग की महिमा का गान करते हुए कहा कि कर्म ही धर्म है, कर्म ही जीवन और कर्म ही फल है। निष्कर्म का अर्थ है निष्प्राण हो जाना क्योंकि निष्क्रिय का नाश अवश्यम्भावी है। जल बिना प्रवाह के, वायु बिना वेग के, अग्नि बिना तेज के जैसे मूल स्वभाव से परे हो जाती है कर्म ही कर्महीन मनुष्य अपने मूल से हट जाता है।

मनुष्य जीवन में गुत्थियाँ अक्सर आती रहती हैं। सामने कठिनाइयाँ आने पर मनुष्य का क्या व्यवहार रहता है–कभी शरीर रक्षा और कीर्ति, बंधु प्रेम और धर्म में झगड़ा होगा। ऐसे और भी प्रश्न उठ खड़े हों तो ऐसे समय में क्या कर्तव्य है। अर्जुन के सामने भी ऐसा ही प्रश्न था। जैसे कैंसर होने पर अपनी जीवन रक्षा के लिए मनुष्य अपना हाथ कटवा कर भी फैंक देता है वैसे ही कभी कभी जीवन में धर्म के लिए बन्धु बान्धवों को भी छोड़ना पड़ जाता है। अनासक्ति पूर्वक विचार किए बिना मनुष्य सही कर्म कर नहीं सकता।

मन मस्तिष्क का नियमन, आत्म निग्रह, बिना आत्म ज्ञान के नहीं आता और बिना आत्म निग्रह के सूक्ष्म निर्णय सम्भव नहीं। इसलिये इस देश में अध्यात्म ज्ञान को सदा से ऊँचा स्थान दिया गया है। आर्य धर्म या आगम धर्म यह तो एक ब्रह्म–

ज्ञान प्राप्त करने का आत्मा किया ईश्वर के साथ एक होने का विश्वात्मा म मिलकर एक हो जाने की बात है। जो बात अनुभूति की है वह केवल बुद्धि द्वारा नहीं समझी जा सकती, जानी और देखी जा सकती है। आत्मा अदृश्य और व्यापक है। सृष्टि के लिए वह व्यक्त होता दीखता है। शरीर विशेष की आत्मा को केवल जीवात्मा कहते हैं और बाहर जो कुछ है, जिसका अनुभव होता है वह ब्रह्म है। न दीखते हुए भी जसे नमक पानी म रम जाता है और ऊपर से नीचे तक सब जगह नमकीन है ऐसे ही न दीखते हुए भी आत्मा शरीर म रमी हुई है।

वेद महिमाओं का सम्पादन कृष्ण द्वैपायन न किया इसीलिए वेदव्यास कहलाए। ज्ञान काण्ड का प्रतिपादन करने वाले उपनिषद्, वेद के अन्त म बने, इसलिए उनम प्रतिपादित विषय को वेदान्त कहा गया। उपनिषदो का सार कृष्ण भगवान न आज से तीन हजार या साढे तीन हजार पूव म कुरुक्षेत्र म सुनाया। इतना गहन गम्भीर दशनशास्त्र और किसी भी देश मे नही लिखा गया। पर भारत मे फिर भी ऋषि हुए जिन्होंने 'नेति नेति' कहकर और भी आगे जाने का प्रयत्न किया और अनन्त ज्ञान को ज्ञान का अन्त नही जाना।

विविधता मे एकता—भारतवष की एकता उसकी विविधता मे छिपी हुई है। यह बात नितान्त सही है क्योंकि एकता जितनी स्पष्ट दिखाई देती है उतनी ही उसकी विविधता भी प्रत्यक्ष है। ससार म दो व्यक्ति, दो जगह दो कादना सब दो ही भिन्न है। दो कभी एक नही हो सकते यह आणविक दृष्टि है, इसके पीछे विज्ञान है मनोविज्ञान है और आधुनिक सभ्यता है। पर बाहर दो होते हुए भी सब एक है, यह हमारी नतिक दृष्टि है। आधुनिकता हर जगह भिन्नता और असमानता क्यो देखना चाहती है, क्योंकि आधुनिकता न आज भय का रूप ले लिया है। इसमें भौतिक सुविधाओं की आकाक्षा है और उसको प्राप्त करने की होड लग रही है। नतिकता के क्षेत्र मे कोई छोटा बडा नही है यहाँ पर सब कुछ समान रूप मे विक-सित हो रहा ह।

भारत के मानचित्र पर दृष्टि डालन से विदित होगा कि सबसे पहले तो भारत का उत्तरी भाग है जो हिमालय के दक्षिणी भाग से लेकर विन्ध्याचल के उत्तर तक फला हुआ है। इसक पश्चात विन्ध्या से लेकर कृष्ण नदी के उत्तर तक का यह भाग है जिससे हम दक्षिण का प्लेटो कहते हैं। इस प्लेटो के दक्षिण म कृष्णा नदी से लेकर कुमारी अन्तरीप का जो भाग है वह प्राय द्वीप जसा है। यही तीन भाग प्राचीन भारत के क्रीडास्थल रहे ह। प्राचीन काल म उत्तर भारत म जो राज्य स्थापित किए गए उनम से अधिकाश विन्ध्याचल क उत्तरी सामा तक फल कर रह गए। इसके आगे दक्षिण के राज्यो को मिलान के लिए प्रयत्न तो बहुत किए परन्तु उनमें सफलता नहीं मिली। भगवान श्री रामचन्द्र न लका पर चढाई करन म

मिलसिन्न म विन्ध्याचल का पार किया तथा उत्तरी और दक्षिणी भारत के मध्य मे एकता स्थापित की, वह महाभारत काल तक स्थापित रही। महाराज युधिष्ठर के राजसूयज्ञ मे दक्षिण के राजा भी भाग लेने आए थे। कुरुक्षेत्र के मैदान म जो महायुद्ध हुआ था उसम भी दक्षिण के राजाओं ने भाग लिया था, उसका प्रमाण महाभारत मे मिलता है।

चन्द्रगुप्त, अशोक, विक्रमादित्य आदि शासको म और उसके पश्चात् मुगल सम्राटो ने भी कोशिश की कि किसी प्रकार सारा देश भारत एक शासन के अधीन लाया जा सके। उन्हे इसम कुछ सफलता भी मिली। जब भी कोई बलवान शासक इस काम म लगा, थोडी सफलता मिली परन्तु कमजोर शासको के आते ही यह सफलता टिकाऊ नही रह सकी व दक्षिण के भाग अलग हो गए।

इस देश मे फूट का कारण था—बडी बडी नदियाँ व पहाड, इनके अनेक गुण हैं तो इनमे अवगुण भी हैं। ये जहाँ भी होते हैं वहा देश के भीतर अलग अलग क्षेत्र बना देते है और इन क्षेत्र मे रहने वाले लोगो म प्रान्तीयता या क्षेत्रीय भावना उत्पन्न कर देते हैं। विज्ञान के सुगम साधनो के कारण अब पहाड और नदियो को लाघना इतना कठिन नही रहा है, प्राकृतिक बाधाएँ समाप्त हो गई हैं। यही कारण है कि आज हमारी एकता इतनी विशाल है कि वह रामायण, महाभारत, मौर्य व मुगल काल म भी कभी नही थी।

इस देश की जलवायु भी भिन्न भिन्न है। उत्तर म काश्मीर है जिसकी जलवायु मध्य एशिया की जलवायु के समान है। भारत के दक्षिणी छोर पर कुमारी अन्तरीप है जिसकी जलवायु, धरा की रचना और लोगो के रग रूप लका के समान है। थार की मरुभूमि भी है जहाँ पर वर्षा होती ही नहीं अथवा बहुत कम होती है क्षेत्रीय सुविधा के अनुसार ही लोगो के पहनाव, ओढावे और खान पान मे भी भेद हो जाता है क्योकि यह जलवायु क्षेत्रीय सुविधा के अनुसार ही होता है।

उत्तर या दक्षिण कही भी चले जाएँ, आपको जगह जगह पर एक ही संस्कृति के मन्दिर दिखाई देंगे। एक ही तरह के आदमियो से मिलना होगा जो कर्म लगाते हैं, तीर्थ, व्रत म विश्वास करते हैं। उत्तर भारत के लोगो का जो स्वभाव है, जीवन को देखने की जो उनकी दृष्टि है वही स्वभाव वह दृष्टि दक्षिण वालो की है। यदि भाषा का भेद समाप्त हो जाय तो वे आपस मे और भी निकट आ जाते हैं। वैसे भी भाषा की दीवार के आर पार बैठे हुए भी वे एक है। वे एक ही धर्म के अनुयायी और संस्कृति के भागीदार हैं। उन्होंने देश की आजादी के लिए लडाई लडी और आज उनकी संसद और शासन विधान भी एक है।

मुसलमान भी संस्कृति की दृष्टि म हिन्दुओं के बहुत निकट है क्योकि अधिकांश मुसलमान ऐसे हैं जिनके पूर्वज हिन्दू थे और जो इस्लाम धर्म परिवर्तित होने के

समय अपनी हिन्दू आदतें अपने साथ ले गये हैं। इसके अतिरिक्त सैकड़ों वर्षों तक हिन्दू मुसलमान साथ रहते आए हैं, और इस लम्बी संगति के कारण उनके बीच संस्कृति और सभ्यता की बहुत सी समान बातें पैदा हो गई हैं जो उन्हें दिनोंदिन आपस में निकट लाती जा रही हैं। जो कुछ भी भेद दिख रहा है, वह अंग्रेज शासकों ने अपने राजनैतिक स्वार्थों के कारण उत्पन्न किया है जो अब भी यत्र तत्र देखने को मिलता है।

प्रत्येक देश की एक निजी सांस्कृतिक विशेषता होती है जो उस देश के प्रत्येक निवासी की चाल ढाल, बातचीत रहन सहन, खान पान, और तरीके और आदतों से विदित होती है। अमीरा के लोग खान होते हैं परन्तु भारतवासियों के बीच नहीं खप सकते। भारतवासी यूरोपीय पोशाकें भी पहनते हैं परन्तु यदि उनके बीच में अंग्रेज को खड़ा कर दिया जावे तो वह आसानी से अलग पहचान लिया जायगा। भारत से बाहर जाने वाले हिन्दू ही नहीं अपितु मुसलमान, ईसाई पारसी बाहर जाने पर आसानी से पहिचान लिये जाते हैं कि वे भारतीय हैं। वर्षों से ही भारतवासियों की एक संस्कृति के कारण वे भारत का एक रंग रंगे हुए हैं। यही वह विशेषता है जो उन लोगों में पैदा होती है जो एक देश में रहते हैं एक तरह की जिन्दगी जीते हैं और एक तरह के दर्शन और एक तरह की आदतों पर विश्राम करके एक राष्ट्र के सदस्य हो जाते हैं।

उत्तर भारत की प्रायः सभी भाषाएँ संस्कृत से निकली हैं और उन सभी के शब्दों में पारिवारिक समानता है। दक्षिण की भाषाएँ भी संस्कृत से प्रभावित हुई है। उन्होंने भी थोड़ी बहुत मात्रा में संस्कृत की शब्दावली ग्रहण की। उर्दू को छोड़ कर प्रायः सभी भाषाओं की वर्णमाला एक नहीं तो एक सी है। केवल लिपि का भेद है। मराठी और देवनागरी की लिपि भी समान है। संस्कृत की शुद्ध लिपि होने के कारण देवनागरी प्रायः सभी प्रान्तों में पहचानी जाती है। उर्दू का लिपि भेद होने हुए भी हिन्दी के साथ उसकी भाषा में समानता है। भाषा की जमीन और व्याकरण प्रायः एक से हैं बेल बूटे फारसी, अरबी के हैं। प्रेमचन्द अश्क सुदर्शन, कृष्णचन्द्र ने हिन्दी में भी लिखा और उर्दू में भी। भारत की प्रायः सभी भाषाओं का साहित्य भगवान राम और कृष्ण की पावन गाथाओं से आप्लावित रहा है सभी ने संतों और वीरों का स्तवन किया है सभी भाषाओं के साहित्य ने स्वतन्त्रता की लड़ाई में योगदान किया है।

भारत की विभिन्न भाषाओं के साहित्य का इतिहास घुला मिला सा प्रतीत होता है। उनके बीच खाई दीवार न थी। मीरा गुजराती और हिन्दी में समान रूप से कवियत्री मानी जाती हैं। मीरा के गीतों से बंगाल भी प्रभावित हुआ है। भूषण की वाणी का महाराष्ट्र में भी आदर हुआ था। संत तुकाराम आदि महाराष्ट्र संतो

न अपनी कविता में हिन्दी को भी अपनाया विद्यापति समान रूप से हिन्दी, मैथिली और बंगला में कवि माने जाते हैं। कबीर, दादू आदि संतों का व्यापक प्रभाव रहा है। उन्होंने अपने एक तारे की तान से सारे भारत को बांध दिया। तुलसी कृत रामायण का मराठी और बंगला में भी अनुवाद हुआ। सूरदास के भजनों को प्रायः सभी प्रान्तों के गवैयों ने अपनाया। बंगला के 'वन्दे मातरम्' और 'जन गण मन' राष्ट्रीय गीत बने

संयुक्त राज्य अमरीका में हो कई भाषाएँ बोली जाती हैं, किन्तु एक केन्द्रीय भाषा सबको मिलाए हुए हैं। स्विटजरलैण्ड में जर्मन, फ्रांसीसी तथा इतालवी तीन भाषाएँ बोली जाती हैं फिर भी वह सुसंगठित राष्ट्र है। इंग्लैण्ड, आस्ट्रेलिया एक भाषा भाषी होते हुए भी भिन्न भिन्न राष्ट्र हैं। जिस देश में भेद नहीं उसकी इकाई शून्य या गणितशास्त्र की इकाई की भांति दरिद्र इकाई है। सम्पन्नता भेदों में ही है किन्तु भेद इतने न होने चाहिए कि उनमें समन्वय ही न रहे।

शिक्षा द्वारा भावात्मक एकता—भावात्मक एकता को उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि हमें शिक्षा की ओर सबसे अधिक ध्यान देना चाहिए। शिक्षा का वर्तमान स्वरूप ऐसा नहीं है कि भावात्मक एकता को कोई महत्व दे। इसलिए शिक्षा का पुनर्गठन ऐसा हो कि विद्यालयों से निकला हुआ विद्यार्थी जाति सम्प्रदाय से ऊँचा उठकर सोचे। आज की शिक्षा प्रणाली ब्रिटिश कालीन शिक्षा प्रणाली के आधार पर है, इसमें विद्यार्थियों व शिक्षकों का दूर का भी सम्बन्ध नहीं है। भारत सरकार ने शिक्षा क्षेत्र में नवीन परिवर्तन किए हैं, इसके क्या परिणाम होते हैं, यह भविष्य ही बतावेगा। अतः यह आवश्यक है कि हम एक दूसरे की संस्कृति को समझें। विभिन्न धर्मावलम्बियों के मेले, त्योहारों में निष्पक्षता की भावना से भाग लें। धर्मों का अध्ययन तो सैद्धान्तिक पक्ष है परन्तु उनका निकट से अवलोकन करना व्यावहारिक पक्ष है परन्तु इन सबसे ऊपर भारत देश है जिसकी कहीं भी और कभी भी अवहेलना नहीं होनी चाहिए। सभी भारतीयों को इसकी बलिवेदी पर संकट के समय मरने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए।

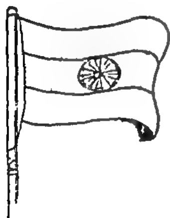
□

प्रथम सोपान

स्वदेश भक्ति

राष्ट्रीय एकता के प्रतिकों के प्रति सम्मानपूर्ण भावना

भावनात्मक एकता के लिए यह आवश्यक है कि युवा वर्ग में तथा समाज के सभी लोगों में राष्ट्रीय एकता के प्रतीकों के प्रति पूर्ण सम्मान की भावना उत्पन्न करना। इसके लिए निम्न सहायक हो सकते हैं—



राष्ट्रीय ध्वज

1 हमारा संविधान।

2 राष्ट्रीय ध्वज।

3 राष्ट्र गीत व देश भक्ति पूर्ण गायन।

4 स्वतन्त्रता संग्राम में राष्ट्रीय नेताओं के बलिदान की कथा।

5 राष्ट्रीय पर्वों का उत्साहपूर्वक आयोजन व उनमें भाग लेना।

6 समस्त धर्मों व पर्वों के प्रति जानकारी व सुविधानुसार सम्मिलित होने के लिए उत्साह व सम्मान की भावना।

7 सभी धर्मावलम्बियों के प्रति सम्मान व सहिष्णुता की भावना।

8, राष्ट्रभाषा हिन्दी का गौरवमयी स्थान।

9 अतीत के अमूल्य गौरवों की रक्षा व उनके प्रति सम्मान की भावना।

10 ऐतिहासिक व शैक्षणिक भ्रमण।

किसी भी देश की प्रगति समृद्धि एवं स्वतन्त्रता राष्ट्र की भावनात्मक एकता से ही सम्भव है। भावनात्मक एकता से ही देश के प्रत्येक क्षेत्र में अपने को सभी के समान समझने की भावना उत्पन्न होती है। अपने देश की रक्षा के लिए वहाँ के लोग बलिदान हो जाते हैं। अंग्रेजों की देश भक्ति के कारण ही उन्होंने सैकड़ों

वर्षों तक भारत पर ही नहीं संसार के अनेक देशों पर राज्य किया। उनके साम्राज्य में कभी सूर्य अस्त नहीं होता था। वहाँ का इतिहास वीरों की कहानी से परिपूर्ण है।

भारत के सभी क्षेत्रों के निवासियों, विद्यार्थियों एवं राजनीतिज्ञों को चाहिए कि वे भाषावादिता, जातीयता, साम्प्रदायिकता, प्रान्तीयता आदि तुच्छ विचारों को तिलांजली दें व राष्ट्रहित को सर्वोपरि समझें। देश की उन्नति के लिए देश प्रेम का चारित्रिक गुण विकसित करें तब ही भारत के वासी अन्य देशवासियों के सम्मुख गौरवपूर्ण सर उठाकर चल सकेंगे।

शैक्षणिक संस्थाओं का दायित्व—हमारे विद्यालयों में राष्ट्रीय ध्वज व राष्ट्र गीत के प्रति सम्मान करने की आदत डालनी चाहिए। प्रत्येक विद्यालय व महाविद्यालय में 15 अगस्त व 26 जनवरी को राष्ट्रीय पर्व धूमधाम से मनाना चाहिए। विद्यार्थियों में ऐसी भावना उत्पन्न करनी चाहिए कि अपनी जाति के अलावा अन्य धर्मावलम्बियों के उत्सवों में भी उत्साह व आदर की भावना से सम्मिलित हों। वे भारतवासी जिन्होंने अपने देश की रक्षा व स्वतन्त्रता के लिए अपने को बलिदान कर दिया उनके जीवन से शिक्षा ग्रहण करें तथा आवश्यकता होने पर उनके समान ही अपने को बलिदान करने के लिये तत्पर रहें।

हायर सैकण्डरी स्तर तक के अधिकांश विद्यालयों में प्रतिदिन शिक्षण प्रारम्भ होने से पूर्व विद्यालय में सामूहिक प्रार्थना व राष्ट्रगीत गाया जाता है परन्तु महाविद्यालय ऐसी व्यवस्था कहीं भी नहीं है। क्या ही अच्छा हो यदि इन महाविद्यालयों में भी सामूहिक प्रार्थना, राष्ट्रीय गायन व देशभक्ति पूर्ण गीत गाए जावें। ऐसी प्रतियोगिताएँ व विचार गोष्ठियाँ आयोजित हों जो देशभक्ति से सम्बन्धित हों। पुस्तकालय व वाचनालयों में ऐसी पुस्तकें व पत्र पत्रिकाएँ हों जो देशभक्ति से परिपूर्ण हों। विद्यार्थियों को ऐसी पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया जावे।

शैक्षणिक भ्रमण—विद्यालयों में शैक्षणिक भ्रमण की व्यवस्था की जानी चाहिए। पाठ्य पुस्तकों में ऐसे पाठों को सम्मिलित किया जावे जो प्राचीन कलाकृतियों, प्राचीन गौरवमय सभ्यता व प्राचीन ग्रन्थों पर आज के परिप्रेक्ष्य में प्रकाश डाल सकें। जिससे विद्यार्थियों में उनके प्रति आज की दृष्टि उत्पन्न हो सके। शिक्षकों का भी कर्त्तव्य है कि वे जातीयता व प्रान्तीयता की भावना से ऊपर उठकर 'भारत दर्शन' के कार्यक्रम आयोजित करने में सहायक हों। प्रान्तीय सरकार ही नहीं अपितु भारत सरकार भी अग्रसर हो तथा रियायती दरों पर विद्या नागरिकों को भारत भ्रमण की सुविधा प्रदान करावें।

इसमें कोई सन्देह नही कि यदि इन कायक्रमों को आयोजित किया जावे तो लोगों म देश के प्रति भक्ति उत्पन्न होगी और अन्त म यह उनके चरित्र निर्माण का ठोस आधार बनेगा।

भारतीय इतिहास जो आज विद्यालय म पढाया जाता है, उसमे हमारी जय-पराजय का भी उल्लेख मिलता है। इसमे भारतीय विजय का पक्ष कम प्रभावी व पराजय का पक्ष अधिक प्रभावशाली होता है। मुस्लिम शासकों की उन घटनाओं का उल्लेख प्रमुखता से किया जाता है, जो उन्होंने अपने समय मे हिन्दू प्रजा के दमन के लिये प्रयोग किए। परिणामत हिन्दू व मुसलमानों म शताब्दियों से एक दूसरे के प्रति घृणा व अविश्वास का वातावरण बना हुआ है जो अवसर मिलने पर साम्प्रदायिक दंगे व जान माल की क्षति के रूप मे देखने को मिलते हैं।

भारत के इस मुस्लिम युग के अन्धकार पक्ष को अन्धकार म ही विलीन कर दिया जावे। उस युग म धर्मान्धता के कारण की गई क्षति का जीर्णोद्धार व पुनरुद्धार इस प्रकार किया जावे कि आज की सतति के लिए ही नही अपितु भावी सतति के लिए भी भावनात्मक एकता व प्रेरणा के स्रोत बन जावें। अयोध्या म राम जन्मभूमि को लेकर दो सम्प्रदायों मे विवाद चल रहा है जो दिन प्रतिदिन गम्भीर होता जा रहा है। इस विवाद को देशहित म सर्वोपरि मानकर ऐसा हल निकाला जावे जो सबके लिए सम्मानजनक हो।

देश के नागरिकों म सविधान व राष्ट्र ध्वज के प्रति सम्मान व उच्चकोटि की राष्ट्रीय भावना हो। भारत म यत्र तत्र ऐसे उदाहरण देखने को मिले हैं जहाँ पर राष्ट्र ध्वज का अपमान किया गया है। ऐसे देशद्रोहियों को कठोर दण्ड दिया जावे जिससे भविष्य म ऐसी पुनरावृत्ति न हो तथा भारत के करोड़ो देशवासियो को इससे जो घोर वेदना है उसका भी सम्मान हो सके। देश रहेगा तो हम रहेंगे देश उन्नति करेगा तो हम उन्नति करेंगे, देश का गौरव बढेगा तो हमारा गौरव बढेगा। देश के साथ ही मरेंगे व देश के साथ ही जीवेंगे, ऐसी देश भक्ति की भावना विकसित करने की आवश्यकता है। देश के बिना हम अपने अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते। देश के साथ गद्दारी करने वाले अलगाव की प्रवृत्ति रखने वाले, मिलावट व तस्करी करने वाले, चोर बाजारी, दुष्प्रवृत्ति व लाल फीताशाही मे लिप्त रहने वाले ऐसे व्यक्तियों को भी नहीं बख्शा जावे।

अगले जन्म की बात जाने दीजिए इसी जन्म म जो घटनाएँ घटित हो रही हैं उससे भारत का युवक भी जाग्रत हो रहा है। वह इतिहास से सबक ले रहा है। उसके सब्र का उफान ऐसी क्रान्ति लावेगा जो सारी व्यवस्था को ही बदल देगा। एक नये भारत का जन्म होगा।

यह सच है कि हमने एक संवैधानिक लोकतन्त्रात्मक प्रक्रिया को अपनाया है। लेकिन यह भी सच है कि राष्ट्रीय संविधान हमारे समाज को वैसी प्रेरणा नहीं देता जो धार्मिक पुस्तकें देती हैं। आज भारतीय संविधान व गुरु ग्रन्थ साहब में यदि कहीं आस्था का टकराव उत्पन्न हो जाय तो भारत का सिक्ख संविधान के बजाय गुरु ग्रन्थ साहब को अधिक महत्त्व देगा। आज यदि वेद, पुराण व गीता जैसे ग्रन्थों एवं संविधान में तनाव उत्पन्न हो जाय तो भारत का हिन्दू संविधानवादी नहीं अपने को गीता या वेदवादी सिद्ध करेगा। आज यदि भारतीय संविधान एवं कुरान में टकराहट हो जावे तो भारत का मुसलमान कुरानवादी होगा। यद्यपि गुरु ग्रन्थ साहब, वेद एवं कुरान मानवीय संवेदनाओं एवं ज्ञान की अमर कृतियाँ हैं, लेकिन संस्थाबद्ध धर्म के प्रतीक बनकर ये ग्रन्थ अब ज्ञान विज्ञान के विमर्श ग्रन्थ नहीं वरन भावुक श्रद्धा का अधिष्ठान ग्रहण कर चुके हैं। वास्तव में संविधान की प्रक्रिया से इनकी टकराहट हो ही नहीं सकती। लेकिन कई सिरफिरे नेताओं व उनकी पिछलग्गू भीड़ ने अपने निजी स्वार्थ के कारण संविधान के हिस्से जलाए हैं जिनका एक दिन इस ही जन्म में इसका फल भुगतना पड़ेगा।

सर्व आत्म तत्त्व दर्शन वाले हिन्दू के लिए मुसलमान पराया नहीं हो सकता। मानव की एक जाति मानने वाले गुरु ग्रन्थ साहब के लिए [illegible] अलग नहीं हो सकता। विश्वव्यापी भाईचारे का संदेश वाहक मोहम्मद पंथी गैर मुस्लिम को काफिर नहीं मान सकता। प्रेम का सन्देश देने वाला ईसाई अन्य मतावलम्बियों से घृणा नहीं कर सकता। तत्त्व की चर्चा करने वाला वीतरागी जैन अन्य धर्म वालों का तिरस्कार नहीं कर सकता।

विधि के शासन की व्यवस्था करने वाले संविधान से तत्त्वतः धर्म की लड़ाई हो ही नहीं सकती। लेकिन यह सच है कि हम तत्त्व के उपासक कम तथा स्वरूप के उपासक अधिक हैं, इसीलिए सर्वधर्म समभावी, पंथ निरपेक्ष एवं लौकिकतावादी संविधान अपनाने के पश्चात् भी पंथ और जातियाँ हमारे जीवन में अधिक निर्णायक प्रभाव रखती हैं। हमें संविधानवादी राजनीति के साथ ही संविधानवादी संस्कृति का विकास करना होगा। इसके लिए संविधान को सर्वोपरि मानकर चलना पड़ेगा। इससे ही हम सच्चे देशभक्त बनेंगे व हमारा चरित्र निर्माण होगा।



द्वितीय सोपान

व्यवहार कुशलता–व मनुष्य स्वभाव

चरित्र निर्माण के लिए व्यवहार कुशलता एक महान् गुण है। अनुकूल परिस्थितियों में रहकर तो सबको ही सफलता मिलती है। विपरीत परिस्थितियों में भी रहकर भी प्रत्येक व्यवहार को उचित रीति से करना व्यवहार कुशलता है। व्यवहार कुशल व्यक्ति अपने को दूसरे व्यक्तियों के साथ हिला मिला लेता है, चाहे उसे लोगों की आदतें कैसी ही कठोर क्यों न लगें। जीवन में सफलता पाने के लिए अनुकूल व्यवहार पटुता व विनयशीलता अनिवार्य गुण है। हिल मिलकर रहने वाला व्यक्ति थोड़ा नम्र बन जाता है। थोड़ा मृदुभाषी बन जाता है। कार्यालय कर्मचारी अपने कार्याध्यक्ष के अनुकूल व्यवहार करना नहीं जानता अतः झगड़े में पड़कर नौकरी छोड़ देता है। शिष्य अपने गुरु के अनुकूल व्यवहार नहीं कर पाता अतः दुर्व्यवहार कर गुरु का अपमान कर देता है। इस प्रकार व्यवसायी व्यवहार पटुता के अभाव में अपने ग्राहकों को नाराज कर देता है और अपने व्यवसाय को ही हानि पहुँचाता है। सारा संसार केवल हिल मिलकर ही चल रहा है। परस्पर भावमन्त के सिद्धान्त के अनुसार ही चल रहा है। इसलिए जो व्यक्ति हिल मिलकर रहना जानता है मौका देखकर अनुकूल व्यवहार भी करना जानता है वह इस संसार में आनन्द से जीवन बिता सकता है। इस कला को समुन्नत करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के स्वभाव में कोमलता का आना अनिवार्य है। अहंकार और गर्व से उन्मत्त व्यक्ति हिल मिलकर रह ही कैसे सकता है। व्यवहार कुशलता के मार्ग में अहंकार और गर्व दो महान शत्रु है, जिन व्यक्तियों का स्वभाव अहंकार युक्त हो जाता है, वे जीवन में सफलता नहीं प्राप्त कर सकते। अतः बड़ों के प्रति सम्मान भी प्रदर्शित करना होगा।

व्यवहार कुशल व्यक्ति को कुछ न कुछ त्याग करने का स्वभाव बनाना होगा। सेवा की भावना उत्पन्न करनी पड़ेगी। उसको निन्दा अपमान और कटु शब्द सुनकर भी शान्त रहना पड़ेगा। उसको घृणा और द्वेष को अपने मन से निकालना पड़ेगा। उसको शक्ति भी अर्जित करनी पड़ेगी जिससे वह उसका शरीर स्वस्थ रहे। सावधानी भी बरतनी पड़ेगी जिससे उसे कोई ठग न ले। मानव मात्र के प्रति प्रेम भी प्रदर्शित करना पड़ेगा। व्यवहार कुशल व्यक्ति जब हिल मिलकर चलता है तो उसमें आत्मविश्वास की भावना जाग्रत होती है। निन्दा जैसे दुर्गुण से दूर रहता है।

व्यवहार कुशल व्यक्ति को अपने सम्बन्धियों मित्रों साथियों की कटु उक्तियों को शान्तिपूर्वक सुनने का स्वभाव बनाना चाहिए। उसमें धैर्य और सहनशीलता

का गुण होना चाहिए। जब वह हिल-मिलकर रहने का अभ्यास करता है तो यह गुण उसमें स्वतः ही विकसित होता है। वह वातावरण के विषय में शिकायत नहीं करता शीत, गर्मी को शांतिपूर्वक सहन कर लेता है। अपना दैनिक खर्चा समझदारी व मितव्ययता के साथ करता है। उसके मन को कष्ट पहुँचाइए शांतिपूर्वक सहन कर लेगा, उसकी निन्दा कीजिए प्रसन्न ही बना रहेगा। उसके स्थान में सबके साथ हिल मिलकर रहने से मतभेद की इतिश्री हो जाती है। सबको अपने जैसा समझने से विश्व बन्धुत्व की भावना उत्पन्न होती है और घृणा और द्वेष का अन्त हो जाता है। ऐसा ही व्यक्ति सबका प्रिय हो जाता है और सफलता का भागी होता है। परन्तु सहनशील व्यक्ति को समय समय पर यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जो गुण वह अर्जित कर रहा है उसकी प्रकृति या स्वभाव में उसमें अन्त में विपरीत प्रभाव तो नहीं हो रहा है। आगे उन्हीं की विवेचना की जायगी।

मनुष्य स्वभाव–सतुलन व विकृतियाँ

आज संसार में दमन की विधियाँ प्रचलित हैं व केवल उद्योग और विज्ञान के कारण ही नहीं है अपितु ये मनुष्य स्वभाव के तथ्यों पर आधारित हैं। देखने में यह आया है कि मनुष्य स्वभाव को टुकड़ों में विभाजित करके अध्ययन किया जाता है। व्यापारी एक मानव को विक्रेता की दृष्टि से, डाक्टर मानव को अपने धंधे का अंग मानकर, धर्म के प्रचारक उसको अपना श्रद्धालु समझकर वस्तु निर्माता अपने श्रमिकों को उत्पादक मानकर उनका अध्ययन करता है। लेकिन कोई भी यह समझकर उसका मूल्यांकन नहीं करता कि मानव एक पूर्ण इकाई है। उसका अध्ययन उसके विचारों व भावनाओं का मनन वैज्ञानिक विधि से करना चाहिए। हम स्वयं भी इतने रूढ़ व प्राचीन हैं कि हम स्वयं के विषय में भी सही ज्ञान प्राप्त नहीं करते, मानव स्वभाव को जानने से पूर्व यह जानना नितान्त आवश्यक है कि हम भौतिक रूप से सब समान हैं चाहे वह राजा हो या रंक। हर एक औसत आदमी के 500 मसल्स (Muscles) 200 हड्डियाँ (Bones) 40 लीटर रक्त 25 फीट शिराएँ (Intestine) और एक हृदय है जो एक मिनट में 72 दफा धड़कता है। इसमें पर्याप्त लोह खनिज है जिससे 10 पेंस की कील बनाई जा सकती है। पर्याप्त मात्रा में हाईड्रोजन गैस है जिससे एक छोटा गुब्बारा भरा जा सकता है। रासायनिकता में भी सब मानव व्यावहारिक रूप से समान हैं दूसरा तथ्य यह है कि हम यान्त्रिक रूप से भी समान हैं। हमारी ज्ञानेन्द्रियाँ (Sensory) और मोटर Moter विधियाँ और मस्तिष्क की प्रारम्भिक कार्यप्रणाली यदि डिग्री (Degree) में एक व्यक्ति से दूसरे में भिन्न है तो भी एक जाति से दूसरी जाति में लगभग समान है। तीसरा तथ्य यह है कि हमारा सर ऊपर व पाँव नीचे हैं।

चौथा भ्रम जो हमम ह वह यह ह कि हम अलग ही तरह के प्राणी हैं और दूसर स श्रेष्ठ है। इस सबके बारे म जो भ्रम ह उम निकाल देना चाहिए और जो हम वास्तव म हैं उसका अध्ययन करना चाहिए। स्व सिद्ध प्रमाण जो मानव म पाए जाते ह। उनका विभाजन समाजमूलक व व्यक्ति मूलक ह। समाज मूलक प्रमाण वे है जो हमको सामाजिक बनात ह तथा वे सामूहिकता की मूल प्रवृत्ति स उत्पन्न होते ह, व्यक्ति मूलक वे ह जो व्यक्तिगत चेतना स उत्पन्न होत हैं। यह एक दूसर से जुडे हुए हैं।

समाज मूलक स्वभाव	व्यक्ति मूलक स्वभाव
1 हर व्यक्ति म भय ह	1 हर व्यक्ति म इच्छाएँ हैं
2 हर व्यक्ति म श्रद्धा ह	2 हर व्यक्ति अनुभवशील ह
3 हर व्यक्ति म आदतें है	3 हर व्यक्ति म विभिन्नताएँ ह
4 हर व्यक्ति म सम्मान व दासा म मुक्ति का इच्छुक ह	4 हर व्यक्ति विचारशील ह
	5 हर व्यक्ति म परिवतन ह
5 हर व्यक्ति म नतत्व की भावना है	6 हर व्यक्ति म आदश हात है
6 हर व्यक्ति म कामच्छा है	7 हर व्यक्ति मे चेतना व अवचेतना है
7 हर व्यक्ति अनुकरणशील ह।	

यदि एक मानव म केवल समाज मूलक गुण हा तो वह कोरा कच्चा माल है अविकसित है उसका कोई व्यक्तित्व नही है। यदि उसम कवल व्यक्तिगत स्वाभाविक गुण हैं ता वह व्यक्ति कानून का उल्लघन करन वाला अथवा बुद्धिमान या विक्षिप्त होगा। सामान्य व्यक्ति तो वह ह जिसम सतुलन व समानता है। मन का नियन्त्रित दोना प्रकार की समान शक्ति के बल स किया जाता ह। मानव स्वभाव का तकाजा ह कि उसमे विकास और दबाव दोना ही हा। उसकी स्वतन्त्रता हो ता उस पर रोक भी हो यदि आप महत्त्वाकांक्षी नहीं ह ता आपम कमी है। परन्तु यदि यह आवश्यकता स अधिक हो ता इसम भी कमी है। हमको अति स बचना चाहिए तथा प्रसन्नतापूवक व सफलतापूवक जीवन बिताना चाहिए। हमको विषवद् रखा और पृथ्वी के दोनो ध्रुवों से दूर रहना ह। हमको तो Temperate zone परिमित क्षेत्र मे रहना है। इस सिद्धान्त के भली प्रकार स समझन क लिय मनुष्य स्वभाव का यह चाट अधिक उपयुक्त होगा। इससे यह पता लगेगा कि प्रत्यक अच्छा गुण किसी स्थिति तक ही विकसित किया जावे जिसको हम सम्यक की स्थिति कह सकत हैं। यदि यह गुण सम्यक् स्थिति स आगे चला जाता है ता यह विकृत स्थिति हो जाती है और परिणामत उभार पकड़ होने लगता है।

मनुष्य स्वभाव व सम्भावनाएँ

	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
सम्यक स्थिति	स्वतन्त्रता	शक्ति	नम्रता	सावधानी	साहस	विनय शीलता	प्रेम	इच्छा	सम्मान	आकांक्षा	मितव्ययता	आत्मविश्वास	निद्रा	भक्ति
विकृत स्थिति	अराजकता	हिंसा	कुटिलता	भय	लापरवाही	कपटपूर्ण व्यवहार	वासना	जिद	चापलूसी	लिप्तता	लालची	अहंकार	अप्रवितता की भावना	अंध विश्वास

अति विकृत स्थिति उन्माद

मनुष्य स्वभाव मे सतुलन व अति से विकृतियां

(1) स्वतन्त्रता (Freedom)— स्वतन्त्रता मेरा जन्म सिद्ध अधिकार है, और मैं इसे लेकर रहूँगा।' यह शब्द बालगंगाधर तिलक ने उस समय कहे जब वे भारत को अंग्रेजो की गुलामी से मुक्त कराने के लिए स्वतन्त्रता संग्राम में जुटे हुए थे। इस युद्ध में लाखों भारतीयों ने अपनी जाने कुर्बान कर दी। अन्त में भारत स्वाधीन हुआ। देश की स्वाधीनता के लिए अपने को बलिदान करने की भावना सब में ही होनी चाहिए। लिखने, पढ़ने, बोलने व कार्य करने की स्वतन्त्रता भारतीय संविधान में दी गई है। इस स्वतन्त्रता का विवेक के साथ उपयोग हो तो यह अति लाभदायक है। यदि इस स्वतन्त्रता पर नियन्त्रण नहीं होता तो यह अराजकता (Anarchy) के विकृत रूप में परिवर्तित हो जाती है। भारत जैसे शान्तिप्रिय देश में स्थान स्थान पर तोड़ फोड़ अपराध व गुण्डागर्दी आदि का नग्न रूप से दर्शन व पठन को मिल रहा है। यदि भारत को इस दुष्प्रवृत्ति से नहीं रोका गया तो यहाँ भी अराजकता (Anarchy) हो जायगी, जिसके परिणामों की कल्पना से ही हृदय कांप रहा है तो जब वास्तविकता का सामना करना पड़ेगा तो कैसी दुखद स्थिति होगी यह विचारणीय है। अतः Anarchy जैसी स्थिति उत्पन्न नहीं हो इसके लिए हर सम्भव उपाय अभी से करने की नितान्त आवश्यकता है।

(2) शक्ति—सभी प्राणियों में कार्य करने की शक्ति (Energy) है। मानव ने अपनी शक्ति का प्रयोग विवेक के साथ किया तो सभी क्षेत्रों में उन्नति हुई इसका सदुपयोग निर्बलों व निर्धनों व देश की रक्षा के लिए किया जावे तो यह अत्यन्त हितकारी है। इसी शक्ति का प्रयोग यदि अविवेकता से किया जावे तो यह हिंसा में परिवर्तित हो जाती है। हिंसा प्रति हिंसा को जन्म देती है और इससे

परम्परा अविच्छिन्न रूप से चलती रहती है। इसमें भय, आतंक, घृणा, वैर विरोध एवं संघर्ष का वातावरण बना रहता है। युद्ध और आये दिन होने वाली हत्याएं इसी का परिणाम हैं। अतः यह सदैव ध्यान रखा जावे कि शक्ति का संतुलन बना रहे जिससे यह प्रवृत्ति का रूप लेकर हिंसा में परिवर्तित न हो।

(3) नम्रता—स्वभाव में नम्रता (Gentleness) होना आवश्यक है। बालक व युवक जिनको प्रारम्भ से ही नम्र होने का शिक्षण दिया जाता है वे अपने माता पिता एवं गुरुजनों को हाथ जोड़कर प्रणाम करते हैं, चरण स्पर्श करते हैं। इस प्रकार श्रद्धा व्यक्त करते समय दोनों का हृदय सात्विकता से परिपूर्ण हो जाता है। यह ही सात्विकता कालान्तर में व्यक्ति की सम्पूर्ण तामसिक वृत्तियों का समूल नष्ट कर देती है। श्रद्धा से चरण स्पर्श करना या चरणों का वरदहस्त सिर पर रखने में अनेक दिव्य अनुभूतियों का सम्प्रेषण, स्वमेव हो जाता है। नरेन्द्र जो बाद में विवेकानन्द हुए उन पर जब गुरु रामकृष्ण परमहंस का पावन स्पर्श हुआ तो, वे नास्तिक नरेन्द्र आस्तिक विवेकानन्द बन चुके थे। माँ की ममता का स्पर्श जब बालक प्राप्त करता है तो वह असीम सुख की प्राप्ति करता है।

इसके लिये यह देखते रहना आवश्यक है कि यह गुण कहीं विपरीतता की ओर तो नहीं जा रहा है। कहीं इससे बालक में दुर्बलता की भावना तो जाग्रत नहीं हो रही है। केवल मात्र इसकी परम्परा मानकर तो इसका पालन नहीं हो रहा है। ऐसा होने पर उसके स्वभाव में दुर्बलता (Weakness) उत्पन्न हो सकती है।

(4) सावधानी (Caution)—सावधानी मनुष्य का गुण है। यदि व्यक्ति असावधान रहता है तो उसे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्यापार, शिक्षा, क्रीड़ा, नौकरी, उद्योग आदि में सफलता प्राप्त नहीं होती है। भूलने वाला और लापरवाह व्यक्ति कभी भी दिल लगाकर कार्य नहीं कर सकता। ऐसे व्यक्ति चाबियाँ, जूते, छाता, पैन आदि खोते रहते हैं। समय पर कार्यालय में रिकार्ड प्रस्तुत नहीं करने पर उनको उलाहना सहना पड़ता है। अतः सावधान रहना अच्छा स्वभाव है। अति सावधान रहने से यह भय का रूप धारण कर लेता है। इससे व्यक्ति में वहम की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है जो भय का परिवर्तित रूप है। कहावत भी है कि वहम का इलाज लुकमान हकीम के पास भी नहीं है। अति सावधानी से यथासम्भव बचना ही उत्तम रहो है।

(5) साहस (Courage)—बचपन में साहस के संस्कार डालने चाहिए। इससे बालकों में निर्भयता का स्वभाव पड़ जाता है। यदि व्यक्ति में आंतरिक साहस हो तो उसके विचार सात्विक और परिशुद्ध होते हैं। साहसी व्यक्ति जंगलों, पहाड़ों तथा शत्रुओं के शिविर में निडर होकर घूमता रहता है। न तो वह किसी से भयभीत होता है और न वह किसी की हानि करता है। इस स्वभाव की अति होने

पर ऐसे व्यक्ति मे लापरवाही की आदत पड जाती है। वह अपने का श्रेष्ठ और दूसरे को नही समभन लगता है जो उचित है।

(6) विनयशीलता (Modesty)—व्यवहार मे विनयशील बात करने मे विनयशील होना, काय करत समय विनयशील होना अच्छा गुण है। यदि स्वभाव म व्यक्ति अधिक विनयशील हो जाता है तो इसके कारण कपटपूर्ण व्यवहार करन लगता है। ऐसे व्यक्ति का व्यक्तित्व दोहरा हो जाता है। बाहर कुछ भीतर कुछ। उसका मन शुद्ध नही रहता है। इसकी अति से बचना चाहिए।

(7) प्रेम (Love)—बच्चो स प्रेम कीजिए। पशुओ म प्रेम कीजिए। निधन व असहाय व्यक्तियो मे प्रेम कीजिए। मनुष्य जाति म प्रेम कीजिए। यदि इसकी अति हो जाती है तो यह प्रेम वासना का रूप धारण कर लता है। वासना मय प्राणी को भले-बुरे का ज्ञान नही रहता। उसम विवेक नही रहता। रास्ते चलती महिलाओ मे छेडछाड करने लगता है। उसका चरित्र भ्रष्ट हो जाता है। प्रेम सामान्यसे अधिक न किया जावे तो ही श्रेयसकर है। अति से बचना चाहिए।

(8) इच्छा (Will)—इच्छा शक्ति या सकल्प का होना आवश्यक है। सकल्प से आत्मबल बढता है। नपोलियन की सेना जब आगे बढ रही थी तो उससे कहा गया कि आगे आल्पस पवत है। उसकी इच्छा शक्ति इतनी प्रबल थी कि उसके आदेशानुसार उसकी सेना न आल्पस पवत का पार कर लिया। उसे आशातीत सफलता प्राप्त हुई। यदि सकल्प युक्ता युक्त नही होता तो वह हठ का रूप धारण कर लेता है। मानव स्वभाव मे जिद्दीपन आ जाता है इसके कारण भली व बुरी सब ही प्रकार की हट को वह पूरा करना चाहता है। यह स्वभाव परिपक्वता की रेखा पार नही करे इसका सतत ध्यान रखना चाहिए।

(9) सम्मान (Respect)—अच्छे बालक नित्य प्रति अपने माता पिता एव गुरुजनो का नम्रतापूवक हाथ जोडकर प्रणाम करते या चरण स्पश करते हैं। श्रद्धा व्यक्त करत समय दोनो का हृदय सात्विकता से भर जाता है और यह ही सात्विकता कालान्तर स व्यक्ति की सम्पूर्ण मानसिक विकृतियो का नष्ट कर देती है। श्रद्धा स चरण स्पश करना या करुणा का वरदहस्त सर पर रखना इसस उनके दिव्य अनुभूतियो का सम्प्रेषण स्वयमेव हो जाता है। माँ का ममता मय स्पश जब बालक प्राप्त करता है तो वह असीम सुख का कारण होता है। वज्ञानिक भी स्पश के महत्त्व को स्वीकार करते हैं। यह सम्मान यदि श्रद्धा व भावना के साथ किया जाता है तो प्रशसनीय है। यदि इसको आदत के अनुसार एक क्रिया समभ कर किया जाता है तो वह परम्परा बन जाती है जिसका कोई महत्त्व नही होता है। ऐसा देखा गया है कि जहाँ सम्मान प्रदर्शित करने के लिए किसी व्यक्ति का चरण स्पश किया जाता है वही दूसरे द्वारा मानसिक अथवा शारीरिक रूप स दण्ड

देकर उसका अपमान किया जाता है। इस प्रकार के व्यक्तियों का व्यक्तित्व दोहरा होता है, वे बाहर से सज्जनता का मुखौटा लगाए होते हैं परन्तु भीतर से उनका मन कलुषित होता है। अपनी आन्तरिक भावना को छिपाने के लिए बाह्य रूप से वे सम्मान दिखाने का प्रयास करते हैं जिससे अन्त में उनके स्वभाव में चापलूसी आ जाती है। चापलूसी करने वाले अपने स्वार्थ के लिये निम्न प्रकार के हथकंडे अपनाने से भी नहीं चूकते जिन्हें अंग्रेजी में Woman, wealth & Wine कहते हैं। इनके दुरुपयोग से वे अपना तो चरित्र भ्रष्ट करते हैं दूसरों का भी पतन करने में नहीं चूकते हैं।

चापलूसी को आज की प्रचलित भाषा में चमचागीरी करना व मक्खन लगाना भी कहते हैं। जो व्यक्ति इस कला में निपुण होता है वह अपना स्वार्थ सरलता से पूर्ण कर लेता है। परन्तु जब उसके स्वार्थ का पर्दा खुल जाता है तो उस पर कोई भी विश्वास नहीं करता है। परिणामस्वरूप समाज में उसे हेय दृष्टि से देखा जाता है। मानव योग्य व्यक्तियों के प्रति सम्मान की भावना रखे, परन्तु उसके स्वभाव में चापलूसी नहीं हो इसके प्रति सावधान रहे।

आकांक्षा (Ambition)—मानव स्वभाव में आकांक्षा भी पाई जाती है। व्यक्ति चाहता है कि जीवन में वह एक अच्छा इंजीनियर, व्यापारी, कलाकार, कवि, शिक्षक, लेखक खिलाडी, सैनिक, श्रमिक आदि बने तथा इसमें उसको दक्षता भी प्राप्त हो। उसके लिए कुछ प्रयास भी करते हैं। परन्तु उनमें से कुछ को अपने ध्येय की प्राप्ति होती है। यह भी सही है कि दक्षता प्राप्त करने के लिये सबमें आवश्यक क्षमता नहीं होती इससे वे अन्य लोगों से पिछड़ जाते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि आकांक्षा के कारण एक व्यक्ति कई दफा क्षमता से अधिक कार्य कर जाता है। दूसरा व्यक्ति जिसमें जितनी क्षमता होती है उतना ही कार्य करता है। यहां तक तो कोई हानि नहीं है, परन्तु आकांक्षा के अनुरूप सफलता प्राप्त नहीं होने पर मानव में निराशा व हताशा होने लगती है जिससे उसके स्वभाव में शनै शनै चिड़चिड़ापन, कठोरता व निर्दयता के भाव आने लगते हैं। यदि वह निर्बलता के कारण असहाय होता है तो क्षणिक भावुकता के आवेश में आत्म हत्या भी कर बैठता है।

आकांक्षी व्यक्तियों ने, शासकों ने किले गुफाएँ, मीनार व प्रसिद्ध महलों का निर्माण कराया है। परन्तु इतिहास में ऐसे भी उदाहरण हैं जहाँ अपनी आकांक्षा के कारण हीन मन स्थिति में नरसंहार, लूटपाट व आगजनी द्वारा गाँव व कस्बे उजाड़ दिए हैं। नादिरशाह चंगेजखाँ व कुछ अन्य मुस्लिम शासक आज भी साम्प्रदायिक नरसंहार के लिए भारत में कुख्यात हैं। निजामशाह ने आज से साढ़े तीन सौ वर्ष पूर्व विजयनगर की सम्पदा व संस्कृति को, बख्तियार खिलजी ने बारहवीं

शताब्दी मे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त नालन्दा विश्वविद्यालय के छात्रावास, मठ को खण्डहर म परिवर्तित कर दिया व वहा के पुस्तकालय को जिसम दुलभ कृतियाँ थी उसको जलाकर राख कर दिया। आकांक्षा के कारण ही चोर, डाकू व आतकवादी समाज मे अनाचार व अत्याचार करत हैं। आकांक्षा रखे परन्तु यह भी जाँच करते रह कि इसके कारण मानव स्वभाव म निदयता की भावना तो नही पनप रही है।

मितव्ययता—युवावस्था तथा प्रौढावस्था म निरन्तर परिश्रमपूवक धन कमाते रहना चाहिए और साथ ही लगातार कुछ न कुछ बचत भी करत रहना चाहिए। यदि मनुष्य वद्धावस्था म निश्चिन्त जीवन व्यतीत करना चाहता है तो उसे अवश्य ही यौवन म डटकर धन कमाना चाहिए। यह भी सही ह कि अत्यधिक धन से मनुष्यो म बुराइयाँ आ जाती ह परन्तु इस पर उसे नियन्त्रण करना चाहिए। यदि यौवन मे धन कमाकर बचत करता रहता है ता वह वद्धावस्था म समाज की कई प्रकार मे सेवा कर सकता है। वह अपन मन को स्वस्थ तथा सक्रिय रख सकता है। यदि वद्धावस्था म भी मनुष्य का सारा समय धनोपाजन म ही बीत जाए ता उसका जीवन दयनीय है। इस प्रकार का व्यक्ति जीवन भर धन कमाने मे ही लीन रहता है, व्यय करन का उसके पास अवसर ही नही होता। वह माया का दास होता है। कुछ लोग ता धन की पूजा किया करते है वे भगवान् की मूर्ति के आगे नही, अपितु धन के आगे माथे भुकाया करते हैं। इजरायली लोग सुनहरी बछडे की मूर्ति की पूजा किया करते थे। यूनानी लोग सुनहले जुपीटर की पूजा किया करत थ। भारतीय जन लक्ष्मी देवी की पूजा दीपावली के अवसर पर करते हैं। यदि कोई मनुष्य परोपकारी है गुणी है, योग्य ह तो उसकी ओर कोई ध्यान नही देगा परन्तु आप कहदें कि यह वही मनुष्य है जिसके पास लाखो, करोडो की सम्पत्ति है ता उसको आप देखत ही रहग। सम्मान करेंग। चाह उसन सम्पत्ति बेईमानी, तस्करी और लोगो का पेट काट कर ही बुरे साधनो से कमाई हो। यदि धन का सचय करना हा तो अपव्यय से बचे। विवाह म धार्मिक सस्कारा मे, वेशभूषा पर कुव्यसना व सामाजिक प्रदशन पर फिजूलखर्ची करके धन की बरबादी करत हुए कही भी देखा जा सकता है। लोग अपना रहन सहन बढ चढकर रखतेहै। इसी का परिणाम हाता है कि कई लोगा के व्यापार ठप्प हो जाते है, दीवाले निकल जात है कई चोरी, डाके के अपराध मे न्यायालय स सजा पात हैं और बहुत से बेईमानी, धोखा भ्रष्टाचार, चोर बाजारी और तस्करी म पकडे जात हैं। इस लिए अच्छा यह होगा कि आप मितव्ययी बने सरल जीवन बिताये और जितना भी ईमानदारी व परिश्रम के साथ कमाते हैं उसम से थोडा बचाकर रखें।

बकोल स लाला राजपतराय की मासिक आय उस समय साठ हजार तक जा पहुँची थी, परन्तु वे खर्चे के लिए आवश्यक राशि रखकर शेष धन दान कर दिया करते थे। सर गगाराम ने लाखो रुपये दान कर दिए। सरदार दयालसिह ने अपनी

अधिकांश धन सम्पत्ति दान कर दी थी। जज शादीलाल के दान से रिवाड़ी (हरियाणा) में अस्पताल बना। सेठ घनश्यामदास बिरला ने दान के कारण बहुत कीर्ति अर्जित की। इन दानियों की चलाई संस्थाएँ आज भी जन सेवा में लगी हुई है। जो लोग धन संचय नहीं करते, जो बचत का महत्त्व नहीं जानते, जो आय से कम खर्च नहीं करते या खर्च को नियमबद्ध नहीं करते वे समाज के शत्रु हैं।

जो राष्ट्र अपनी सम्पूर्ण उपज अपने सम्पूर्ण उत्पादन का उपयोग कर डालते हैं और भविष्य के लिए भण्डार नहीं रखते उनके पास कोई पूँजी नहीं होती वह राष्ट्र पंगु हो जाता है। अतः मितव्ययी बनो। परन्तु यह भी ध्यान रहे कि इसका अति होने व व्यय नहीं होने से वे लालची न बन जावें (Greedy) लालची आदमी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करता। धन ही उसके लिए सब कुछ हो जाता है स्वभाव से मितव्ययता हो परन्तु लालच का दुगुण न आवे यह ध्यान रहे।

12 आत्मविश्वास (Confidence)—स्वेट मार्डन ने कहा है कि चरित्र या भाग्य संयोग से नहीं बनता। गणित के सवाल का उत्तर तब ही सम्भव है जब नियम के अनुसार उसे हल किया जावे। आप अपना आदर्श बनाइये। अपने बारे में क्या सोचते हैं, आपको अपनी क्षमता पर कितना विश्वास है इससे ही आपको अपने भविष्य का विश्वास हो जायगा।

'साहस', 'विश्वास' और 'आशा' ही तीन शब्द हैं जो हारने पर भी आदमी को जीवित रखते है। केवल विचारों को बदलने की बात है।

डर से हीन भावना का सृजन होता है, तो विश्वास से समर्थ होने का।

स्वामी विवेकानन्द ने कहा है कि वह बात मन में ही न लाओ जो तुम व्यक्त नहीं करना चाहते। अगर तुम स्वस्थ रहना चाहते हो तो स्वस्थ विचार धारण करो। अगर सुख समृद्धि, खुश हाली चाहते हो तो खुश हाली और समृद्धि की बात करो।

यदि यह आत्म विश्वास अपनी सीमा का उल्लंघन करता है सम्यक नहीं होता तो यह अहंकार का रूप धारण कर लेता है। इस ही आत्म विश्वास की अति के कारण अपने को आवश्यकता से अधिक महत्वपूर्ण जताने का प्रयत्न करता है। क्षण-क्षण में अपने ओहदे का अहसास कराता चलता है। कोई कोई तो सामान्य रूप से चलने के बदले सीना तान कर चलता दिखाई देता है। किसी से कोई बात करो तो अपने को अपनी हैसियत से बड़ा ही बतावेंगे। सामान्य रूप से बात करने के बदले जोर से बोलकर अपना प्रभाव जमाने की कोशिश करेंगे। बात चीत या बहस के समय यह बतावेंगे कि उन्हें उस विषय पर बहुत मालूम है जबकि सच यह है कि उनका ज्ञान अल्प है। इन सब व्यवहार से उनके मन का भाव यह है कि

उनमें कुछ कमी है। राज जमाने की प्रवृत्ति का कारण अवचेतन मन का यह प्रयास है कि अपनी हीन भावना कम की जाय। बचपन के साथियों पर हावी होने की भावना आगे चल कर अभिमान की मनोवृत्ति पैदा करती है। यदि किसी ऊँचे पद पर पहुँच जाते हैं या धन हीन से धनवान बन जाते हैं तो वह अपने मित्रों से, बचपन के साथियों से आँख चुराने लगते हैं। किसी शायर ने ऐसे लोगों की प्रवृत्ति पर क्या ही सुन्दर कटाक्ष किया है।

जिनको इक्तदार जमाने में चमक जाता है,
उनको बचपन के हबीबों से हिजाब आता है।

तुलसीदास जी ने भी कहा है —

ऐसो को जनम्यो जग माही।
प्रभुता पाय जाहि मद नाही॥

संसार में ऐसा कौन है जिसे प्रभुता पाकर घमण्ड न होता हो लेकिन इसके अपवाद भी हैं जिन्हें पद या धन प्राप्त होने पर भी कभी अहंकार नहीं आया है। वास्तव में अहंकार आदमी को अंधा बना देता है। इसके विपरीत सत्पुरुष जितने ऊँचे चढ़ते हैं उतने ही विनम्र हो जाते हैं।
बिहारी ने क्या ही अच्छा कहा है —

नर की अरु नल नीर की, गति एकै कर जोय।
जेतो नीचो ह्वै चले, तेतो ऊँचो होय॥

टंकी से नल जितना नीचे जाता है, उसका पानी दूसरी तरफ उतना ही ऊँचा उठ जाता है। इसी प्रकार मनुष्य जितना नम्र होता है उतना ही ऊँचा उठता है। अतः हममें इतना आत्म विश्वास भी नहीं होना चाहिए कि हम अहंकारी हो जावें।

(13) निंदा Reflection—निंदा करने की भी हमारी आदत पड़ जाती है। यदि बस या ट्रेन में यात्रा कर रहे हैं तो हम किसी भी राजनेता धर्माचार्य या अधिकारियों की बुराई करने लगते हैं। महात्मा गाँधी का प्रिय भजन—"वैष्णव जन तो तेने कहिए पीर पराई जाने रे। इसी की अन्य पंक्ति है—
निंदा न करे केनि रे।"

यह देखने में आता है कि लोग अपना अधिक समय दूसरों के विषय में सोचने तथा उनके दोष व निंदा करने में नष्ट कर रहे हैं। ऐसे लोगों को स्वयं की कमियों को देखने का ध्यान ही नहीं आता है। ...... स्वार्थ, कठोर व .... जाने हैं ये भी कुछ ऐसे काम करा देते ... है जिनसे ......

विचार शक्ति प्रकट होती है। हम यह क्यों सोचते हैं कि दूसरे लोग भी हमारी तरह ही सोचें। हम यह क्या सोचते हैं कि किसी घटना वस्तु या व्यक्ति को देखकर हमारे अन्दर जैसी गहरी अनुभूति होती है वैसी ही दूसरे में भी हो। ऐसी आशा हम कम कर सकते हैं कि जैसा हम सही सोच रहे हैं वे भी इसी दिशा में सोचें।

किसी विचारक ने कहा है कि आदमी के अन्दर एक बच्चा होता है। लेकिन कुछ लोग उसे मार डालते हैं। इसमें वे स्वयं भी समाप्त हो जाते हैं। बच्चे को गम्भीरता के मुखौटे से डर लगता है, इससे उसमें भय समा जाता है तथा हम लोगों को वह सन्देह की दृष्टि से देखने लगता है। अधिक गम्भीर होना सुखद नहीं है 'जाओ और जीने दो' का सिद्धान्त प्राणी की हिंसा पर ही लागू नहीं होता यह विचारों पर भी लागू होता है। जो अपनी बात को अपने विचारों को दूसरे पर थोपते हैं और समझते हैं कि जैसा वे सोचते हैं वह ही अंतिम है वे सही नहीं हैं। आपको अपनी बात कहने का हक है परन्तु दूसरा उसे मान ही ले इसके लिए उसे बाध्य नहीं किया जा सकता। यदि आपमें यह भावना बनी रहती है कि मेरी बात सब स्वीकार की जाय तो अन्त में दूसरे के प्रति अपवित्रता की भावना उत्पन्न हो जाती है जो हमारे मन को अशुद्ध बनाने का कारण होती है जिसके परिणाम दुष्कर होते हैं। यदि यह ही प्रवृत्ति हमारे मन में चलती रहती है तो अन्तत यह हमारे स्वभाव का एक अंग हो जाती है जो हमारे चरित्र पतन में सहायक होती है।

(14) भक्ति Reverence— हमारी भक्ति ने भी आज अन्तद्वन्द्व का स्थान ले लिया है, हजारों विचार एक साथ एक ही मनुष्य के मन में एकत्रित हो गए हैं। हजारों पीढ़ियाँ एक साथ एक मनुष्य के भीतर जी रही हैं। पांच हजार साल पूर्व का भी विचार उसके मन में बैठा है तथा अत्याधुनिक समय का विचार भी मन के भीतर बैठा है। समस्त गुरु समस्त शिक्षक और उपदेशक किसी एक बात पर सहमत नहीं हो रहे हैं। वे इस बात पर अड़े हुए हैं कि आदमी को समझाने के लिए जो कह रहे हैं उस पर विश्वास कर लो। ईसाई कहते हैं कि जीसस का जन्म कुआरी कन्या से हुआ, मुसलमान कहते हैं कि मुहम्मद साहब सदेह स्वर्ग में पहुंच गए। जैन कहते हैं कि महावीर का गर्भ ब्राह्मण स्त्री के पेट में आया और उसे रातों रात क्षत्राणी के पेट में बदल दिया गया। सभी धर्म गुरु कहते हैं कि उनकी मान्यता पर विवाद करने की आवश्यकता नहीं है। यदि विवाद कर संदेह उत्पन्न कराेगे तो उन्हें नरक जाना पड़ेगा। गरीब कमजोर आदमी डरता है कि नरक जाने की आवश्यकता क्या है मान लो।

कोई भी यह समझने की चिंता नहीं करता कि ऐसा क्या कहा गया है। इसके पीछे क्या तथ्य है। अपने धर्म गुरुओं के प्रति असाधारण श्रद्धा के कारण लोगों में ऐसी भावनाएँ पैदा होती हैं आवश्यकता है इसे समझने की। इसके

पीछे जो भावना ह उस जानने की। जनियों के महावीर का गर्भ ब्राह्मण स्त्री के पेट मे आया लेकिन उसे क्षत्राणी के पेट मे क्या बदल दिया गया। उसके पीछे उनकी मान्यता यह थी कि ब्राह्मण से क्षत्रिय बडा होता ह। सारे तीर्थङ्कर क्षत्रीय थ, अत महावीर का गर्भ रातो रात बदल दिया। जनियो के चौबीस तीर्थङ्कर मे एक तीर्थङ्कर थे मल्लीनाथ, दिगम्बर कहते हैं कि वे पुरुष थे और श्वेताम्बर कहत हैं कि वे स्त्री थे। दोनो ही कहते है कि हमारी बात नही मानोगे तो नरक मे जाना पडेगा। दिगम्बर कहते हैं कि स्त्री तो कभी तीर्थङ्कर हो ही नही सकती। इस पर भी विवाद है कि वे स्त्री हैं या पुरुष। इसके पश्चात आया कम्युनिज्म। उसने कहा सब धर्म अफीम का नशा हैं इसमे कोई सार नही है, यह बिल्कुल झूँठ है। सत्य धर्म तो वह है जो मार्क्स कहते हैं। इसके पश्चात आया विज्ञान एवं वैज्ञानिक मर भी नही पाया कि दूसरा वज्ञानिक कहता है कि वह जो कहता है वह सही है। आदमी के मन पर सत्ता के दावेदारो ने उसके चित्त मे विचारो का ऐसा जाल खडा कर दिया है जो बहुत विरोधी है और सब दिशाओ म खींचता है। इस जाल को खडा करने में भय का उपयोग किया गया है कि अगर आप नही मानते हैं तो नरक जाना पडेगा। इसी प्रकार विज्ञापन निकल रहे हैं कि फलां पाऊडर लगाओगे तो सुदर बनोगे अन्यथा कुरूप। यहाँ भी डर ही काम कर रहा है। वर्षों से यही होता रहा है। यदि कोई भी असत्यबार बार दोहराया जाय तो उसका विश्वास जड पकडने लगेगा। एक बात निश्चित है कि विश्वास से अधिक आत्मघातक और कोई चीज नही है। बिल्ली रास्ता काट जाती है, छींक आ जाती है, काना आदमी सामने आ जाता है तो वज्ञानिक या डाक्टर जो जानता है कि इन बातों का कोई महत्व नही है, फिर भी आँख मीचकर भी इस पर अंधविश्वास कर लेता है। कुछ कहते है कि हम ईश्वर के होने पर अविश्वास करते है, आत्मा के होने पर विश्वास करते हैं।

विश्वास और अविश्वास दोनो एक ही सिक्के के दो पहलू हैं विश्वास विधायक श्रद्धा है और अविश्वास निषेधात्मक श्रद्धा है लेकिन दोनो श्रद्धा है और वही आदमी भीतर के जाल से मुक्त हो जाता है जो श्रद्धा और विश्वास मे मुक्त हो जाता है, जो दूसरे की तरफ देखने से मुक्त हो जाता है। मैं एक से छूटता हूँ तो दूसरे से बंधता हूँ ता तीसरे स बध जाऊँगा लेकिन मेरा बधने से छुटकारा नही होगा। इसलिए जो विश्वास कर लेत हैं वे विवेक तक नही पहुँच सकते। स्वय के अनुभव तक नही पहुँच सकते। उनकी यात्रा वही बन्द हो जाती है। तीर्थङ्कर महावीर को जो दिखाई दिया वह तत्त्वसार म है महात्मा बुद्ध को जो अनुभव हुआ वह त्रिपटक म है। भगवान कृष्ण को जो ज्ञान हुआ वह उन्होंने गीता मे कह दिया। मुहम्मद साहब को इल्हाम हुआ वह उन्होने कुरआन म कह दिया। यह पर्याप्त है। उस पर विश्वास कर लो। लेकिन आप इतना कह सकते हैं कि जो आप जानत

है जो सत्य है उस पर मुझे कोई आपत्ति नहीं है बल्कि अभी तक मैं जानता नहीं उसके बारे में जान कर रहूँगा। जो श्रद्धा करते हैं वे ही धार्मिक हैं जो श्रद्धा नहीं करते वे अधार्मिक हैं। धार्मिक तो वह है जो सच्चा है और सच्चे का मतलब है कि जो नहीं जानता उस पर श्रद्धा नहीं करता। इस मध्य बिन्दु पर यदि हम अपने चिन्तन को ले जाने की सामर्थ्य रखते हैं या साहस जुटा सकते हैं तो यह विचारों का भवन सम्पूर्ण गिर सकता है तथा अंधविश्वासों से हम बच सकते हैं। निर्विकार होने का यही सब से उत्तम रास्ता है। अन्त में यह भी कहना है कि गीता, त्रिपटक, तत्त्व सार बाइबल व कुरान का ज्ञान तो प्राप्त किया जावे। परन्तु उनका विवेक से अध्ययन भी किया जावे तो उनमें सत्य की प्रतीति होगी। और इसी सत्य को हम जीवन में ढालना है।

अंध विश्वास Superstition—इसने भारतीय समाज को आधारहीन भावनाओं से जकड़ रखा है। वैसे तो शहर के निवासी भी इनसे बच नहीं पाए हैं। परन्तु ग्रामवासी व महिलाएँ इनसे अधिक ग्रस्त हैं। स्थान व क्षेत्र के अनुसार इनको विविध रूपों में देखा जा सकता है। इनमें मुख्य है बिल्ली का रास्ता काटना, छींकना काने व लंगड़े व्यक्ति का सामने आना। खाली घड़ा लिए हुए सामने आना उल्लू का बोलना निश्चित दिवसों पर दिशा के अनुसार यात्रा करना जिसे 'सामा दिशा शूल' कहते हैं। नमक का बिखरना, चाकू पर चाकू गुणन चिन्ह के अनुसार रखा होना। गधे का रेंकना, एक जूते पर दूसरे जूते का रखा होना सूर्य ग्रहण व चन्द्र ग्रहण पर सूतक लगना, प्रमुख दिनों पर बाल नहीं कटवाना, न ही नये कपड़े पहिनना आदि। यह सब अशुभ लक्षण के सूचक हैं। इन अंध विश्वासों के कारण व्यक्ति अपना विवेक खो देता है तथा उसके निर्णय लेने की शक्ति कमजोर होने के कारण वह अविश्वासी व वहमी हो जाता है। एक गाँव में किसी रोग के कारण कई बच्चों की मृत्यु हो गई। किसी साधु ने गाँव वालों को यह विश्वास दिला दिया कि अमुक महिला के कारण ही बच्चे मरते हैं। गाँव वालों ने उस महिला को पीट पीट कर मार दिया। यह तो बाद में पता लगा कि उस साधु को इस महिला से पुरानी शत्रुता थी जिसका बदला साधु ने उस गाँव वालों के अंधविश्वास का लाभ उठाकर लिया।

गाँव में कभी कभी गाय भैंसों आदि पशुओं में खुरसान रोग फैल जाता है। इसका इलाज अजीब ढंग से किया जाता है। एक व्यक्ति जो सयाना या साधु था शनिवार की आधी रात को नग्न होकर श्मशान गया और वहाँ से एक अध जला बाँस लेकर आया। उसे एक नीले डोरे में बाँध कर ग्राम द्वार पर लटका दिया। इसके पश्चात सारे गाँव के पशुओं को उसके नीचे से निकाला गया। उस दिन गाँव में ढिंढोरा पिटवा दिया गया कि गाँव में पशुओं को रोग से मुक्ति दिलाने के लिए चक्की पीसने, दही बिलोने तथा गोबर उठाने जैसे काम बन्द रहेंगे। परिणाम यह

हुआ कि पशुओं को तो रोग से मुक्ति नहीं मिली परन्तु उन्हें दैनिक जीवन के कार्यों से मुक्ति मिलने के कारण कष्ट अवश्य उठाना पड़ा। राजस्थान में ऐसा विश्वास है कि यदि भोजन के पश्चात अंगड़ाई लेने लगे तो खाना गधे के पेट में चला जाता है। कोई व्यक्ति कभी किसी यात्रा के लिए तत्पर हो तो उस समय उसके विदा करने से पहिले घर वाले बिल्ली से दही झूठा करवा कर उसे खिलाते हैं। उसी समय यदि कोई कुत्ता कान फड़ फड़ाले तो सब उपस्थित लोग थूकते हैं और उस यात्री की यात्रा रद्द कर दी जाती है।

इस अंधविश्वास का शिकार राजस्थान प्रशासनिक सेवा की लिखित परीक्षा में उत्तीर्ण एक युवक हुआ जब वह साक्षात्कार के लिए जाने लगा तो उसे रोक लिया गया क्योंकि उसी समय एक कुत्ते ने कान फड़ फड़ा दिए थे। इससे उसके घर वालों को उसमें अनिष्ट नजर आने लगा था। परन्तु इस अंधविश्वास के कारण वह युवक एक अच्छी नौकरी गवा बैठा।

गांवों में बालकों की अस्वस्थता का कारण यह माना जाता है कि उसे किसी की नजर लग गई है। इसे उतारने के लिए चौराहे से मुट्ठी भर धूल लाई जाती है। फिर उस धूल में नमक मिलाकर अस्वस्थ बच्चे के मस्तक के ऊपर घुमाकर उस धूल को अग्नि में डाल दिया जाता है। इस क्रिया के पश्चात बच्चे को चिकित्सक के पास ले जाने की आवश्यकता नहीं रहती। इसका परिणाम बहुत बुरा होता है। कई दफा बच्चे की जान भी चली जाती है, फिर भी वे यही समझते हैं कि शायद देवता नाराज हो गए हैं।

देवता का रोष प्रकट करवाने की प्रथा का चलन बड़ा विचित्र है, इसको आंखा देखना या ज्योत करवाना कहते हैं। ये क्रियाएँ, माता जी, मानड़ियाजी, हनुमान जी, भैरुजी और पितर पितरानियों के समक्ष अपने विघ्न प्रश्न पूछने, समझने के लिए किए जाते हैं। भक्त किसी बड़ी औरत या भोपे के आगे अपने आखा या ज्योत का घृत ले जाकर धरता है। ऐसा माना जाता है कि देवी देवता अपने पुजारी के सर आकर मुंह से बोलते हैं। भक्त उससे अपने प्रश्नों का उत्तर पूछते हैं और पुजारी के बताए अनुसार विश्वास करते हैं।

ये अंधविश्वास शहरों की अपेक्षा गांवों में अधिक प्रचलित हैं, इन अंध विश्वासों कि जंजीर में जकड़े गांव वासी इसी कारण अपना यथोचित विकास नहीं कर पाते। आज गांव गांव में चिकित्सालय हैं, स्कूल है, पशुचिकित्सक है लेकिन ग्राम वासी अपने विश्वासों के सामने इन सब का कोई महत्व नहीं समझते।

मुसलमानों में भी अंधविश्वास मिलते हैं उनको अजूबे कहा जाता है। पति पत्नी के एक ही कंघी से बाल संवारने से आपस में लड़ाई हो जाती है। दिन में कहानी कहने से मामू रास्ता भूल जाता है। नमाज पढ़ने के पश्चात जानमाज (चादर

या दरी) का कोना उलट देना चाहिए, नहीं तो उस पर शैतान नमाज पढ लेता है। पत्नी के मरने पर मुस्लिम पति उसके जनाजे का हाथ न लगाएँ क्योंकि इस्लामी कानून के अनुसार किसी भी नामरहम का हाथ लगाना हराम है। नामरहम वह है जिसके साथ विवाह हो सकता है और जिससे परदा करना जरूरी है। ध्रुव तारे की ओर पाव करके न सोना। उत्तर की ओर रुख करके पशाब, पखाना करना या पैर करके साना उचित नहीं क्योंकि इस ओर कुतुब तारा होता है। चारपाई पर नमाज पढने वाला बन्दर होता है। 8, 18 व 28 चाँद की तारीख का अशुभ मानते हैं। मुहर्रम में चाद म पान नहीं खाते, शादियां नहीं करते, मजारों पर बकरे हलाल करते हैं। शबे बरात के महिने का मुरदा का महिना मानना अंधविश्वास है। मुस्लिम समाज म अंधविश्वास है न कि शरीअत, हदीस और कुरान जैसे पाक ग्रन्था म ऐसा कहीं लिखा है। किसी भी अंधविश्वास के पीछे यदि जो भावना छिपी है उस भावना को समझ कर काम किया जावेगा तो अंध विश्वास नहीं रहेगा।

ज्योतिष भी अंध विश्वास का कारण हो सकता है।

ज्योतिष कुछ लोगो के लिये विज्ञान हो सकता है और कुछ लोगो के लिय धर्म भी परन्तु विख्यात अमरीकी खगोलविद् बार्ट ज जे बोक न इसे केवल मूर्खता और अंधविश्वास ही कहा है। ज्योतिष के प्रति लोगो की सनक की निन्दा करते हुए प्रो बोक ने कहा है कि यह धारणा कि सूर्य, चन्द्रमा अथवा अन्य ग्रह शिशु के जन्म तथा उसके भविष्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है बिल्कुल बेहूदा है।

करीब पचास वर्षों म नक्षत्रो व ग्रहो का अध्ययन करने वाले इस खगोल विद् का कहना है कि इस मत के काफी प्रमाण हैं कि ग्रह अथवा नक्षत्रों का मनुष्य पर कोई प्रभाव नहीं पडता। भविष्य वाणियों को प्रोत्साहन देने की निन्दा करते हुए प्रो० बोक ने इन्हें सामाजिक व नैतिक दृष्टि से अक्षम्य बताया है। लेकिन साथ ही यह भी मानते हैं कि केवल वैज्ञानिक तथ्यों के आधार पर इसे रोकना कठिन है। संसार के कई अखबार राशियों की भविष्यवाणियाँ छापते हैं जिनसे व्यक्ति के निर्णय लेने की क्षमता पर बुरा प्रभाव पडता है।

ज्योतिष का उद्भव ईसवी सन् की पहली व दूसरी शताब्दी के बीच म हुआ, उस समय लोगो की इस मान्यता पर विश्वास किया ... नक्षत्र अलौकिक शक्ति के रूप म मानव जीवन पर प्र... है ... व अन्तरिक्ष विज्ञान व रसायन विद्या के युग म जहाँ ... व चन्द्रमा पर उतर गया है व स्पूतनिक अन्तरिक्ष ... विश्वास किया जाव। अब अपने विवेक व नि... प्रमाण कर अपने जीवन का ... बनाना ... आवेगी इसके लिए आ... भी स्व... लाभप्रद है अन्यथा यह ... मा। कर होगा।

तृतीय सोपान

आचरण की अन्य विशेषताएँ

सत्याचरण

सत्य शब्द का अर्थ है "रहने वाला"। सत्य सदा सत्य ही रहता है। इसकी कभी क्षति नहीं होती। पहिले भी सत्य, सत्य ही था। आज भी सत्य ही है और भविष्य में भी सत्य ऐसा ही रहेगा। महाभारत में इसलिए कहा है "सत्य परब्रह्म है"। महात्मा गांधी भी ऐसा ही मानते थे "सत्य ही ईश्वर है"।

एक दूसरे के साथ व्यवहार वचन द्वारा ही होता है। किन्तु केवल मुँह से कहे हुए वाक्य पर ही सत्य निर्भर नहीं है। मन, वचन और कर्म तीनों से जब सत्य का आचरण हो तभी सत्य प्रतिष्ठित रहता है। युधिष्ठिर ने हाथी मारकर 'अश्वत्थामा हत, नरो वा कुंजरो वा', दबी जबान से कहा नतीजा यह हुआ कि उनका रथ जो जमीन से ऊँचा चलता था, औरों की तरह जमीन पर चलने लगा। हिमालय पर महा प्रयाण के लिए गए तो हाथ की छोटी उँगली गल गई।



महात्मा गांधी मानते थे सत्य ही ईश्वर है।

जो वचन दूसरों को कष्ट पहुँचाने के उद्देश्य से बोला जाता है, वह सत्य होने पर भी असत्य कहलाता है। जैसे काने पुरुष को काना कहना यद्यपि सत्य है, किन्तु यदि उसमें उस मनुष्य के दिल को चोट पहुँचती है, या यदि उसे पहुँचाने के विचार से काना कहा जाता है तो वह असत्य में ही गिना जायगा। लंगड़े को लंगड़ा कहने पर भी उसके दिल को चोट पहुँचती है तो वह भी असत्य ही कहा जायगा। इसलिए कहा है "सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयात न ब्रूयात सत्यमप्रियम" सत्य बोलना चाहिए, प्रिय सत्य बोलना चाहिए, अप्रिय मत बोलो, अप्रिय सत्य मत बोलो।

यदि सत्य बोलने से किसी के प्राणों पर सकट आता है तो उस अवस्था में सत्य का बोलना भी बुरा कहा जायेगा। लेकिन असत्य बोलकर किसी के प्राणों की रक्षा करने से उसके जुल्म और अत्याचारों से दूसरे के प्राणों पर सकट आने की सभावना हो तो ऐसे समय असत्य ही यथेष्ठ रहेगा। यदि किसी स्त्री का कोई दुराचारी पकडने को दौड रहा हो और उस स्त्री के जाने का रास्ता पूछे तो ऐसे समय झूठ बोलकर स्त्री को बचाया जा सकता है। यदि व्यक्ति सुधर सकता हो तो उसे अवसर देने के लिए झूठ बोला जा सकता है।

अग्रेज विचारकों ने कहा कि सर्वोत्तम नीति है सच्चाई (Honesty is the best policy) किन्तु हमारे शास्त्रों इससे कही आगे की बात कह गए हैं। उनके अनुसार सत्य से परे धर्म ही नही है। प्रकृति जैसे प्रगतिशील है, सत्य भी उसी तरह प्रगतिशील है। यह रूढी की लकीर नही। जो एक लकीर को ही सत्य मानकर बैठ जाता है, वह झूठ को सत्य बनाना चाहता है।

आत्मा दिन दिन आगे बढने की कोशिश करती है और उसे हम यदि झूठ आवरण से ढक न लें तो वह अपने आप ही सत्य प्रदर्शन करती है। ईसाई सत एवर माड ने कहा है कि सत्य तो हमारे साथ ही जन्म लेता है। इसे काटकर फैंकने के लिये हम प्रकृति से युद्ध करना पडेगा। हाफिज ने कहा है कि सत्य तो गुलाब की तरह कँटीली डाल पर उगता है। पर सत्य पथ पर चलने वाले न तो प्रकृति से युद्ध करते हैं और न गुलाब जैसे फूल की कामनता और सुगध पाने के लिए उन्हें काटो का भय रहता है। इसी ने तो काटो का ताज ही धारण कर लिया था। महात्मा गाँधी ने तो आग्रह किया स्वतन्त्रता के लिये पर उसके साथ भी सत्याग्रह था। अग्रेजो को पूर्व से ही सूचित कर आदोलन किया और गिरफ्तारी देते रहे कभी झूँठ का सहारा न लिया। सत्य के लिये ही वह शहीद हो गए। महावीर ने तो सत्य की पूर्ण साधना के बल से अन्धविश्वास के इस प्रगाढ अन्धकारपूर्ण काल रात्रि मे ज्ञान सूर्य का उज्ज्वल आलोक फैलाया।

सत्य के लिये किसी तयारी की जरूरत नही पडती। झूठ को बनाना पडता है। जो सत्य पर निछावर होता है उस का नाम इतिहास के पट पर अमर हो जाता है। जुलाहे के घर जन्म लेकर कबीर अमर हो गए। उनने सत्य को ही सबसे बडा तप बताया।

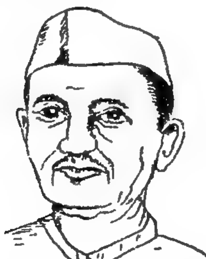
साच बराबर तप नही झूठ बराबर पाप।
जाके हिरदे साच है, ताके हिरदे आप ॥

चमार के यहाँ जन्म लेकर रैदास ब्राह्मणो से कही अधिक पूजित हुआ हिटलर मुसोलिनी सत्यपथ से विचलित होगये तो उनको जान से हाथ धोना पडा। महाभारत के शान्तिपर्व में नारद जी का यह कथन आता है—

सत्यस्य वचन श्रेय सत्यन विहित वदत् ।
यद्भूतहितमत्यन्त एतत्सत्य मत मम ॥

सत्य ता ग्राचरण पर ही निमर करता है । युद्ध की तयारी दोना तरफ कौरवा ग्रौर पाडवो ने की । सारे सम्बधी ग्रौर मित्र दाना तरफ जुट । रणक्षेत्र मे युद्ध करना क्षत्रिय का फज है ग्रौर विमुख होना ग्रधम ग्रार ग्रसत्य है। ऐसे समय लाखो की जीवन हानि भी हो तो भी युद्ध ही सत्य माना गया । यदि न बोलने स छुटकारा मिलता हो तो ठीक है । शेक्सपीयर ने भी लिखा ह, "विचारो को जबान पर न लाग्रा" । Give thy thoughts no tongueकिन्तु विचार यदि प्रकट करने ही पड़े ग्रौर मौन स छुटकारा न मिल तो सत्य के लिए ग्रप्रिय भी कहना पडता है ।

हिमालय पर ग्रजु न पहुँचा तपस्या करन ग्रौर भगवान शकर स पाशुपत ग्रस्त्र लन । शकर न भक्त की परीक्षा लेन की ठानो । मायावी शूकर पर ग्रजु न ग्रार किरातराज रूपी शकर, दाना ने एक साथ बाण छोडे किरातराज की सेना



लाल बहादुर शास्त्री का सत्य ग्राचरण था ।

शूकर को उठा ल जाने के लिए पहुँची । उधर ग्रजु न ग्रकला । ग्रप्रिय का जवाब ग्रप्रिय वाणी स न दे तो मन की बात एक ग्रौर वाणी दूसरी ग्रार ग्रसत्य मानी जायगी । भारवि कवि ग्राखिर ग्रजु न स कहलवाते है—

कहाँ मुझ जसा वर्णाश्रम धम की रक्षा करन म योग्य ग्रौर कहाँ निकृष्ट जाति क जीवा की हिंसा म तत्पर तुम्हारा स्वामी । नीचा के साथ उच्च व्यक्तिया की मित्रता नही होती, क्याकि हाथी शृगालो से मैत्री नही कर सकता । राजा हरिश्चन्द्र न सत्य के लिए सवस्व बलिदान कर दिया । उसीलिए रहा ह ।

आचरण की अन्य विशेषताएँ

समय की पाबन्दी

अग्रेज भारत से चले गए परन्तु कुछ अच्छी बातें भी सिखा गए जिनमें से एक है समय की पाबन्दी। समय की पाबन्दी न होने से हमारे सारे कार्यक्रम देर से चलते हैं। हम से रेलगाडी छूट जाती है, बस छूट जाती है, इन्टरव्यू में समय पर नहीं पहुँचते हैं। हमारी सभाए गोष्ठियाँ समय पर नही होती। न वक्ता समय पर आता है और न श्रोता ही। न बरात समय पर आती है न पार्टियाँ समय पर होती हैं। समय की पाबन्दी न होने से सब को परेशानी होती है और जब स्वयं पर बीतती है तो दूसरों की बुराइयाँ करते हैं। समय के पालन करने की सलाह देते हैं परन्तु हम स्वयं ही समय का पालन नही करते हैं।

मान लीजिए आपने किसी मेहमान को भोजन करने के लिए निमन्त्रित किया है। आप को यह संशय है कि वह अतिथि समय पर भोजन करने आवेगा या नही। अतिथि को यह अन्देशा है कि आपके के यहाँ समय पर भोजन तैयार होगा या नही दोनों ही असमंजस्य में हैं। परिणामत दोनों का ही समय व धन बर्बाद होता है।



पंडित जवाहरलाल नेहरू समय के पाबन्द थे।

समय पर काम नही करने से हमारी आदत खराब हो जाती है। हमारी कुशलता कम हो जाती है। हम हर काम में लेट लतीफ हो जाते हैं। कोई हम पर किसी काम के लिये भरोसा नही कर सकता, कोई व्यक्ति हम पर बड़ा काम या दायित्व तभी सौंप सकता है जब उसे विश्वास हो जाय कि काम समय पर हो

'चन्द्र टरै सूरज टरै टरै जगत व्यवहार ।
पै दृढ़ हरिश्चन्द्र का टरै न सत्य विचार ॥

एक मुनि प्रवचन दे रहे थे। प्रवचन के पश्चात् एक एकचर सभी से कोई भी त्याग, बुरी आदत छोड़ने का व्रत लेने का आग्रह किया। सभा में एक चोर भी बैठा था। मुनि ने उससे पूछा कि आप क्या काम करते हैं। चोर ने उत्तर दिया मैं चोरी करता हूँ। यदि मैं इसे छोड़ूँ तो भूखा ही मर जाऊँ। मुनि बोले तुम झूठ बोलना छोड़ दो। चोर ने आजीवन झूठ न बोलने की प्रतिज्ञा ली। राजमहल में जब चोर चोरी करने गया तो द्वारपाल ने टोका कि तुम कौन हो उसने कहा कि मैं चोर हूँ। द्वारपाल ने समझा कि यह मजाक कर रहा है अतः उसे खुशी से अन्दर जाने दिया। जब उसने सब बहुमूल्य वस्तुएँ इकट्ठी कर ली तो घुड़साल के रखवाले के पास पहुँचा और एक घोड़ा देने को कहा। उसको पूछने पर भी उसने कहा कि मैं चोर हूँ। परन्तु रखवाले ने यह समझ कर कि चोर कभी भी अपने को चोर नहीं कह सकता उसे घोड़ा दे दिया और वह आराम से राजमहल से चला गया। प्रातःकाल जब चोरी का हल्ला मचा तो वे चोर को पकड़ने दौड़े पर यह सोचकर कि यह चोर है उनमें काना फूसी होने लगी। चोर की आँखें खुल गई और उसने कहा कि मैं ही चोर हूँ पर चोर इस प्रकार खुद को चोर थोड़े ही कहता है वे आगे बढ़ गए। चोर पुनः मुनि के पास पहुँचा और कहा कि आप चमत्कारी आत्मा हैं आप की एक बात मानने से मुझे सब साहूकार समझने लगे तो मुझे अन्य नियम दिलावें। मुनि ने उसको सत्य, अहिंसा, तपस्या का उपदेश दिया। इससे उसने मुनि दीक्षा ली और कर्मों का बन्धन काटने के लिये तपस्या में लीन हो गया।

एक काना राजा ने चित्रकारों को अपना चित्र बनाने के लिए कहा। किसी ने उसकी चित्र में दोनों आँखें बना दी, दूसरे ने उसे काना बना दिया। एक चित्रकार समझदार था उसने उसको तीर मारता हुआ बता दिया जिसमें एक आँख बन्द कर तीर चलाया जाता है। राजा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसे ईनाम दी। पहिला चित्रकार झूठा था। दूसरे ने कटु सत्य कहा जो भी उचित नहीं था। परन्तु तीसरे ने सत्य का पालन भी किया और राजा को प्रसन्न भी। बहुत से लोग झूठ बोलने की आदत न होने पर भी कभी कभी क्रोध में आकर झूठ बोलते हैं। कुछ लोग लोभ वश झूठ बोलते हैं। कुछ पुलिस के डर से झूठ बोलते हैं। कुछ हँसी मजाक में झूठ बोलते हैं। अतः सत्य बोलने वाले को क्रोध, लालच, भय और हँसी मजाक में छोटी बातों में भी झूठ नहीं बोलना चाहिये। सत्य को मन, वचन व कर्म तीनों से ही निबाहना चाहिए। सत्य गामी वास्तविकता समझकर बिना द्वेष और आसक्ति के उसका यथार्थ रूप समझता है और यथार्थ का ही अनुसरण करता है।

□

आचरण की अन्य विशेषताएँ

समय की पाबन्दी

अंग्रेज भारत से चले गए परन्तु कुछ अच्छी बातें भी सिखा गए जिनमें से एक है समय की पाबन्दी। समय की पाबन्दी न होने से हमारे सारे कार्यक्रम देर से चलते हैं। हम से रेलगाड़ी छूट जाती है, बस छूट जाती है, इन्टरव्यू में समय पर नहीं पहुँचते हैं। हमारी सभाएं गोष्ठियाँ समय पर नहीं होतीं। न वक्ता समय पर आता है और न श्रोता ही। न बरात समय पर आती है न पार्टियाँ समय पर होती हैं। समय की पाबन्दी न होने से सब को परेशानी होती है और जब स्वयं पर बीतती है तो दूसरों की बुराइयां करते हैं। समय के पालन करने की सलाह देते हैं परन्तु हम स्वयं ही समय का पालन नहीं करते हैं।

मान लीजिए आपने किसी मेहमान को भोजन करने के लिए निमन्त्रित किया है। आप को यह संशय है कि यह अतिथि समय पर भोजन करने आवेगा या नहीं। अतिथि का यह अन्देशा है कि आपके यहां समय पर भोजन तैयार होगा या नहीं दोनों ही असमंजस्य में हैं। परिणामतः दोनों का ही समय व धन बर्बाद होता है।



पंडित जवाहरलाल नेहरू समय के पाबन्द थे।

समय पर काम नहीं करने से हमारी आदत खराब हो जाती है। हमारी कुशलता कम हो जाती है। हम हर काम में लेट लतीफ हो जाते हैं। कोई हम पर किसी काम के लिये भरोसा नहीं कर सकता, कोई व्यक्ति हम पर बड़ा काम या दायित्व कभी नहीं रखता है [illegible] विश्वास [illegible] कि काम समय पर हो

सकेगा। यदि आप किसी कारखाने के व्यवस्थापक हैं आप वहा पर समय पर नही पहुँचते ता आप अपने अधीन कार्यकर्त्ताओं को भी समय पर पहुँचने के लिये बाध्य नही कर सकते। परिणाम यह होगा कि उत्पादन कम हो जायेगा और माल का स्तर भी गिर जायगा। भारत से विदेशो का जा माल भेजा जाता है उसमे से कुछ का स्तर इतना गिरा हुआ होता है कि वह माल स्वीकार ही नही किया जाता। इससे उत्पादक को नुकसान पहुँचता है और विदेशा म भारत की साख भी कम हो जाती है, भारत भरोसे का दश नही रह जाता है। इस हालत म हमारी स्थिति कभी नही सुधर सकती है। यदि आप कायालय जाते है तो ठीक समय पर कायालय पहुँचें और ठीक समय पर ही वहा से चलें। यदि कभी कोई आवश्यक काम पड जाता है ता पहले स अनुमति लें या आकस्मिक काम पड जाय तो फान या किसी अन्य माध्यम से सूचना भिजवाएँ। अगर यह छूट भी बार बार लेत है ता आपकी सवा पर भी असर पडता है अन्यथा इतना ता अवश्य ह कि आपकी साख नही रह जाती। आपकी कुशलता पर प्रभाव पडता ह। अगर आप समय पर काय करत ह ता आप से कोई कुछ नही कह सकता। अपन काम पर आपका अधिकार हागा और अफसर एव सहयोगी आपकी प्रशसा करेंग। हा सकता है आपका आर्थिक या भौतिक लाभ न हा, परन्तु दूसर की प्रशसा पाना या आपके प्रति प्रशसा भाव हाना भी अच्छी बात ह। इमस आपका आत्म सताप तो अवश्य मिलगा जा आपक भविष्य के लिय आग बढान म समथ हागा। जा समय क पाबन्द हात ह व समाज म आदर पात है, दूसर क-भरास के पात्र हात ह। उनम जीवन म उल्लास हाता है गति हाती है। व जीवन म बहुत कुछ पात हैं।

•

आज के जीवन म समय के पाबन्द हात हैं उनकी सख्या नगण्य है। इसलिय हमारा समाज अपेक्षित प्रगति नही कर पा रहा है और अमित सम्पदा के भण्डारा से युक्त विशाल दश यथाचित प्रगति नहा कर पा रहा ह। हमार चरित्र क ह्रास का भी यह अन्य कारणा म से एक कारण है। आज दश की 99% प्रतिशत जनता समय की पाब दी का महत्व नही दती है। आज का काम कल पर छाड दत है इस प्रकार काम का बाभा बढ़ता ही जाता है जा अन्त म परशानी व चिडचिडेपन का कारण हाता ह। कहा भी ह "काल कर सा आज कर आज कर सो अब पल म प्रलय हायगी बहुरि करगा कब। अन्तराष्ट्रीय स्तर म भी हमारी स्थिति अच्छी नहीं है। यह ता सभी जानत है कि तराकी दौड जमनास्टिक आदि अनक खेला म जीत हार का परिणाम मिनटा से ही नहीं, सकिण्डा से भी हाता है। हमार खिलाडी समय से पीछ रह गए इसलिए हार गए। स्कूला म भी मजबूर प्रतियागिताएँ आयाजित हाती हैं, प्रतियागिता के दिन भी खिलाडी समय पर नहीं पहुँचत, इसमे हार हा जाती है।

जिन विद्यालयों में समय पर काम नहीं होता जिन विद्यार्थियों व अध्यापकों को विलम्ब से पहुँचने की आदत होती है, वे सभी क्षेत्रों में पिछड़ जाते हैं। ऐसे विद्यालय भी उन्नति नहीं कर पाते तथा इन विद्यालयों में निकले हुए विद्यार्थी भविष्य में भी जीवन की दौड़ में पिछड़ जाते हैं।

हमारे देश में भी राष्ट्रीय नेता ऐसे हुए हैं जिन्होंने सदैव समय का पालन किया है जैसे महात्मा गांधी, पंडित जवाहर लाल नेहरू, सुभाष चन्द्र बोस, डा राजेन्द्र प्रसाद आदि। हम क्यों न उनका अनुसरण करें जो समय पर काम करते हैं और आगे बढ़ते हैं। जिन्होंने समय के महत्व को समझा है और समय के साथ ही नहीं अपितु उससे भी आगे चले हैं।

विद्यालयों में प्रत्येक काम को समय के अनुसार चलाना चाहिए। यह वे शिक्षा के क्षेत्र हैं जहाँ पर देश के नागरिकों का निर्माण हो रहा है। यदि उनमें विद्यार्थी जीवन से ही समय की पाबन्दी की आदत डाल दी जायगी तो वे जीवन में बहुत आगे जा सकते हैं। भविष्य में आपका कार्यक्षेत्र जो भी हो उसमें समय की पाबन्दी के कारण आप अपने क्षेत्र के शिखर तक पहुँच सकते हैं और दूसरे के लिये उदाहरण बन सकते हैं, इस प्रकार आप अपने लिए ही नहीं राष्ट्र के लिये भी महत्वपूर्ण कार्य कर सकते हैं। सामाजिक समाज को भी सही दिशा दे सकते है। इस युग में जहाँ पर अधिकांश भारतीयों में समय की पाबन्दी का कोई मूल्य नहीं है बड़े आराम से अपने सारे काम करते हैं। ठीक है सब हो जायगा कि मनोवृत्ति को हमने पाल रखा है। काम कब होना चाहिए इसकी कोई परवाह नहीं है। काम जल्दी से हो या देर से हो कोई फर्क नहीं पड़ता है। इस धारणा से दूषित मनोवृत्ति के कारण हमारा दैनिक राष्ट्रीय जीवन विषमय होता चला जा रहा है जिससे जीवन में ही नहीं राष्ट्रीय जीवन में भी हम निराशा प्रतियोगिताओं में निराशा का मुँह देखना पड़ता है। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में तो हमारा मस्तक लज्जा से झुक जाता है जब हम प्रत्येक क्षेत्र में अन्य राष्ट्रों के मुकाबले में अपने को पिछड़ा हुआ पाते हैं। अतः आज से ही हम निश्चय करें कि हम अपना हर काम ठीक समय पर करेंगे।

आचरण की अन्य विशेषताएँ

बात करने का ढंग

भगवान ने हमें दो आँखें दी हैं दो कान दिए हैं और एक जीभ दी है। इसलिए हम जितना देखें और सुनें उससे आधा बोलें। बोलने से ज्यादा महत्वपूर्ण देखना और सुनना है। बच्चा भी पहले देखता, फिर सुनता और बोलना बाद में सीखता है। देखने और सुनने से हम अनुभव प्राप्त होता है हमें कहने के लिये कुछ मिलता है।

किसी जगह, समाज और क्षेत्र का भी बोलने पर प्रभाव पड़ता है। दिल्ली वाला अंदाज कुछ और है, पंजाब का अंदाज निराला है, हरियाणा का अपना ढंग है और उत्तर प्रदेश में लखनऊ का अंदाज खास है। तमिलनाडु, गुजरात, बंगाल आदि का अन्दाज भी निराला ही है। बातचीत के ढंग से ही आदमी के क्षेत्र आदि का पता लगता है।



डॉ० राजेन्द्र प्रसाद बात कम और काम अधिक करते थे।

आज जमाना बदल गया है। उसके साथ सारे तौर-तरीके बदल गए हैं। बातचीत का भी तरीका उसके साथ ही बदल गया है। आज के युग में नेता और खास तौर से भारत में लोग सारे दिन बातें करते हैं और काम कम करते हैं, जबकि काम अधिक और बातें कम हों। बातचीत का अर्थ भी होता है। बातचीत के द्वारा एक दूसरे को जाना जाता है। बातचीत से किसी के स्वभाव एवं विचारों का पता चलता है। बातचीत से ही किसी पर अपनी छाप छोड़ी जा सकती है। साक्षात्कार (Interview) में भी तो बातचीत से ही अभ्यार्थी की योग्यता का अन्दाज लगाया

जाता है। असली बातचीत वह होती है जिसमें व्यक्ति खुलता है उसका असली रूप सामने आता है। यह बात अलग है कि माहिर लोग बातचीत में अपना असली रूप प्रकट नहीं होने देते।

जब दो व्यक्ति बातचीत के समय अपनी अपनी कहते हैं दूसरे की सुनते ही नहीं। एक साथ दोनों बोलते हैं या एक दूसरे की बात को पूरा सुने बिना ही काटते जाते हैं। यह बहस हो सकती है बात नहीं। अच्छी बातचीत वह होती है कि एक कहे और दूसरा सुने।

कई लोग दूसरे को काम नहीं करने देते और अपना काम भी नहीं करते। दूसरे प्रकार के लोग अपना काम करते रहते हैं और दूसरे की नहीं सुनते। यह दोनों ही स्थिति अच्छी नहीं है। सबसे पहला अपना काम है उसके बाद बातचीत। बातचीत संक्षिप्त हो दोनों के अनुकूल हो अर्थ पूर्ण हो और मनोरंजक भी। व्यवसाय से सम्बन्धित बातचीत संक्षिप्त हो बिलकुल उतनी ही जितनी जरूरत हो। बातचीत में संतुलन रखना अत्यन्त आवश्यक है।

कुछ लोग बड़े बातूनी होते हैं। वे बातों के चक्कर में अपना जरूरी काम भी छोड़ देते हैं या बहुत कम बोलते हैं। यदि पति पत्नी में दोनों विरोधी स्वभाव मिलें तो बस समझिए कि बड़ी मुसीबत है। पति यदि कम बोलता है और स्त्री अधिक बोलती है तो पति तो कहेगा तुम बहुत बोलती हो और स्त्री कहेगी तुम अनबोले हो, इस प्रकार जीवन बड़ा दूभर हो जाता है। ऐसी जगह संतुलन बहुत जरूरी है दोनों एक दूसरे के अनुसार थोड़ा थोड़ा बदलें तो संघर्ष टल सकता है। वैसे तो बोलने में शक्ति होती है पर मौन में उससे भी अधिक शक्ति होती है। परन्तु जब दूसरे लोग बातचीत कर रहे हों और आप चुप्पी साधकर बैठ जाएं तो लोग आपको मूर्ख समझ लेंगे अतः बातचीत में भाग लेकर अपना प्रभाव जमाना चाहिए।

कई लोगों की आदत होती है कि वे हर बात में 'मैं' का राग अपनाते हैं। "मैंने यह किया" मैंने वह कहा, की भरमार बात बात पर रहती है। अपनी तारीफ के पुल बाँधने के लिए लोग दूसरों की बिल्कुल परवाह नहीं करते। वे खुद को बढ़ा चढ़ा कर दिखाते हैं और दूसरे को नीचे गिराते हैं। ऐसी बातचीत न ज्ञानवर्धक होती है और न मनोरंजक ही। सुनने वाला ऊब जाता है। कई बार लोग अपनी बात पर अड़ जाते हैं और अपनी ही बात को बार बार दुहराते हैं। भले ही वह बात गलत हो। हर वक्त हर बात में अपनी श्रेष्ठता अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने की कोशिश करते हैं। ऐसी बात कभी स्वीकार नहीं होती। इसलिए हम अपनी बात पर न अड़ें। अगर कोई हमारी बात नहीं मानता तो न सही हम उस पर जबरदस्ती नहीं थोप सकते।

बातचीत के बीच यह नहीं कहा जा सकता कि आप मेरी बात नहीं समझे। इससे तो यह कहना अच्छा रहेगा कि "शायद मैं अपनी बात को ठीक तरह से नहीं कह पाया"। बातचीत में दूसरा पक्ष अप्रसन्न न हो और इसमें लोक व्यवहार का ध्यान रहे, यह सही दृष्टिकोण है। जो लोग ऐसा नहीं करते वे नुकसान उठाते हैं। कुछ लोग ऐसे हैं जो हर किसी के सामने अपना रोना रोते रहते हैं। मुझे यह बीमारी लग गई, पैसा बहुत खर्च हुआ कोई फायदा नहीं। अपना तो भाग्य ही खोटा है। ऐसी निराशाजनक बात से किसी का क्या लेना देना। यह कभी-कभी तो चल सकता है पर ऐसी बात से अक्सर बचना चाहिए।

कुछ लोग ऐसे होते हैं जो उपदेशक बन जाते हैं। ऐसा करना चाहिए, वैसा करना चाहिए। सलाह तब ही देनी चाहिए जब मांगी जाए। सलाह देने के कारण ही हमारे यहां अच्छी बात का अभाव है।

हमारी बातचीत मुर्दा न हो बल्कि जीवित हो। उससे उत्साह हो स्फूर्ति हो उमंग हो, नीरस बातचीत किसी को पसन्द नहीं है। हमारे जीवन में बातचीत का बड़ा महत्व है पर वही सब कुछ नहीं है, वह तो साधन है मनुष्य को मनुष्य के साथ जोड़ने वाला पुल है। असली तत्व कर्म है जो हमें लक्ष्य तक ले जाता है। हमें जीवन में कुछ करें और फिर कहें तो उसका प्रभाव पड़ता है। अन्यथा कार्य के बिना बातचीत बेमानी है।

प्रशंसा करें

एक प्याले में आधा दूध भरा हुआ है। किसी ने पूछा कि इसमें कितना दूध भरा है। एक ने कहा कि आधा खाली है दूसरे ने कहा कि आधा भरा हुआ है। एक का कहना नकारात्मक है तो दूसरे का सकारात्मक लेकिन सकारात्मक दृष्टिकोण श्रेयस्कर है कानों को भाता है। क्या न हम अपना दृष्टिकोण स्वस्थ बनाएं। आपके घर में श्रीमतीजी ने परिश्रम व रुचि के साथ साग बनाया है, आपको अच्छा



नेताजी सुभाषचन्द्र बोस की कथनी और करनी में अन्तर नहीं था।

लगता है। परन्तु आप प्रशंसा नहीं कर रहे हैं क्योंकि आपको उनके काम में मीन-मेख निकालने की आदत पड़ गई है। यदि आप घटिया चीज की बुराई कर सकते हैं तो क्यों न अच्छी चीज की प्रशंसा करें। वैसे जो चीज मुफ्त मिलती है उसका महत्व घट जाता है इसीलिए हम उचित चीज का सम्मान नहीं कर पाते हैं। कुछ लोग इसके प्रति उपेक्षा करते हैं और कुछ लोग तिरस्कार करते हैं। यदि कोई व्यक्ति किसी की सीधी प्रशंसा करता है झट से दूसरे लोग उसे खुशामदी, दब्बू, खूब मक्खन लगाता है आदि शब्दों का प्रयोग करते हैं। यदि सत्य प्रशंसा की जावे तो यह खुशामद कभी ?

प्रशंसा और खुशामद में बड़ा फर्क है पर अक्सर लोग प्रशंसा को ही खुशामद समझते हैं। खुशामद के पीछे स्वार्थ छिपा रहता है उसके पीछे अपना काम बनाना होता है। खुशामद करके दूसरों को उल्लू बनाया जा सकता है। उसे जबरदस्ती गुण सम्पन्न बना दिया जाता है। प्रशंसा का स्तर हल्का नहीं होता, न ही होना चाहिए जब कि खुशामद का स्तर हल्का होता है। प्रशंसा से आप अपरिचित को परिचित बना सकते हैं परिचित को अधिक नजदीक ला सकते हैं। अगर प्रशंसा न करें तो हमारा काम नहीं चल सकता।

अक्सर हम लोग दूसरे की आलोचना करने के लिये तुले बैठे रहते हैं लेकिन प्रशंसा करते हुए हिचकिचाते रहते हैं। हर काम में हर व्यक्ति में नुक्स निकालते हैं दोष ढूंढते रहते हैं फिर जम कर बुराई करते हैं। हम अच्छाई देखें और उस अंश की प्रशंसा करें। बच्चों की यदि प्रशंसा की जावे तो वह बिगड़ता नहीं प्रशंसा से तो कई गुना उत्साह बढ़ जाता है।

एक अफसर ने अपने मातहत से पूछा 'कल तुमने सारे दिन क्या किया ?" मातहत ने जो कुछ किया था बता दिया। परन्तु अफसर तो कहता रहा कि तुमने वह क्यों नहीं किया। उसकी नजर हमेशा उस काम पर रहती है जो नहीं किया। वास्तव में अफसर को कभी तो उसकी प्रशंसा करनी चाहिए आखिर प्रशंसा में इतनी कंजूसी क्यों ? सुखी दाम्पत्य जीवन का रहस्य क्या है एक दूसरे की प्रशंसा। उन दो मित्रों की मित्रता ज्यादा दिन चल सकती है जो एक दूसरे के गुणों की प्रशंसा करते हैं। अफसर मातहत के बीच बढ़िया सम्बन्धों का रहस्य है एक दूसरे के अवगुणों को न देखकर गुणों को देखें और उनकी प्रशंसा करें, लेकिन अच्छे काम और सद्व्यवहार का सूत्र है ही नहीं।

आज हमारे घरों में भी सद्व्यवहार का सूत्र खो गया है। कोई एक दूसरे को समझता नहीं एक दूसरे को बर्दाश्त नहीं करता, अपनी खीझ उतारता रहता है। मिल जुलकर रहने का सूत्र खो गया है, इसीलिए हम एक दूसरे की

प्रशंसा नहीं करते बल्कि दोष ढूँढते रहते हैं। किसी ने कोई काम खराब कर दिया तो भांड देंगे अगर उसने शाबाशी का काम किया है तो हम चुप लगा जाएँगे।

दूसरे से प्रशंसा पाना भी एक कला है। जिसे बहुत लोग नहीं जानते। दूसरे से प्रशंसा पाकर हम गुमसुम हो जाते हैं, जबकि हमें प्रसन्नता एवं विनम्रता के साथ उसका आभार स्वीकार करना चाहिए उसे धन्यवाद देना चाहिए। जब कोई व्यक्ति हमारी प्रशंसा करे तो हम यह समझते हैं कि हमारी हैसियत बहुत ऊँची है और वह व्यक्ति हमसे छोटा है, पर यह गलत है हमें समझना चाहिए कि वह पारखी है। कुछ लोग गुट बनाकर समझौता करते हैं कि एक दूसरे की प्रशंसा करते रहेंगे। करते भी हैं चाहे कितनी ही खुरापात करें। यह अस्वस्थ दृष्टिकोण है जो आत्मघाती व राष्ट्रघाती है। इससे अवसरवादी फायदा उठा लेते हैं योग्य व सक्षम व्यक्ति वहीं रह जाते हैं।

हम महान व्यक्तियों की प्रशंसा करते हैं पर मामूली व्यक्ति कितना ही अच्छा काम करे उसकी प्रशंसा नहीं करते। हम कवि कलाकारों, नेताओं के भाषणों की प्रशंसा करते हैं पर हमारा धोबी, अखबार वाला, जमादार, चौकीदार, नौकर, चपरासी आदि कितना ही अच्छा काम करें उसकी प्रशंसा नहीं करते। हम हल्के-फुल्के कार्यों की प्रशंसा करते हैं पर उन कार्यों की प्रशंसा नहीं करते जिन्हें करने में अधिक परिश्रम करना पड़ता है। हम कढ़ाई बुनाई व पकवान की प्रशंसा करेंगे लेकिन कमरे में रखे सोफे फर्नीचर आदि की सफाई और उसकी सजावट की प्रशंसा नहीं करते। स्कूलों में अध्यापक दो चार बच्चों की प्रशंसा करते हैं, दो चार की निंदा करते हैं बाकी बच्चे उपेक्षित रहते हैं। प्रशंसा पाने वालों का परिणाम अच्छा रहता है। जिनकी निंदा की गई व अध्यापक की चुनौती स्वीकार करके अधिक परिश्रम करते हैं वह पास होते हैं। उपेक्षित विद्यार्थी कहीं के नहीं रहते। वे फेल होते हैं या तीसरी श्रेणी में पास होते हैं। प्रशंसा से किसी मौके पर प्रशंसा मिलने पर उनमें चमत्कारी शक्ति प्रकट हो जाती है। यह किसी के अंदर छिपे हुए गुण को प्रकट कर देती है।

कई माएँ दूसरे के काम में मीनमेख निकालती रहती हैं और अपना काम ही अच्छा समझती हैं। इसका परिणाम होता है ऐसी माओं का काम कोई नहीं करता। कुछ लोग मीठी मार मारते हैं वे लोग मुस्कराते रहेंगे आपकी प्रशंसा करते रहेंगे और अवसर मिलते ही आपकी हानि कर देंगे ऐसे लोगों से सावधान रहना चाहिए।

प्रशंसा से व्यक्ति का सुधार होता है उसके सम्बन्धों का विस्तार होता है। कई दफा जब हमारा मन बहुत भारी होता है इस बीच कोई हमारी प्रशंसा कर दे तो मन का बोझ उतर जाता है और हम हल्कापन महसूस करते हैं। दूसरों को

प्रोत्साहन देने के लिए हम उनकी प्रशंसा करनी चाहिए। इस बात को सभी जानते हैं पर पालन नहीं करते। इसका एक कारण यह भी हो सकता है कि प्रशंसा करने में उनको थोड़ी झिझक है। झिझक छोड़िए और प्रशंसा करने की आदत डालिए। हम दूसरों की प्रशंसा करते हैं, इससे उनकी खुशी तो बढती ही है हमारी खुशी भी बढ़ती है। प्रशंसा करना बुरी बात नहीं है इससे आप अधिक से अधिक लोकप्रिय हो सकते हैं, इसलिए गुणों आदि पर आधारित प्रशंसा को अपनाइये। यह भी हमारे जीवन का एक आवश्यक तत्व है

समयानुसार विचार कर बोलिए

कई दफा समय के अनुसार बोलने पर दूसरे पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। जबान एक पुल है जिस पर होकर विचार दिमाग में प्रवेश करता है। जब कुरुक्षेत्र में अर्जुन अपना कर्तव्य भूल कर शस्त्र त्याग कर, बैठ गया तो श्री कृष्ण ने प्रारम्भ में ही ज्ञान की बातें न कहकर मन की दुर्बलता का त्याग करते हुए देह की नश्वरता की ओर उसका ध्यान खींचा और कहा तुम मारने से डरते हो।' किन्तु कौन किसे मारता है और कौन मरता है? "आत्मा तो अमर है।' अर्जुन को इस पर अपने कर्त्तव्य का भान हुआ और वह युद्ध के लिए तैयार होगया।

"वाक् वदामि मधुमत" । शहद के समान मीठे वाक्य बोलना चाहिए। परन्तु मीठे वाक्य ही उपयुक्त नहीं है उपयुक्त के साथ उपयुक्त अवसर भी चाहिए। दुर्योधन को बहुत समझाया पर उस पर कृष्ण की बातों का कोई असर नहीं पडा और महाभारत का युद्ध नहीं टला। उपयुक्त शब्दों के साथ यह उपयुक्त अवसर नहीं था।

अवसर की बात कहने के लिए मनोविज्ञान की भी आवश्यकता है। कैकेयी बहुत समझदार थी। इतने पर भी मंथरा दासी ने वाक्य चातुर्य से उस पर ऐसा प्रभाव डाला कि रामचन्द्र को वनवास जाना पड़ा। बोली से ही बुद्धिमान और बेवकूफ का अंतर ज्ञात होता है। शिवाजी ने कल्याण के नवाब पर उसके अत्याचारों के कारण आक्रमण कर दिया। नवाब युद्ध में मारा गया। नवाब की बेगम को पकड़ कर प्रहरियों ने शिवाजी के सामने प्रस्तुत किया उसे देखते ही शिवाजी ने कहा "मेरी माँ जीजा बाई आपकी तरह सुन्दर होती। तो मैं भी सुन्दर होता" इससे ही शिवाजी के चरित्र का भान होता है।

चतुर वक्ता आवेश को सदा काबू में रखता है। एक बार एक नव युवक बरिस्टर ने जोरदार बहस की परन्तु न्यायाधीश ने उसके विरुद्ध फैसला दिया। उसके मुंह से निकल गया कैसे आश्चर्य की बात है कि अदालत ऐसे फैसले देती है।

न्यायाधीश ने तुरन्त उस पर मानहानि का दावा कर दिया। उसकी पैरवी करने लार्डरीडिंग आये जो बाद में हिन्दुस्तान के वायसराय हुए। उन्होंने कहा, न्यायाधीश महोदय यह बैरिस्टर अभी नौजवान है, यह आपके किसी भी फैसले पर आश्चर्य प्रगट नहीं करेगा। सब उपस्थित लोग हँस पड़े। न्यायाधीश झेंपकर रह गया।

कई बार कही हुई बात बड़ी अनिष्टकारी होती है द्रौपदी के ताने ने महाभारत युद्ध का बीज बोया और सूपणखा के ताने ने रावण की लंका ढाई।

विद्वान अंग्रेज लेखक जेम्स ग्राम्म लिखते हैं। शब्द मोहर हैं जिससे बुद्धिमान मेल मिलते हैं।" द्वितीय महायुद्ध में अंग्रेजों की हार हो रही थी। हिटलर का यूरोप पर एक छत्र राज्य होने की सम्भावना थी। ऐसे समय लार्ड लादियन को अमरीका भेजा गया और उन्होंने राष्ट्रपति रुजवेल्ट पर ऐसा प्रभाव डाला कि अमरीका से जोरों से मदद मिलने लगी।

झूठी बातों से काम नहीं बनता। 'सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात' ही काम देता है। मशहूर फ्रांसीसी राजदूत फ्रान्सवा कैलियर ने लिखा है कि अच्छा राजदूत न तो झूठा विश्वास दिलाकर और ऐसी न प्रतिज्ञाओं से, जो कभी पूरी न हो सकें, काम बनाने की कोशिश करता है। यह मानना कि राजदूत ठगाई के बिना काम पूरा नहीं कर सकता, एक भारी भूल है।

कई बार हाजिर जवाबी से भी काम बन जाता है। एक बार एक हलवाई ने रास्ते चलते वकील को पकड़ लिया और पूछा कि यदि कोई कुत्ता चुरा कर मिठाई खा जाता है तो उस पर क्या हो सकता है। वकील ने उत्तर दिया आप उससे हर्जाना वसूल कर सकते हैं। हलवाई ने कहा कि आपका ही कुत्ता है जिसने मिठाई खाई है उसके सात रुपए चुकाइये। वकील साहब ने जवाब दिया 'मेरी सलाह की फीस 15 रुपए है, आप उसमें से 7 रुपये काटकर बाकी रुपए मुझे दे दीजिए।" हलवाई देखता ही रह गया।

महारानी विक्टोरिया अपने प्रधान मन्त्री ग्लैडस्टन से प्रसन्न नहीं थी। एक दिन किसी बात पर मतभेद होगया और महारानी ने कहा कि "जानते हो आप एक सम्राज्ञी से बात कर रहे हो।' ग्लैडस्टन ने तुरन्त उत्तर दिया, जो 'महारानीजी आपके जनता बात कर रही है।" साम्राज्ञी को चुप हो जाना पड़ा। यह था समय पर कही गई उपयुक्त बात का प्रभाव।

विवेचन और अनुभव से वाणी में शक्ति आती है। सदा से ही शब्द की शक्ति बराबर रही है। कवि की ये सूक्तियां सदा सच्ची रहेंगी।

नीकी पै फीकी लगै, बिन अवसर की बात।
फीकी पै नीकी लगै, कहिये समय विचारी॥

जीवन मे सकारात्मक दृष्टिकोण रखें व दोहरे मापदण्ड से बचें

आज हम सोचते हैं कुछ और करते कुछ हैं अगर आप ऐसा करते हैं तो इससे आपका व्यक्तित्व गिर जाता है। आप झूठ बोलने के लिये भी मजबूर होते हैं। अगर आप वह काम नही करते जिसमे आपका विश्वास है तो इसका मतलब है कि आप आत्म संघर्ष मे लगे रहते हैं जिससे शक्ति और समय का अपव्यय होता है। इसलिए जो आप सोचते हैं वैसा ही करें तो आपके विचारो में स्पष्टता आयेगी, जिससे उद्देश्यो मे सफलता मिलना निश्चित है।

हम दूसरो पर अविश्वास न करें और दूसरो का विश्वास पाने की कोशिश करें। हम दूसरो को धोखा न दें और दूसरो के धोखे के जाल में न आएँ। कई बार ऐसा होता है कि हम एक दो जगह धोखा खा जाते हैं तो सभी पर अविश्वास करने का नियम बना लेते हैं। यह ठीक नही है, सब बुरे नही हो सकते हैं।

यह देखने मे आता है कि लोग अपना ज्यादा समय दूसरे के बारे मे सोचने, चिन्ता करने में बिताते हैं उसने यह काम करना था यह नही करना चाहिये था। इस प्रकार दूसरो के दोष देखने मे समय नष्ट हो जाता है। एक कथानक है कि एक महात्मा ने एक पुरुष को जो अपने को सुधारना चाहता था उसको दो थैले दिए। एक में उसकी सर्वाधिक बुराइयाँ थी तथा दूसरे में अन्य की बुराइयाँ भरी हुई थी। महात्मा ने कहा कि अपनी बुराइयों का थैला सामने लटका कर रखना और अपने दोषों को देखते रहना। अन्य के दोषों के थैले को पीछे लटकाना और उनको नही देखना। परन्तु उसने भूल से अपनी कमियों के थैले को पीछे लटका लिया और दूसरे की भूलों के थैले को आगे। परिणामतः उसने दूसरे के पाप देखने में ही समय बर्बाद कर दिया और अपनी गलतियों को देखने का उसे समय ही नही मिला। इसलिए हम अपनी गलतियों को क्यों न देखें खुद को क्यों न सुधारें। अधिक से अधिक हम यह कर सकते है कि अपने अनुभव के आधार पर उन्हें नेक सलाह दें, उनकी सहायता करें पर केवल दुखी होने से तो बात नहीं बन सकती।

हमारा सोचने का दृष्टिकोण निश्चयात्मक हो। यदि आपका मन निषेधात्मक वृत्ति की ओर झुक रहा है और आप चाहते हैं कि आप में निर्माणकारी शक्ति का विकास हो तो इसका अच्छा उपाय यह ही है कि आप अपने मन को इस दुष्प्रवृत्ति से हटाकर हर वस्तु और निश्चयात्मक दृष्टि से देखने का अभ्यास कीजिए। जीवन में निश्चयात्मक दृष्टिकोण से ही प्रत्येक वस्तु में अच्छाई देखने की भावना उत्पन्न होती है और यह ही जीवन मे सफलता का सूचक है।

कई बार व्यक्ति को अपने ढंग से देखते है और उस पर अपने अनुसार रंग पोत देते है। कोई हमारा काम कर देता है तो वह अच्छा है वहीं दूसरा का काम

नहीं करता तो दूसरा के लिये बुरा आदमी है। यह अच्छे बुरे का भेद अपने हित या स्वार्थ को सामने रख कर किया जाता है। यह देखना आवश्यक है कि उसकी कितनी मजबूरियाँ है जो लोग स्वार्थी, कठोर और कंजूस कह जाते है वे भी कुछ न कुछ ऐसे काम करते देखे जाते हैं जिनमे उनका दयाभाव और विचार शक्ति प्रकट होती है।

अपने विचारो को दूसरे पर न थोपें—हम व्यक्ति को ही गलत नहीं समझ लेते, बल्कि यह भी सोच लेते हैं कि हम जो सोचते हैं वह सत्य है। सत्य भी सापेक्ष है। जिस तरह हम सोचते हैं दूसरे लोग भी उसी तरह सोचें वे दूसरी तरह भी सोच सकते हैं। हम जियो और जीने दो के सिद्धांत को विचारो म भी अपनाना चाहिए। लोग अपने विचारो को भी दूसरे पर जबरदस्ती थोपते है। वे समझते है बस जो हम सोचते हैं कहते हैं वह ही अंतिम है। मैं अपनी बात कहता हूँ आप सुनलें। आप अपनी बात कह दीजिए मैं सुन लूँगा। यदि मुझे अच्छी लगी तो ग्रहण कर लूँगा यदि ग्रहण नहीं कर सका तो आप बुरा मत मानिए न अपनी बात का दबाव डालिए न हमारी बात का निरस्कार करिए।

एक दूसरे के साथ सहयोग आवश्यक है पर यह स्वार्थ की भावना से नहीं होना चाहिये। "नेकी कर और कुए मे डाल"। यदि हम इस हद तक परोपकारी न बने तो इस हद तक स्वार्थी कैसे बन सकते हैं जो हर समय सोचें कि हमने दूसरा के लिए क्या किया परन्तु इसके मुकाबले दूसरे ने आपके लिए कुछ नहीं किया। आपसे बन पड़ा आपने किया और दूसरे से बन पड़े वे आपके लिए कर दें परन्तु इस पर इतना गर्व क्यों।

सघर्ष कीजिए परोपकारी बनिए—जीवन को हम प्रारम्भ में ही ढालने का प्रयास करना चाहिये। प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन म अपने ध्येय म अवश्य सफल हो सकता है। परिस्थितियो और कठिनाईयो को दोष देना निर्बलता का दूसरा नाम है। यह ससार गुण दोष मय है इसमे पाप पुण्य दिन रात, परिहास और रुदन सब कुछ है। इस लहलाते सागर मे रत्न जवाहरात और मोती भी है और मनुष्य को साबित निगल जाने वाले मगर और घड़ियाल भी। जीवन म दिन प्रति दिन जोखम दुख, रहस्य, सघर्ष, परेशानियां है तो दूसरी ओर मधुर मिलन, हास परिहास, प्रेमालाप, सौन्दर्य, उत्साह, मधुर गीत भी हैं। ऐसे ससार म हमारा क्या कर्त्तव्य है। क्या हम मुँह छिपा कर भाग जावें या जीवन से पलायन कर जगल म रहने लग जावें। जीवन म भागने से हम अगर रुदन व विलाप, जोखम, दुख, सघर्ष, परेशानियों से बचते हैं तो हास विलास से भी वंचित रहते हैं। सघर्ष से यदि हम भागते है तो ससार म बुराई की शक्तियाँ और प्रबल हो कर हमारे सामने आयेंगी और ... आराम से न सोने देगी। इसलिए हमारा कर्त्तव्य है कि हम जीवन को परिस्थि... के हाथ म न सौंप दें। परन्तु परिस्थितियो से लडकर एक तैराक की भाँति ... पर विजय पाते हुए अपने को कठिनाईयो के पार ले जावें।

जीवन जिस रूप में हमारे सामने आता है उसे उसी रूप में स्वीकार कर इसका आनन्द लें। यदि दुख आता है तो उसे स्वीकार करें क्योंकि इसके पश्चात् सुख आवेगा। कवि ने ठीक ही कहा है—

दुख भी मानव की शक्ति है, तू क्यों दुख से घबराता है।
दुख आया है तो जावेगा, सुख आया है तो जावेगा।
दुख जावेगा तो सुख देकर, सुख जावेगा तो दुख देकर,
सुख देकर जाने वाले से रे मानव क्यों भय खाता है ?
सुख में व्यसन प्रमाद भरे, दुख में पुरुषार्थ चमकता है,
दुख की ज्वाला में पड़कर ही, कुन्दन सा तेज दमकता है।
सुख में सब भूल रहते हैं, दुख सब की याद दिलाता है,
सुख सान्ध्य का वह लाल क्षितिज जिसके पश्चात् अंधेरा है।
दुख प्रात का झुटपटा समय, जिसके पश्चात सवेरा है,
दुख का अभ्यासी मानव ही सुख का अधिकार जमाता है।
दुख के सम्मुख जो सिहर उठे, उनको न इतिहास जान सका,
जो दुख में कमठ धीर रहे, उनको ही जग पहचान सका।
दुख एक कसौटी है जिस पर, यह मानव परखा जाता है।

इस दुनियाँ में देखने और खोजने वाले के लिए पग पग पर सौन्दर्य सुषमा है। पक्षियों के कल कुंजन में, हिरनों की चपल चौकड़ी में, पक्षियों की ऊँची उड़ान में, मछलियों की गति में, सरिताओं के कलकल प्रवाह में काले बादलों की घुमड़ती भाप में, वाद्य यन्त्रों पर ताल पर थिरकने वाले नृत्य में, श्रमिक के परिश्रम में, साहसी लोगों की समुद्र यात्राओं शैल शिखरों की चढ़ाई, व नई नई खोजों में, यात्रियों के धार्मिक ऐतिहासिक, कला कृति बोध यात्राओं में, जहाँ देखो वहीं ही सौन्दर्य की झलक है। इस सौन्दर्य के जीवन सागर को छोड़कर घर की चारदीवारी में निष्क्रियता की सुख निद्रा में सोना कायरता नहीं वरन् मृत्यु ही है।

महाकवि शेक्सपीयर, मिल्टन ने, जहाँ भी किसी से कुछ सीखने को मिला उन्होंने सीखा। प्राचीन काल में दत्तात्रय ने चौबीस गुरु बनाए। पृथ्वी से उन्होंने धैर्य, क्षमा और परोपकार सीखा। पृथ्वी सब कुछ सहन करके भी प्रतिशोध की भावना नहीं रखती। सभी को कुछ न कुछ प्रदान ही करती है। वायु ने सिखाया जरुरत से ज्यादा संग्रह न करना वायु एक जगह से दूसरी जगह वस्तु पहुँचा देती है किन्तु अनचाही वस्तु उसमें टिकती नहीं, गिर पड़ती है। आकाश ने शिक्षा दी अलिप्त रहने की। बादल, धुआँ या आकाश के ऊपर पर्दे की तरह आच्छादित हो जाते हैं किन्तु आकाश को अपने में लिप्त नहीं करते। इसी तरह मधुमक्खी से सीखा दूसरों के निमित्त काम करना याने शहद एकत्रित करना। बच्चे से बच्चे से स्वच्छ निर्विकार हृदय रखना सीखा। हम भी प्रकृति से बहुत कुछ सीख सकते हैं।

जीवन में दुख और संघर्ष अधिक हैं किन्तु उसके साथ सुख और शान्ति का भी अभाव नहीं है। अस्पतालों की अपेक्षा होटलों की संख्या अधिक है। जेलों की अपेक्षा क्लबों और सिनेमाघरों की बहुतायत है और अब तो टेलीविजन ने मनोरंजन की सुविधाएँ घर में ही उपलब्ध करादी है। कडुवे व तीखे खाद्य पदार्थों के स्थान पर मीठे व पौष्टिक पदार्थ अधिक हैं। जैसे जैसे विज्ञान उन्नति करता जा रहा है वैसे वैसे खान पान, रहन सहन, मनोरंजन, वाहन, यातायात औषधियां व प्रत्येक स्तर पर सुविधाओं की भरमार है। इस संसार को जैसा हमने पाया है उस उससे अधिक सुखमय बनावें। इसके लिए परिश्रम और संयम की आवश्यकता है। हमें जीवन में सब को समझने की आवश्यकता है, अपना कर्त्तव्य निश्चित करने की आवश्यकता है। जिस मनुष्य को हम समझ लेते हैं वही मित्र बन जाता है और जिसको नहीं समझ पाते वही शत्रु बना रहता है। समझने के लिये हमें अपने अभिमान को तिलाजली देनी पडेगी। तब ही जीवन में सफलता प्राप्त होगी।

Words of Wisdom Lear & Act accordingly

Read	Selectively
Think	Constructively
Work	Efficiently
Talk	Briefly
Serve	Willingly
Act	Fearlessly
Risk	Cautiously
Judge	Charitably
Invest	Prudently
Argue	Tactfully
Dress	Smartly
Listen	Attentively
Pay	Promptly
Earn	Honestly
Save	Regularly
Spend	Intelligently
Speak	Gently
Behave	Courteously

शुद्धि-पत्र

प्रथम-भाग

पृष्ठ स	पंक्ति स	अशुद्ध	शुद्ध
2	2	समथ	सम्बन्ध
3	9	चरित्राणि	चारित्राणी
4	2	खाज	खोज
28	31	थकं	पृथक
32	1	आयोजन	निराकरण
46	7	कुपुत्री	सुपुत्री
47	3	भक्तासर	भक्तामर
47	16	विद्यार्थो	विद्यार्थियो
47	25	ब्रह्म	पर ब्रह्म
57	1	ध्यान दिए	ध्यान के उदाहरण दिए
62	31	Trial	Tribal
59	1	सतकम	सतकर्म
69	1	सीसा	शीशा
95	8	आयिका	आयिका
100	27 "	अधिनियम 1955 मे संशोधन द्वारा आयु 18 व 21 हो गई है।	
109	16	राधा कृष्न	राधाकृष्णन
114	7	सालव	बसाल
126	8	भारति	भारवी
126	14	भाज्य	त्याज्य
126	4	वन्यातमक	ध्वन्यात्मक
126	15	जीवे	जीवेत
126	15	कृत्या	कृत्वा
127	31	मोहन	मोह
128	8	द्वैयापन	द्वैपायन
137	30	मस्तिरक	मस्तिष्क
138	7	दूकरे	दूसरे
141	2	उचित है	उचित नही
141	27	सम्प्रेरण	सम्प्रेषण
160	17	बेमानी	बेईमानी
168	6	सहग	सहन
168	13	Lear	Learn